

श्री जिनशासन पुष्पमाला का ६ पुष्प

देव-रचना

कृत—

ला० हरजसराय जैन श्रीसवाल कमरु निपासी

देव-वाणी भाग दो

भाषा कर्ता

श्री श्री पैगचार्य प्रधानाचार्य आत्माचार्य अनुयोगाचार्य
शास्त्रार्थ केसरी सिद्धान्त दिवाकर वाल ब्रह्मचारी
पूज्यपाद श्रीसोहणलाल जित्सूरिद्वर के सुशिष्य
(श्री वर्द्धमान स्थानक वासी श्रमण सघीय)

मुनि ताराचन्द्रजी महाराज
पंजाबी

—प्रकाशक—

श्री वर्द्धमान स्थानक वासी शासन धर्म समिति

वि सं २०१०	मूल्य दोनों भागों	बीर निर्वाण सम्बत् २४५६ आचार्य श्री सोहणलाल जन्म १०४ वर्ष
चैत्र मास सन्	का दो रूपया	
१६५३ मार्च	टाक स्वर्ण प्रयक	
प्रथमावृत्ति १०००	है	

॥ श्री विमानीक देवों की रचना ॥

* श्री देव वाणी *



दोहा—कल्पोत् पत्ति देव गण, सहित विमानी इंद ।

दस ही निज परिवार युत, पूजे आय निनद ॥२१७॥

अर्थ—इस मृत लोक में से जो इन्मान जप तप दान शील करते हैं वह जीव मर के १२ कल्प देव लोक में जाते हैं उनके सुखों का बर्हान करते हैं, तो शुद्ध मन में तपस्या करे निर्यद वह उपजे शाय्या में देवी हो देवता हैं, संमुद सयुक्त विमानी देव अत्र सर्व दस ही आयो आपणे परिवार समेत तीर्थ कर देवों पास आवे और वंदना सेवा भक्ति स्तुति तन मन वचन से करै करते हैं ॥२१७॥

इस भूमि थी घन सख्य पोजन ऊच प्रप दस भूमि ही ।

पिउ कल्प लाख विमान बत्ती अरु अठाई छपि लही ॥

पण वर्ण मणि ऊच पण सप पोजने ऊपर धुजा ।

जिह देवते जस लेस घर सुख भोग भोगे पिन रूजा ॥२१८॥

अर्थ—इस सम भूमि से उ चें अर्नक्ष्यते चोना जायें तो प्रथम, और दूजा देव लोक आवे, सुधर्मा देवलोक और इशान देवलोक । सुधर्मा देवलोक मेरु पर्वत से दक्षिण की तरफ सुधर्मा इन्द्र का राग है, जिसके ३२ लाख विमान का मालिक है, और इशान देवलोक मेरु पर्वत से उत्तर की तरफ ईमान इन्द्र का राग है । जोरे २८ लाख विमान का मालिक है और दोनु इन्द्रों के पुत्र और हविर्पन हैं । ५ वण के जुहरात मणि हरे, पद्म, लाल, मोती, खानाना भूरपूर है । और पाच पांच सग घोचन की ऊ चारें उपर ध्वजा परफराती हैं । देव इन्द्र तेजु लेइया घाले रोग रहित सुख भोगते हैं ॥२१८॥

तिह अपर गहैया देवियाँ के हैं विमान दुर्ग पुरे ।
 पट चार लाख सुर में कल्पे प्रथम की विप में पूरे ॥
 इतरे ईशान वति रमे धित लघुरति विव धूर तणे ।
 तृतीये दशी सुरिये सपण दस चडत पल दस भणे ॥२१९॥

अर्थ—यहा देव लोक में देविया अपरिग्रहिया हैं विमान के १० लाख विमान हैं ६ लाख विमान सुधर्मा देवलोक में और ४ लाख विमान इशान देवलोक में अपरिग्रहया देवियों को (बिन्या) भी । कहते हैं, यह देवी स्त्र देवताओं के काम आती हैं और सब देव इनको भोग भोगते हैं । सुधर्मा देवलोक के देव, दूजा देवलोक के देव ३ पंचमें, देवलोक के देव ५ सातमे देवलोक के देव ७ नर में देवलोक ६ ग्यारमे देवलोक के देव ११ यह छैदेव लोक ६ लाख विमान वाली देवियों से काम भोगते हैं और इशान देवलोक वाले देव चौथे देव लोक वाले देव छठे देव लोक वाले देव, आठमे देवलोक

वाले देव, दशमें देवलोक वाले देव, १० बारमें देवलोक वाले देव । यह ४ देव भी ४ लाख विभाग वाली देवियों से काम भोगते हैं । प्रथम तुजे कल्प वाले देव कम से कम १ पल वाली देवी से तथा कुछ कम पल वाली से सुर सुर भोगते हैं । तीनों देवों के याने १० पल वाली से, ४ देवलोक १५ पल वाली से, पंचमें देवलोक के २० पल वाली, देवी से भोगते हैं । छठे देवलोक के देव २५ पल वाली से । सातवें देवलोक के देव, ३० पल वाली देवी से भोगते हैं । आठमें देवलोक के देव ३५ पल वाली देवी से भोगते हैं । नवमें देवलोक के ४० पल वाली देवी से भोगते हैं, भोग । दस देवलोक के ४५ पल वाली से देवी भोगते हैं । ११ में देवलोक के देव ५० पल वाली से भोगते हैं । १२में देवलोक के देव ५५ पल वाली से भोगते हैं । चिन देवियों की इतनी इतनी धिति होगी उन २ से काम भोगते हैं । वैश्व देव तो वाया के स्पर्श रस से भोगे, वैश्व वाया का योग चलने से, वैश्व वचन का योग चलने से, वैश्व मन का योग चलने से, और वैश्व दृष्टि के स्पर्श रस से भोगे ॥२१६॥

प्रथमे सुधर्मेः कल्प दीपत मुकट मृग चिहनी सुरा ।

यित पल जघन्य त्रिभुक्ति निभ की सुर मिधु थोडक दो घरा ।

त्रिधा स्वामी वती सप्त पल यित इतर पञ्च पचास लो ।

तिहृष्टक इन्द्र सुरिद्र सयुत पुन्य भोगे भति मलो ॥२२०॥

अर्थ—सुधर्मा देवलोक में प्रकाश करने वाली देवियों के मन्त्र पर मणि मुकट वाली प्रकाश देती है । और त्रिभुक्ति का चिह्न है सुरा, स्त्री पुन्य दोनों । त्रिभुक्ति का अर्थ है देवलोक की

उत्कृष्टि हो सागर की देवी की उत्कृष्टी ७ पयोम की और अपरि-
ग्रहिया की उत्कृष्टी ५० पयोम की हैं, यहा शकेन्द्र महाराज विराज
मान हैं, और आनन्द से पूर्या के फल श्रद्धि भोगन में ममने हैं
जैसा करे वैसा भोगे ॥२२०॥

शुभ हम क्रांत शरीर सुन्दर मुकुट हुण्डल जग मगै ।

उर हार भूपण सर्व श्र मे वस्त्र उजल छवि लमै ॥

वाहिन सु ऐरा पति करी सुर चन आयुद्ध धारणै ।

त्रिन राज मक सेव करवा धर्म काज सगारणै ॥२२१॥

अथ — शकेन्द्र महाराज श्रेष्ठ कचन वर अति सुन्दर अषिक
प्राति शरीर की छवि है और महा सुन्दर अङ्गोपाग सोभायमान हैं,
मथे पर अनुप रूत मय मुकट कानों में कुण्डल और कपोल ऊपर
सोभा देते हैं । उद्योत का जग मगट करते हैं और धाती ऊपर रत्नों
के मोतियों के हार सोभा देते हैं पुष्पों की मालाओं से गलै में मोभा
देती हैं ऐमा ही सब अङ्ग उपङ्ग भूषण कर म सोभते हैं और अति
श्वेत वस्त्र कोमल सुगन्धि वाने पहनते हैं । अति सुन्दर तिनकी छवि
है और सब हस्तिशों में शिरोमणी उग्रवर्ण चतुरङ्गति वस्त्र भूषण
से परिमंडित ऐरापति नामक हाथी है जेव कुजर रूप सुन्दर वाहन
असगरि दे अति मोभायमान तिसमें महाबल है, अति तेन प्रचरह
प्रकाशक प्रताप वत रिपुमान मन् न सहस्र स्थुलिंग प्रकाशी वम आयुध
देव हस्त धारक शकेन्द्र महाराज त्रिनेत्र देव का भक्त धर्म के काम
कार्य में अति हर्ष से समुत्स होकर करने वाले, विश्वाम के साथ
हरेक कार्य में इस करके दुसरा नाम सुधर्मा इन्द्र है ॥२२१॥

तेतीस सुर गुरु मित्र निह चौरासी सहस्र समान की ।
 वसु अगू महिषी परिपदा त्रय सात आण का आनकी ॥
 त्रय लाख छत्ती सहस्र सुर तुन रक्ष जाके जानीए ।
 चतुलोक पाल सुभोग भुजत शक्र इन्द्र बखानीए ॥२२२॥

अर्थ — शक्र के ३३ महामंत्री गुरु देव हैं, और ८४०००
 समानि देव हैं बरानर बैठने बाने हैं, = पटरानिया महादेवी ७-८ पल
 की स्थिति और आप अपने परिवार महित, श्रेष्ठ अग्र मेहिषी देवी
 हैं । और तीन प्रकार के परिपदा हैं । अन्दर की, मध्य की, बाहिर
 की, और ७ अणिजा, घोड़े, हाथी, रथ बेल, पयदल, नट, गधर्व, और
 ३ तीन लाख ३६ हजार देव हैं आत्म रक्ष शक्रेन्द्र महाराज के
 और ४ लोकपाल देव हैं, नाम सोमदेव, यमदेव वरुणदेव और वैश-
 मनदेव यह सब देव इन्द्र महाराज के हुकम से हैं, ऐसे सब परिवार
 के साथ शक्रेन्द्र महाराज आपनेपुत्र के सुभ सुख भोगते हैं ॥२२२॥

जिह लग लहे गति हेमन्त अरु इर्णय के जुग लीया ।

जिह लग विराधिक साधुत जिह लग भवे कद्रपिया ॥

गति माधु भावरु की कही जघन्य जिह सब थोरु हैं ।

जिह लग लहे जिह जिया गर्भ थी गति सो सुधर्मा लोक दे ॥२२३॥

अर्थ — पहिला कल्प सुधर्मा देव लोक तक है, क्योंकि हेमन्त
 इर्णय क्षेत्र के जुगलिये १ पल की स्थिति पाने वाले भाग पूरा करके
 पहिला देवलोक में जा जन्म लेते हैं, वहा लग वृत्ति विराधिक साधु
 गति पाते और साधु कद्रपिया कद्रप की गति पाने, और साधु शवरु,
 आराधक की, जघन्य गति हैं पहिले देवलोक की गति पति है जो

लङ्कृष्टि द्वी सागर की देवी की उत्कृष्टी ७ पत्योम की और अपरि
 ग्रहिया की उत्कृष्टी ५० पत्योम की हैं, महा शक्रेन्द्र महाराज विराज
 मान हैं, और आनन्द से धून्यों के फल यद्धि भोगन में मग्ने हैं
 जैसा करे वैसा भोगे ॥२२०॥

शुभ हमे व्रात शरीर सुन्दर मुकुट कुरङ्कल जग भगौ ।

उर हार भूषण सर्व अगे वस्त्र उजल छवि लमै ॥

वाहिन सु पैरा पति करी सुर धन आशुद्ध धारणे ।

जिन राज भक्त सेव करती धर्म काज सगारणे ॥२२१॥

अथ — शक्रेन्द्र महाराज श्रेष्ठ कचन वा अति सुन्दर अधिक
 प्राति शरीर की छवि है और महा सुन्दर अङ्गोपाग सोभायमान हैं,
 मधे पर अनुप स्न मन मुकुट कानों में कुण्डल और कपोल ऊपर
 सोभा देते हैं । उद्योत का जग भगट करते हैं और छाती उपर रत्नों
 के मोतिया के हार सोभा देते हैं पुष्पों की मालाओं से गलै में सोभा
 देती हैं ऐसा ही सत्र अङ्ग उपङ्ग भूषण कर में मोभते हैं और अति
 श्वेत वस्त्र फीमल सुगन्धि वाने पहनते हैं । अति सुन्दर जिह्वा छवि
 है और सत्र हस्तियां में शिरोमणी उजल वर्ण चतुरद्वि वस्त्र भूषण
 में परिमंडित पैरापति नामक हाथी है श्वे कुजर रूप सुन्दर वाहन
 असगारि के अति सोभायमान जिसमें महाजल है, अति तेज प्रचण्ड
 प्रकाशक प्रताप वत रिपुमान मन सहस्र स्थूलिग प्रकाशी उच्च आयुष
 देव हस्त धारक शक्रेन्द्र महागज त्रिनेत्र देव का नाग धर्म के काम
 कार्य में अति हय में समुख होकर करन वाले, विदयास के साथ
 हरेक फाय में शस करने दुसरा नाम सुधर्मा इन्द्र है ॥२२१॥

तेतीम सुर गुरु मित्र जिह चौरासी सहस्र समान की ।
 पशु श्रमू महिपी परिपदा त्रय सात श्राण का श्रानकी ॥
 त्रय लाग्य छती सहस्र सुर तुन रक्ष जाके जानीए ।
 चतुलोरु पाल सुभोग भु जत शक्र इन्द्र बखानीए ॥२२२॥

अर्थ—शक्र के ३३ महामत्री गुरु देव हैं, और ८४००० समानि देव हैं धरानर बैठने वाले हैं, ८ पटरागिया महादेवी ७-७ पल की स्थिति और आप अपने परिवार सहित, श्रेष्ठ अम्र मेहिपी देवी हैं । और तीन प्रकार के परिपदा हैं । अन्दर की, मध्य की, बाहिर की, और ७ श्राणिना, घोड़े, हाथी, रथ बैल, पयदल, नट, गधर्य, और ३ तीन लाग्य ३६ हजार देव हैं आत्म रक्षक शक्र इन्द्र महाराज के और ४ तोरुपाल देव हैं, ताम सोमदेव, यमदेव वरुणदेव और वैशमादेव यह सन देव इन्द्र महाराज के दुस्म में हैं, ऐसे सद्य परिवार के साथ शक्र इन्द्र महाराज आपने पुन्य के सुभ सुर भोगते हैं ॥२००॥

जिह लग लह गति हेमनय अरु इर्णत्रय के जुग लीया ।

जिह लग निराधिक सातुत जिह लग मवे कद्रपिया ॥

गति साधु भावक की कही जघन्य जिह सब धोरु हैं ।

जिह लग लह जिह जिया गर्भ थी गति सो सुधर्मा लोक हैं ॥२२३॥

अर्थ—पहिला कल्प सुधर्मा देव लोक तक हैं, क्योंकि हेमनय इर्णत्रय क्षेत्र के जुगलिये १ पल की स्थिति पाने वाले भाग पूरा करने पहिला देवलोक में जा जन्म लेते हैं, वहा लग वृत्ति निराधिक साधु गति पावे और साधु कद्रपिया कद्रप की गति पावे, और साधु भावक, निराधिक की, जघन्य गति है पहिले देवलोक की गति पति है जो

विराधन हैं, और जो गर्भ से पैदा होते हैं, वह आराधन विराधन दोनों हैं, और जो असंज्ञी हैं उनकी गिणतिराधक विराधक में नहीं है और जो गर्भ से पैदा होते हैं, भाव जप तप संजय में हा धो जीव पाल करके ऊच गति पा सकता है ॥२२॥

अथ दूसरे देव लोक का अधिकार ।

ईशान कल्प जघन्य स्थिति पलते अधिक ढवी सुर ।
दो सिंधु साधिक देवकी थोडक कही जगदीश्वरे ॥
नय पल तथा पच वन्न पल थोडक देवी की कही ।
शुभ महिष मूरत चिन्ह मूकटे इन्द्र इशानो सही ॥२२४॥

अथ — २ इशान देवलोक के देव दधी जघन्य स्थिति १ पत्योम से अधिक उत्कृष्टी दो सागर से कुछ ऊपर है, उहा की दधी की उत्कृष्टि ६ पत्योम की, अपरमहिया देवी की ५५ पत्योपम की उत्कृष्ट स्थिति, और सुन्दर महिषे की मूर्त्त मुकुट उपर और मुकटधारी देव विराजमान है ऐसे इन्द्र महाराज विराजते है ॥२२४॥

वर वृषभ वाहन शूली पाणी उत्तराधिप सुर पति ।
तन छवि सुभूषण माला अवर शक्रवत सुन्दर सति ॥
सुर ताव तीस समान की वमु अग्रमहिषी परिपदा ।
चतुलोक पाल समेत सब परिवार सोह मुनि मुदा ॥२२५॥

अर्थ—इशान इन्द्र महाराज के प्रधान श्वेत वर्ण मय महासुन्दर विराट वृषभ वाहन की सवारी है, और जिमके हाथ में त्रिशूल शत्रु

ज्ञान मर्दन आयुध धारण करने वालो और उत्तर दिशा में अर्धलोक
 के स्वामी हैं देवराज शक्र इन्द्र का शरीर सुवर्ण वर्ण मय श्वेत धर्म
 कुण्ड कुण्डल कानों में और गते में हारादि फूल माला भूषण धारी
 महाबल वत महायशमाने महाभाग, उत्तम सेत वत विराजमान हैं,
 और उनके साथ में ताय त्रिम देव है और २०००० समानी देव
 घरावर बैठने वाले, अप्रमहिषी पाट की देवी ८ परिवार मनेत तिनके
 ३ परिपदा, अंतर की, मयम की, गहगहि, सात अणिनातुरग पुत्र
 'वृषभ' रव 'पावक' 'नट' गत्र चार लोक पान (१) सोम (२) यम
 (३) धरुण (४) वैश्रमन पेने सर्व परिवार मे ईमान इन्द्र मद्रासन मोभा
 को पाते हैं और सुरों में तहलिन है, जैसे सुधमा इन्द्र का बहा जैसे
 ईशान इन्द्र को भी सममना ॥२०५॥

जिह कल्प लग युगलु लगे गति लिंग निहलग भवे ।

निह लग पनों की आयुधर तनु सांतरु जिह लग हवे ॥

जिह तार मैथुन नाम सुर लोक नाम ईशान है ।

ईशान इन्द्र गिरान तो निन रात्र मक्ति मुजान है ॥२०६॥

अर्थ — २ ईशान देवलोक में जुगलिया गति पाते हैं, और २
 देवलोक में वो लिंग हैं स्त्री पुरुष दोनु उपजते हैं, और उनका
 २ हाथ ना है, बहा दोनु लिंग मैथुन काम मोन नाया से
 ऐसा ईशान नाम सुरपुर है । जहा इसान इन्द्र मद्रासन विराजमान है
 और वरु ईशानन इन्द्र श्री निनेत्र देव को मक्ति में स्तन इन्द्र के
 बडे चतुर है ॥२०६॥

श्रीः तीजे देवलोक का वर्णन ।

सुरलोक सत कुमार और महिंद्र द्वादस परण के ।
द्वादस तथाष्ट विमान लाख अरुण्य हैं चतु षषा के ॥
शत षष्ट जोजन ऊच ऊपरि केतु अद्भ भरे पदा ।
पट हस्त दही देर राजत विषय सुख भोगे मदा ॥२२७॥

अथ — ३ सत कुमार देवलोक ४ महन्द्र देवलाक दोना दयले
वरावर भूमि के हैं, पहिले १० लाख विमान हैं, दमरे के ८ ल
विमान, येना के २० लाख विमान हैं । चार रग के विमान हैं । का
रंग छोडके और दातु निमाना के उपर ६०० योजन ऊची छत्ता
इतने २ डंके विमान हैं । और उपर उनसे वैह योजन की ऊची ध्व
पताका फरावा हैं । और शब्द ५ विषय पुरा हैं, ऐसे सुख वाले विम
मे देव विराजमान हैं । शरीर की ऊचाइ ६ हाथ की हैं । और वि
सुख भोगते मज्ञ आनन्द न रहते हैं ॥२२७॥

दो जलधि से धिति सात साधर लग कही थोडक सही ।
वराह वक्ष्य मौलिधर सुर पद्म गौर छवि लही ॥
सु स्पर्श इन्द्रिय काम सुख सुरलोक सत कुमार हैं ।
तिह इन्द्र सेत कुमार सुन्दर मध को हितकार हैं ॥२२८॥

अथ — ३ देव लोक सतकुमार इन्द्र की जघन्य २ सागर
वल्कली सात सागर की दर्राके सिर पर सुकट हैं उसमे ६ नक्षत्र लि
हें सुनर का निमजा नाम नूर्त्त चित्र हैं । और शरीर में चिहनी
पद्म कमल का गौरवन कानि हैं और काम भोग स्पर्श भय है । आ
मात्र, यह रचना सत कुमार देव लोक में हैं, यह इन्द्र महा

विराजमान हैं, और सदा स्वधर्मी चतुर संघ को हितकारी हैं । सतकुमार के समान्नी देव ७०००० हैं आत्म रक्षण देव, २८८००० है चार लोक पाल हैं । अणिका हर्ष । ६१४४०० । ३ परिपदा ८००० अ देव, की मध्य १०००० की ११००० बाहिर की ॥२२८॥

बुद्ध अधिक सागर दोड़ ते थिति मात साधिक लग सही ।
सुर मीस मुकटे सिंह चिन्ह महिंद्र सुर पुर मुख लही ॥
जिह लग लहै गति पट सययणी इन्द्र श्री महिंद्र हैं ।
सुर पद्म गौर गर्श मोली भक्ति चित सुरिंद्र हैं ॥२२९॥

अथ — ४ कल्प महेन्द्र देवलोक में देवों स्थिति जघन्य दो सागर मे बुद्ध अधिक और उत्पृष्टी मात ७ सागर से बुद्ध अधिक हैं मस्तक पर मुकट चिन्ह सिंह का तक्षण, ऐमे देवता देवलोक का सुर लेते हैं, चौथे देवलोक तक ६ संघयणा वाला जाता हैं वहा इन्द्र महाराज विराजमान हैं और गौर वर्ण मय देव काम नीड़ा स्पर्श इन्द्रियमय हैं । सतकुमार की तरह श्री त्रिनेत्र देव की भाव भक्ति में लगे रहते हैं और निमान आठ लाग्य हैं, तीजे चौथे देवलोक के विमान ४ रंग के हैं, काला नहीं समानि देव ७०००० है, आत्म रक्षक देव २८०००० । लोकपाल ४ देव हैं । ७ अणिका के ८८०६००० हैं देव । परिपदा ३ प्रकार की हैं । अन्दर ६००० हजार देव है । मध्य की ८००० हजार देव है । बाहिर की देव १०००० हजार विमान का नाम नन्दी वर्द्धन । ३३ तेतीस गुरु ठिकाने देव हैं इन्द्र महाराज के मुकट मे सिंह नकरे का चिह्न है ॥२३०॥



५ देव लोक वा जलन ।

शुभ नक्षत्र लोच सुचेन सब ते अघिक शशिपूर्ण निधा ।
 पट भूमि वत विमान लाख सुचार र्ण त्रिधा तिमो ॥
 शत सप्त योवन ऊच धुन युत नील दृग्य निरर्जत ।
 तिह इन्द्र श्री ब्रह्मेश राजम धर्म कान गजते ॥३३०॥

अर्थ—श्रेष्ठ ५ नक्षत्र देवलोक सब त्रेधा म वरे नाम ते पान
 वाला हैं और आठार निसरा पूणमासी के चंद्रमा जैसा और गिनर
 चार लाख विमान हैं जोके ठै छ भूमिये महल सुदर ४ ०००
 विमान । ६ मनलै महल है वड़े सुन्दर है । निन में ३ यण हैं फाला
 निला तहीं आर निमान ७०० योवन का ऊचा है निसने उपर सोभा के
 देने वाली धजा करती हैं आर तहा पर इन्द्र श्री ब्रह्म नाम से सोभा
 पाते हैं । लेकिन धम के काम में हर समय गजते रहते हैं । और
 इन्द्र महाराज के समानी दक्ता हानर हुसम भ रहते हैं । आत्म रक्षन
 देव (४००००) (६००००) लोकपाल देव (४) अणिना के देव सात
 अणिक हैं । (७६३००००) परिपण तीन अन्तर की (४०००) देव हैं
 मध्य देव की (६०००) बाहिर देव की (८००००) तेतीस देव शुभ के
 स्थान हैं (३३) इन्द्र महाराज के सिर के सुमुट पर मडे का चिह्न है ।
 विमान का नाम-काम ॥३३०॥

निह लग लहै परिवर्न की गति तमम काय जहा लगे ।

लोकठ की सुर जिह रमे सेसा पद्य तिह ठालगे ॥

जिह वाम सुख है रूपमय तनु पच हस्त पद्य प्रमा ।

चिति सुप्त सागर ते नशा लग छाग लक्षण सौलिभा ॥२३१॥

अथ — जगत्परिष्ठापक सत्यान वृत्ति बाने नीजा सरत है
 जिनको दुनिया पत्रग जगत्कोर बाने है । इसी को छानिया ने ५
 न्यलोक कहा है । और रागी गीरी की नाम काय भी कही है जग
 लोन्वदक नेत्र रमने विरने बने हैं, और जग पर पक्ष लया नेत्रे स
 है यहा पर राम कीजा रूप विषय नेत्र भोग है और नहीं । उहाँ देवा
 का शरीर ५ हाथ का है । और गौर वर्ण पद्मवन् क्रांति है विधि
 जयत्र ७ सान सागर की आर वन्द्युष्टि १० मागर की है । इन्द्र मग
 गन के सिर पर सुकट द्वाग मेडे का है । जिसका नाम मूख विह
 है ऐसे आर साभा से ५ पचम मग देवलोक ॥२२॥

पर कल्प उलङ्घ भूमि पच विमान महस पचाग को ।

त्रिष वर्ण योजन मास में ऊंचे रत्न प्रकाश को ।

सुर तन सु सोतये छत्रि जहा तत्तिम सुकृत लेशे जहा ।

मालूर लक्ष्य सुकृत दोपत इन्द्र श्री लंकुत उहा ॥२२॥

अथ — प्रथम तंक्त फल्प देव लोक के विमा पंच ७ मनने
 मफल है । और ५० विमा है जिहा ४ ३ रग हैं लात (१) पीला (२)
 श्वेत (३) य ३ रग के रत्न विमान है । और ७५० योजन ऊंचे २
 उत्तम रत्ना की ज्योति की सरत् प्रकाश करने बाने हैं । ऐसे विमानो स
 उत्तम जानि के अमरदेव विगपमान ह, और जिहा शरीर उचल
 मोरी की सदश्य छत्रि के बाने बाने हैं और ६ देवलोक से लेकर मारे
 देव शुक्ल लेशी है, लवक इन्द्र महाराज के सिर पर जो सुकट है
 उसमें हाथी का चिह्न है । अपने पूर्वापरान्त पुन्य के अनुसार सुग
 में लोन है । जिसकी स्थिति जयत्र १० दम मागर की वन्द्युष्टि १४

मागर की समांतक देव २००००) हैं, आत्म रक्षक देव (२०००००) हैं। परिपदा तीन अक्षर की (२०००) देव हैं। मध्य की (४०००) देव हैं। बाहिर की (६०००) देव हैं ॥ अणिना सात हैं और (६३५००००) देव हैं अणिना के विमान का नाम। गाम हैं ॥२३१॥

यिति दम उदधि लघु चतुर दम लग पच कर रम रूप को ।
जिह लग लह गति द्विल विपि सुरलोच लतक भूप को ।
जिह कल्प लग गति पुट्य चौदस की जिनवर कही ।
जिह लग गमे सययण पन धर जान आगम ते लही ॥२३३॥

अर्थ — ६ लतक त्रैलोक्य की स्थिति प्रथम कह चुके हैं जिनका शरीर ५ हाथ का उचा है, काम भोग नेत्रा से दर्शन रूप है। और जो कोई साधु आदि का निंदया चुगली कर अन्त समय मर कर त्रैलोक्य देव म जाते हैं। और बह पर निल विधी की गति पाते हैं ऐसे स्वर्ग लतक इन्द्र का हैं इम कल्प से लेकर गति १४ पूर्णों के धारि साधु की जिनेन्द्र देव ने कही है। जहा से छेवद्वय संघयण नदी है संघयण धाला जाना है। ऊच गति मैय हरचना जैन सिद्धांत में कही ॥२३३॥

सातमें देवलोक का वर्णन ।

सुरलोक लतक लघ ऊपर महा शुक्र चतुर मही ।
चालीस सदस विमान योचन आठ सै ऊचे सही ॥
मित पीत वर्ण सु अद्द पूर्ण रमे सुर चतुरर तनु ।
इय चिन्ह यिति चौदम उदधि लघु बड़ी सप्तदशी भणु ॥२३॥

अर्थ — ६४ लतक देवलोक में उपर महा शुक्र नाम का सातम

देवलोक हैं उनके (४ ०००) प्रिमान हैं । और (८००) योजन के उचे प्रिमान ४, ४ मन्ल के महल हैं दो दो रग के स्वत पिले वर्ण के हैं और श्रद्धि उत्तम श्रद्धि हैं । जिन प्रिमाना म देव प्रिरानमान हैं, उन देवा के शरीर ४ हाव का हैं और देवा के सिर पर मुकट मदा सुन्दर घोड़े का तथा चिह्न सोमा के देने वाला । निनरी स्थिति जघन्य १४ सागर की हैं । उत्कृष्ठी १७ सागर की हैं ऐसा जैन सिद्धांत शास्त्रा में लिख है ॥२३४॥

विह सप्त मे दिव इन्द्र सुन्दर महा शुक्र मदा द्युति ।

सर्गा ग भूपण माला अबर काम निषय शब्द धती ॥

जिन वचन रागी धर्म भागी भक्ति चित्त वधानतो ।

जिन चरण कमल स्पर्श निज सिर स्तवन रच गुण गावतो २३५

अथ — ७मा देवलोक मह शुक्र नाम का मदा सुन्दर महा शुक्र इन्द्र विरानमान हैं निनके शुभ अङ्गोपग आभरण भूपण माला वस्त्र सुगधियाने शोभा देते हैं । और काम क्रीडा शान्तमय वचन रूप मे है और निषय नहीं है और निनन्द्र देव के वचना का रागी है धर्म का भागी है । भगवत की भक्ति वधाने वाला है भगवत के पद पवज चरण कमला में अपना शीम लगाने वाले और नमस्कार करके गुण प्राम गाने वाले ऐसे इन्द्र महाराज हैं और इन्द्र की सोमा देवतो समा निरु देव (४००००) लोक पाल ४ दंव है । तेतीस देव गुरु के स्थान ३३ है ॥ आम रत्तक देव (१६००००) हैं ३ तीन परिपदा के देव (१०००) अन्दर की देव । मध्य के देव (२०००) हैं बाहिर की देव (४०००) है । अणिका ७ के देव (५०८००००) देव हैं । विमान नाम ॥ विहङ्ग ॥२३५॥

देव (८००००) हैं ३ परिपत्ता के देव अन्दर की २५० देव हैं । मध्य (१००) देव हैं । बाहिर के (१०००) देव हैं । अग्नि ७ के देव (२५४००००) हैं । तैत्तीस देव गुरु के स्थाभन ३३ । लोकपाल ४ देव हैं ॥२३८॥

१० में देवलोक का वर्णन ।

इसमें सुप्राणत ब्रह्म उत्तम धिति जघन्य उन्नीस के ।
 उत्कृष्टी सागर तीस गेंडे चिह्न मुकट सुमीम के ॥
 विन कल्प चतु सित विमान शनेंद्र प्राणत नाम हैं ।
 जिन राज बदन पूजने अति भक्ति आभराग हैं ॥२३९॥

अथ —नवमे दसमे देवलोक का एर इन्द्र हैं नितेकी जघन स्थिति । १६ मागर कि उत्कृष्टी २० सागर की तीनों देवलोक के विमान चार २ मजल के हैं और (२००) सार विमान १०मे के । नर योचन के ऊचे विमान हैं, और उहां देवां के सिर पर मुकट सोभते हैं नितमे गेंडे की मूरत हैं, दोगा देवलोक की भूमि बगरर हैं और यहा पर प्राणत नामे इन्द्र महाराज सोभा के पाने वाले हैं । साथ नितन्द्र देव भक्त भी हैं बहुत जिनके विमान वा रग द्येत है, यन्मरे नाम से प्राणत और प्राणत १० देवलोक हैं । जो ६ देवलोक कथा मोह यहा पर संभचना ॥२३९॥

११-१२मे देव लोक का वर्णन ।

सुरलोक अरणे कादसे धिति धीत ते इस्कीम लौ ।
 तिह घृपम लक्षण मौलि घर लेखा कट जिन वच मलौ ॥

द्विप्र प्रथम द्वितीये तृतीये च गुग्घो अर्द्ध चन्द्रशर हैं ॥

विह ते चतुर शशि पूर्ण ते पुन अर्ध शशिवत् चार है ॥२४०॥

सब यन्त्र ते उत्तम महा गुण तीन मघण्यो नहै ।

इन्गीन सोगर ते चडत गइम लग धारक कहै ॥

पर हुह मूरत चिन्ह मुत्रटे ज्योत प्रफाशनो ।

चतु खित दुहन पविमान त्रेसय अन्युतन्द्र सुशासनो ॥२४१॥

अर्थ—१८मा अर्धक देवलोक की स्थिति जघन्य २० सागर की उच्छ्रुति २१ सागर की मुरां के सिर पर मुफ्ट में बेल की मूरत अति सोभित है । भगवान के बचन सत्य हैं, विमानों का आकार १-२-३-४ अर्धचंद्रमाके आकार के विमान हैं और ५-६-७-८ इन चार विमानों का आकार पूर्णमासी चन्द्रमा के आकार हैं और ९-१०-११-१२ । इन चार का आकार आर्धचंद्रमा के आकार बाने ॥२४०॥ १२मा देवलोक मय दशा में सारे देवलोक में उत्तम महागुणकारी सोभाये मान हैं । सो १२ अच्युत देवलोक में ३ संघयण वाले साधु साध्वि श्रावक श्राविना लेते हैं और जो नियम करनी करते हैं वह सब लेवगे १२ मा देवलोक चिनकी स्थिति जघन्य २१ सागर की उच्छ्रुति २२ सागर की है सूर्य पावंगे ११-१२ के विमान हैं ३०० सौ हैं । चार चार मनले हैं और ६०० योजन के ऊंचे हैं वण १ श्वेत हैं । ११-१२ का बेल का चिह्न हैं मुफ्ट में समानी देव (१००००) है । आत्म रक्षक देव हैं (४०००) अणिका ७ सात के देव (१२७००००) है । ३ तीन परिपदा अन्द्र के देव १२५ मध्य के देव २५० और धादिर के (५००) देव हैं । और शरीर वस्त्र अर्भण भूषण कान कुडल सिर पर

मुक्त गुरुत दुःखस्यु की ऐसी प्राति ज्योति प्रकार दत्त हैं ॥२१॥

उत्कृष्ट भावन गति जहा चार पदवी मो वही ।

आजीविश आमोगोया गति दृष्ट त्रय तिह हाग सही ॥

वैक्रय उतर जिह लग करै सेवन पति पद जिह लगे ।

मन भोग रस चतु फलर उत्तम नाम अच्युत जिन मने ॥२४२॥

अर्थ — प्रायश की गति उत्कृष्टि १० मे देवलोक तक हैं । वहा पर जाकर चार पदवी प्राप्त करें पर तो इहर पदवी, दूसरी समानिक पदवी, तीसरी ३३ प्रेतिस वायतिम गुरु पदवी, चोथ लोनपात्र पदवी पाने । यह चार पदवी में से एक पदवी आराधिक कि पावे और आजीवन कमति वहा लग जाव, और १२ लग ही अभियोगी जावे वहा लग ही ३ दृष्टी घाला जावे और १० मे देवलोक तक ही उत्तर वैक्रय कर सकता है । और स्वामी सेवक भी वहा लग ही हैं । स्वय आपो दिरो क्या रचना हैं । १२ देवलोक १-०-३-४ इन चारों देव लोक में काम भोग ३ योग से है । १-मन, २-वचन, ३-काय । और ४-६-७-८ । इन चारों देवलोकों का काम भोग ० योग से है । १-मन २-वचन और ३-१०-११-१२ इन चारों देवलोकों का काम भोग एक योग से करते हैं । मन से आपनी ईच्छा पूर्ण पूरी कर लेते हैं । ऐसा श्री विनेन्द्र देव ने जैन सिद्धांत मे कहा हैं ॥४२॥

इहि कल्प द्वादस भूमि धारन घर रिमान विराजत ।

योजन असख्य प्रमान के छवि सरस फे छवि छाजते ।

कल्पत भूमि फलर नाम बडस के घर इन्द्र को ।

उत्कृष्ट धिति मुख सो लहे चित्तधार चवन विनेन्द्र को ॥२४३॥

अर्थ — यह १२ देवलोक की वायव्य ५० भूमि का घडि प्रवान, उत्तम विमान सोभते हैं वोह विमान अमर्याते योजनों के लम्बे चोडे हैं और अनेक सग्याते योचना के लम्बे चोडे हैं और सुन्दर छवि से सोभा देते हैं और जो २ विमान देवलोक हैं उनके अंतम की भूमि उपर घडंसक नाम का, कल्प विमान हैं उसमे इन्द्र महाराज का वहा पर रहना है घडंसक विमान में और आप आपने जैसे सुधर्मा विडसक १ ईसान विडंसक २ संतजुमार विडसक ३ महेन्द्र विडंसक ४ इस प्रकार से सर्व जाणना और ईशान घटंसक विमान के चारु दिशा में, चार बडमक विमान हैं ऐसे नाम से ऐसे ही ॥४३॥

यहां पर चार लोकपाल का वर्णन ।

तिह इन्द्र नाम विमान के अिश् पृथ्वी सोम सुवर्ण को ।
दक्षिण दिशा जन धर्ष पछम उत्तरे वैशमन को ।
रम मांत चार विमान माहि लोकपाल सुरिंद के ।
बहु बुद्धवत महत सुंदर बचन राह निन्द के ॥२४४॥

अर्थ — जहा देवलोक में घडंसक विमान हैं और जहा इन्द्र महाराज निरात्मान हैं । वहा इन्द्र महाराज के चारों तफ चार लोकपाल रहते हैं चार विमानों में पूर्व दिशा की तफ "सोम" नाम लोकपाल है । और दक्षिण दिशा की तर्फ "यम" नाम से लोकपाल है । पश्चिम दिशा में वरुण नाम का लोकपाल रहता है । और उत्तर दिशा में वैश्रमन, त्रया (कुर्वर) नाम का लोकपाल है यह सब दिशा इन्द्र महाराज के विमान से गिणना जो पहले आचुने हैं (१) घडंसक विमान

के चारों तरफ बरसक विमान हैं । जहाँ में लोकपाल देव रहते हैं लोकपाल महा श्रद्धियाने बड़ी पदवी यान्ते प्रति सुन्दर सोभा धारि और मन्त्रे सेवक गेसे दयन भगवत कहै ॥२४॥

किल विषी चिति त्रिपाल त्रि सागर प्रगोटम धारक सुरा ।
 धामी आघो दिस इन्प त्रिप धुरा तृताप धर धुरा ॥
 लतक कहै ह्यल दोष के फल ऊब धानक नदि लहै ।
 निदादि दोष विमार मयुत सजमी इह फल गहै ॥२४५॥

३ तीन किल विषी देवों का वर्णन ।

अथ — देवलोक में ३ किल त्रिषा देव रहते हैं जिनका वास रहना जहा पर दश प्रभार के ज्योतिषी देवां से ऊपर और पहले दुमरे देवलोक से नीचे रहते हैं ३ पलिये देव किलविषी और ३ सागरीये देव किलविषी, पहले दूसर देवलोक से ऊपर और तीजे चौथे से नीचे ॥२३ सागरिये देव किल विषी पाचम देवलोक से ऊपर और छठे देवलोक से नीचे हैं किल विषी देव जो जो कोर निन्धादि करेगा यह जीव नीचे टिकाने पैदा होता है, जो निन्धा करता है वही अमृत छोड़ के भिष्टा गता है, इमानिये निन्धा के प्रभाय से घुडे देव बनते हैं किल त्रिषी, निन्धा मत कर इमलिये निरदोष संजम पा लेने से सुम गति की प्राप्ति होरी है ॥२४॥

गति वेदोप जीव पुन्यों का फल ।

फलपो चवी इक लहै तिर्यकर पद लह इक केवल ।
 चक्केश केशन बल महीधर स धु थायक केवल ॥

मिथ्यात्व युत इह भूमे भवन्त्येव

मय जन स्यो इहि देव रचता

अर्थ — १२ देवलोक में सं
आप अपने पुण्य के अनुसार
जीव तीर्थकर दण्डी पदवी पायें
केंद्रक चक्रवर्ती की पदवी पायें
की पदवी पायें । एक जीव पृथ्वी
केंद्रक गणक पदवी पायें, एकके
शटे सैनापती 'मन्त्री माध याद
वान्य सुख भोग पद पायें, कितने
दम संयुत समार मं जन्म
परिणाम करें चार गति रूप
जिनके द्र दण के हैं हे मय जीवो
इससे सुणने से समझने से
हे जय हो ॥२४६॥

चौषाठ इन्द्र परित्र मन वर

उकमत अह्न प्रमोद पूर्ण

निन भक्ति फल शुभ गति

ओडक लहे निर्वाण पद

अर्थ — सारे ६५ इन्द्र हैं
प्रकार बाण व्यतर १६ प्रकार,

मगध के सचे भगत हैं जो कोर सच्चे दिल से गुसी प्रमोद वित्त
 परित्र सुध भायों से अंगोपग की खुसा से मन की परित्र भावना ।
 अगर भगवान की भक्ति होनाये तो यह जीव आत्मा इस मातलोक
 आके पुत्र के प्रभाव से धा धाय रिद्धि सिद्धि काम भोग संसार
 मुख पावे और सारे कर्मों का अयत्नर नियाण पद पावे जहा मर
 जन्म नहीं है यह गणवर देवा का पहना है इसलिये चौसठ इन्द्र
 और भी देव भक्ति के लिये आते हैं ६४ इन्द्र भवनपतियों २० इन्द्र
 हैं । वाण व्यतरों के ३२ इन्द्र है । ज्योतिषियों के १० इन्द्र है । विमा
 नियों के दश प्रकार के इन्द्र बल इन्द्र चमर इन्द्र इस प्रकार से चौसठ
 हुए इन्द्र ॥२४५॥

सवैयामत्तगयद-अद-सारे इन्द्रों का ।

पचदि पच ऋही असुगेंद की पष्ट त्रिया घर नादिकु कैरी ।
 व्यतर जोतिक इन्द्रन की चतु अग्रह महेषि सुरिद्ध अगेरी ॥
 शक्र इशान कि आठ इमे परिवार समेत जिनद कि चेरी ।
 वदन पूजन प्रेमधरी जिन चैन सुने घर शीक घनेरी ॥२४८॥

अर्थ-इन्द्रोंके अग्र महेषी देवियों की सख्या ऐमे हैं चमरेन्द्र की
 ५ देवी पटराणी बल इन्द्र की ५ देवी पटराणी और असुरेन्द्र की १०
 राणी, धरणेन्द्र की आदि का की नव इन्द्रों के १८ का ६-६ देवी हैं ।
 ज्योतिषी इन्द्रों के चार २ पटराणी हैं, वाण व्यतर के ३० इन्द्रों के
 एकैक इन्द्र के चार २ पाठकी पटराणी हैं । और शमरेन्द्र के ८ देवी
 पाठ की इशानन्द्र की ८ पटराणी हैं । ऐमे अथ आपने परिवार से

साथ लेकर श्रद्धि सहित त्रिनेत्र देव की चेरी धन कर सेवा करती है। यज्ञा करै पूजा स्तुति गुण भ्राम गाम अति सुशी हर्ष के साथ प्रेम से और भगवत की वानी सुने आनन्द माने ॥२४८॥

चौमठ साठ हजार समानिक हैं चमरेन्द्र पञ्चेन्द्र विभारे ।

षष्ट सहस्रयुते धरणादिक व्यतर ज्योतिक चार हजारे ॥

चार अस्मीय अस्त्रीय बहत्तर सुत्तर साठ पचास गुभारे ।

घालीस तीस सुधीस दसो मद्यवादि सहस्र सुशोभत सारे ॥२४९॥

अथ — दश्लोक के इन्द्रा के समानी देवों की सरया चमरेन्द्र के समानी देव (६४०००) हजार हैं पञ्चेन्द्र के देव समानी देव (६००००) हजार हैं। धरणेन्द्र के समानी देव ६ हजार हैं। याण व्यतर के इन्द्रों के चार ० हजार समानीक हैं देव। ज्योतिषिया के इन्द्रा के समानिक देव हैं (४०००) हजार। शम्भेन्द्र के (८५०००) हैं समानिक देव। ईशानेन्द्र के (८००००) समानिक देव हैं। सतकुभारेन्द्र के समानिके देव (७०००००) हजार है। माहेन्द्र के (७००००) हैं समानीक देव मञ्जेन्द्र के (६००००) हजार समानिक देव हैं। लातकेन्द्र के (५००००) हजार देव समानीक है। महाशुकेन्द्र के (४००००) हजार समानिक देव है। संहमारेन्द्र के (३००००) हजार देव समानिक है। प्राणतके (२००००) हजार देव समानिक हैं। अच्युतेन्द्र के (१००००) हजार देव समानिक है। यह सब समानीक देव मयी वजीरवार कह है ऐसे सर्व इन्द्र सोभा पाते हैं। और इना से चार गुणे आत्म रक्षा के लिये चौकीदार घत् पहरा देते हैं, इन्द्र मन्त्राच के पात्र हरदम ॥२४९॥

भगवंत के सने भगत हैं जो कोइ सच्चे दिल से खुसी प्रमोद वित्त
 पवित्र सुध भावों से अंगोपग की खुसी से मन की पवित्र भावना
 अगर भगवान की भक्ति होनाये तो यह जीव आत्मा इस मातलोक
 आके पुण्य के प्रभाज से धन धाय रिद्धि सिद्धि काम भोग संसार
 सुख पावे और सारे कर्मों का श्रयकर निर्वाण पद पावे जहा मरना
 जन्म नहीं है यह गणधर देवा का कहना है इसलिये चौसठ इन्द्र
 और भी देव भक्ति के लिये आते हैं ६४ इन्द्र भवनपतियों ०० इन्द्र
 हैं। वाण व्यतरों के ३० इन्द्र है। ज्योतिषियों के १० इन्द्र है। विमा
 नियों के दश प्रकार के इन्द्र बल इन्द्र चमर इन्द्र इस प्रकार से चौसठ
 इवे इन्द्र ॥२४५॥

सर्वैयामत्तगयद द्वाद-सारे इन्द्रों का ।

पचहि पच ऋही असुरेंद भी पष्ट त्रिपा घर नादिक केरी ।
 व्यतर जोतिक इन्द्रन की चतु अग्रह सहेषि सुरिद्ध चगरी ॥
 शक्र इशान कि आठ इमे परिवार ममेत जिनद कि चेरी ।
 वंदन पूजन प्रेमघरी जिन बैन मुने घर रीक घनेरी ॥२४८॥

अर्थ -इन्द्रोंके अग्र सहेषी देवियों की संख्या ऐमे है चमरेन्द्र की
 ५ देवी पटराणी बल इन्द्र की ५ देवी पटराणी और असुरेन्द्र की १०
 राणी, घरणेंद्र की आदि की नव इन्द्रों के १८ को ६-६ देवी हैं ।
 ज्योतिषी इन्द्रों के चार २ पटराणी हैं, वाण व्यतर के ३० इन्द्रों के
 एकैक इन्द्र के चार २ पाठरी पटराणी हैं। और शक्रेन्द्र के ८ देवी
 पाठ की ईशानेन्द्र की ८ पटराणी हैं। ऐसे अथ आपने परिवार से

साथ तोत्रर श्रद्धि सहित जिनेन्द्र देव की चेरी धन कर सेवा करती है । यद्वा कर्तृ पूजा स्तुति गुण प्राम गाये अति सुरी हर्ष के माध प्रेम से श्रीर भगवत की यानी सुने आनन्द माने ॥४८॥

धौमठ माठ हजार समानिक हैं चमरेन्द्र वनेन्द्र किमारे ।
पट महमयुते धरणात्कि व्यतर ज्योतिष चार हजार ॥
चार अस्त्रीय अस्त्रीय बहतर मत्तर साठ पचास सुमारे ।
धालीम ठीम सुवीस दसो मयवादि महम सुशोमत मारे ॥२४६॥

अथ — दशलोके के इन्द्रों के समानी देवा की सरया चमरेन्द्र के समानी देव (६४०००) हजार हैं वनेन्द्र के देव समानी देव (६००००) हजार हैं । धरणेन्द्र के समानी देव ६ हजार हैं । धारण व्यतर के इन्द्रों के चार २ हजार समानीक हैं देव । ज्योतिषिया के इन्द्रों के समानिक देव हैं (४०००) हजार । शनेन्द्र के (८४०००) हैं समानिक देव । इशानेन्द्र के (८००००) समानिक देव हैं । सतकुमारे के समानिके देव (७००००) हजार हैं । माहेन्द्र के (७००००) हैं समानीय देव अशनेन्द्र के (६००००) हजार समानिक देव हैं । लातकेन्द्र के (५००००) हजार देव समानीक हैं । महायुकेन्द्र के (४००००) हजार समानिक देव हैं । संठमारेंद्र के (३००००) हजार देव समानिक हैं । प्राणिके (२००००) हजार देव समानिक हैं । अच्युतेन्द्र के (१००००) हजार देव समानिक हैं । यह सब समानीक देव मंत्री वनीरवन् कहें ऐसे सर्व इन्द्र सोभा पाते हैं । और इना से चार गुणे आम रसा के जिये पीनीदार वन् पहरा देते हैं, इन्द्र मन्मथ के पान हरदम ॥४९॥

साथ सभी परिवार सुरेणर भक्ति कर प्राण मे रुवि घर ।
 स्तोत्र विचित्र सुवर्ण प्रखन कि दाम अनेक बनाय सगरे ।
 सस्कृत प्राकृत देम विदेश वि भाष मउ गुण ग्र म उच्चारै ।
 मोह लहे निजरा बहु कर्म कि होत सुनत पुन्य भटार ॥२५०॥

अथ — सर्व इन्द्र आपने २ समानीन मन्त्रीद्वय या अप्र न्हेपी,
 परिपदा ३ लोचपाल चार ४ अणिफा ७ अणिफापति, आत्म रक्षक
 देव अभियोगी देव । विमान इत्यादिन परिवार महित आते हैं भग
 वान की भक्ति करें यदना नमस्कार करें चित्त मे स्तोत्र रचे अक्षर रण
 फूलों की माला गूथे फेड़ सारंगी तार इतवार स्वर यज्ञर यजाव केई
 मंस्कृत छंद काव्य रचे वेई प्राकृत गाथादि छन्द रचें, वेई देस
 विदस की भाषा रचें केई गीरचे छाल साजे पहेली रचें वइ अनेक
 भाति के कविता करै, अति हृष सुशी मनाये ऐसे राम करने मे महा
 कर्म की निनग होवे और साता वेदनी कर्म वादे ऊच गोत्र पुम
 कर्म वादे, और पुत्रों के भटार भरे गुण गावे तो ॥२५०॥

सज सजे इक ऊनचचास वि धे दस दीय सुताल यजावे ।

सात सुरेतिहु ग्राम करी पटराग सभी परिवार सुगावे ।

नाटक भात यत्तीस रचे वचु भात सुछन्द पठे राम पावे ।

भक्ति करै सुर श्री जिन की कर जोर नमे जयकार सुगावे ॥२५१॥

अर्थ — ४८ प्रकार के वर्तमान से सात सत्तै और १० भाति के
 ताल यजावे यनरि स्वर आदि सात स्वर, तीन तीन गाम साथ उचारे
 ३ राग छतीस रागानि तीन पुत्र सर्व परिवार माथ गावे स्त्रीम वि

१० ५ अनेक भाति के छन्द पठे और छठ विधे सिंगार रस

१. वरुण २ गण ३ रस ४ शरणा ५ यह पंच विभवे सुते पंच इन्द्रियों के पोषणहार सुख भोगते हैं । और निवेने हेठने देवों सुते से अनंत सुख अधिकै सुख हैं । और पुन्य के फल अति हर्ष से भोगते हैं देव ते नव नवमी वेग के ॥२५॥

नव ग्रीवेके नव मही, दसमी अउत्तर ज्ञान ।

बावन इन्प अकल्प दस, बासठ महि रिमान ॥२५६॥

अर्थ—नव भूमिका नव ग्रीवेक नवाकी है, और एक भूमि अउत्तर विमान की यह सब मिलकर १० भूमि होती है और बावन भूमि कल्पों की १० भूमि अकल्पों की हैं यह सारी भूमि ६३ हूँ । १० भवणपति, १६ बाण वितर १० त्रिषोर्वर्क ५ ज्योत्सपि, १२ देव लोक ॥ ५३—यह सर्व निये बना भूमि हूँ और १० यह ६३ कल्प कल्पवित्त सर्व मिलकर ६३ भूमि होती हैं । इन बासठ भूमि के ऊपर सारे देवों के विमान हैं ॥२५६॥

ऊँचे एक सहस्र मित, योजन नव ग्रीक ।

सामे बिष कर तनु अमर, सजे एक ही एक ॥ २५७॥

अर्थ—नव नवमीवेक के एक हजार योजन के ऊँचे विमान हैं उन विमानों में रहने वाले देवों का शरीर दो हाथ का उँचा है और अति सुंदर है और जुदे २ आप अपनी शक्ति से सोभापाते हैं, सजे घजे मोच में हैं ॥२५७॥

बाइस सागर ते घड़त, एक २ नव माहि ।

थिति जयन्प इन ते अचिर, एक एक ओडक ताहि ॥२५८॥

अर्थ—नव ग्रीवेके देवों की स्थिति पदो भरे दिवलोक की

स्थिति जघन्य २२ सागर की, उत्कृष्टि २३ सागर की, दुने की जघन्य
 २३ सागर उत्कृष्टि सागर की तीजे की जघन्य २४ सागर उत्कृष्टि
 २५ सागर स्थिति है। चौथे जघन्य स्थिति सागर २५ की। उत्कृष्टि
 २६ सागर की स्थिति है। पाचमें जघन्य स्थिति २६ सागर की उत्कृष्टि
 २७ सागर स्थिति है। छठे की जघन्य स्थिति २७ सागर उत्कृष्टि
 स्थिति २८ सागर की है। सातमें की जघन्य स्थिति २८ सागर की है
 उत्कृष्टि २९ सागर स्थिति है। आठमें की जघन्य स्थिति २९ सागर
 की है उत्कृष्टि स्थिति ३० सागर की है। नवमें की जघन्य स्थिति ३०
 सागर की है। उत्कृष्टि स्थिति ३१ सागर की है ॥२३॥

नव प्रीवेक तीन त्रिक, हेठ मध्य उपरेव ।

विह विमानं सत तीज युत, अष्टादस मण एव ॥२४॥

अर्थ—९ नवप्रीवेक के देवों की तीन त्रिक हैं। ३ हिसे ३ भाग
 पहिले त्रिक नीचे जिसमें ३ देव लोक है। १३-१४-१५ दुनीत्रिक
 विचाने (बीच में) भी ३ देवलोक हैं। १६-१७-१८ ॥ उपर की त्रिक
 में ३ देवलोक हैं। १९-२०-२१ तीनों के विमानों की मख्या १ त्रिक
 विमान १११ है। २ त्रिक में १०७ ॥ ३ त्रिक १०० यह सर्व विमान
 ३१८ हुने ॥०५॥

इक सौ ग्यारह सत युत, सौ तीजे सय एक ।

श्वेत रत्न मय केशु युत, नामे देव अनेक ॥२६॥

अर्थ—और जिनों का श्वेत रत्नों रंग है अति सुंदर। ऊपर
 ध्यना है ऐसे विमानों में अनेक देव रहते हैं। नव प्रीवेक देवों में ३१८

जिह्वा लग देव विमानीया, महित लोका देव ।

वासुदेव पद लेन की, भाषी श्री खिनएव ॥२६१॥

अर्थ — ६ नव प्रीवेक देवलोक मे अरु १० देरगोरु से और ६ लोकातक देवों से निकल कर वासुदेव की पदवी पा सकता है । और देवों से वासुदेव नदी बनता है तिन कहा है ॥२६१॥

अनियानी सनियानय, अत अन्त मवीया ।

आराधिक द्रव्य लिंग की, जिह्वा लग देव महिषा ॥२६॥

अथ — बिना निदान (नियाना) करे देव बने और नियान करने देव बने जो करनी बेच देता है वोह जीव आते भावकर लेता है और जो करनी नहीं बेचता है वह जीव मुरा पाता है संसार मे नियाना करने वाला कोह कह भाव लेता है । नियाना नहीं करने वाला जलादि भव रतम करता है और संतम के आराधिक कि गति सु होती है और सजम के विराधक की गति माफी होती है निश्चय समझे ॥२६२॥

जिह्वा लग मव्य अमव्य सुर, समाहित अरु मिथ्यात ।

ज्ञान तीन अज्ञान त्रय, नव प्रीवेक कहात ॥२६३॥

अर्थ — ६ नव प्रीवे के देवों में ३ ज्ञान हैं ३ अज्ञान हैं २ दृष्टि हैं, दो भय १ अमव्य अथवा त्रिनेन्द्र देव ने कहा-मिश्र दृष्टि नहीं । नव प्रीवेक देवों में ॥२६३॥

इक सम द्रिष्टी शुद्ध चित, निसशय वृत्तपाल ।

धर्माधिक सुर रुचिर, दृश्य ज्ञान रसाल ॥२६४॥

अथ — १ देव सम दृष्टी निमल आत्मा संशय रहित साधु वृत्ति

पाल के धर्म के अराधन हुवे और जिनका हान दर्शन सुन्दर है
निमल हैं ऐसे देव तिरने वाने होते हैं ॥२६५॥

इह सशय मिथ्यातयुत, समहित रहिता चार ।

‘फर करनी सम साधु की, तहा मए अपितार ॥२६५॥

अर्थ—एक जीवने सशय मिथ्यात्व सहित और सम दृष्टि
रहित आचार पाल साधु की करणी तपस्यादिक उत्तर गुणी करके
और बहा जाके नवग्रीवक मे देवता हुवे हैं ॥२६५॥

उत्तम दो सघयण के, नव ग्रीवक आन ।

ता ऊपर समदृष्ट धर अमर अनुत्तर विमान ॥२६६॥

अर्थ—उहाँ देवों के दो सघयणा उत्तम प्रथम लिया वज्र
अपम नाराच सघयण अरु अपम नाराच संघयण वाने साधु धृष्ट
जाते हैं नवग्रीवकों मे, और नवग्रीवक देवों के ऊपर अत्तम देव भूमि
पच अनुत्तर विमाना की हैं बहा पर देव सर्व समदृष्टी देव है, और
पाच अनुत्तर विमानों से ऊपर काइ देव भूमि नहीं हैं, भगवान् का
कहना ॥२६६॥

गति धिति कल्पानी कही, प्रथम सघयणी थाय ।

थोड़े भव कर कर्म क्षय, मुक्ति महा पद पाय ॥२६७॥

अर्थ—वह देव गति कल्याण करी स्थिति, फलपों-की है प्रथम
‘वज्र अपम नाराच सघयण थाल पावे, ‘वह जीव ’ थोड़े भव लेकर
‘जप तप समय करणी कर कर्म क्षय कर मोक्ष पद पावे’ इश्वर-वने
भगवान् कहवेंगे ॥२६७॥

विजय विजयत जयत कुन, अपराजित सुविमान ।
सर्वार्थ सिद्ध के चहु, दिप ही दिपति सुधान ॥२६८॥

अर्थ—पाच अनुत्तर विमान हैं जहाँ में सं ४ विमानों चारु दिशा में और मध्य सर्वार्थ सिद्ध विमान है, सर्वार्थ सिद्ध विमान से पूर्व दिशा में विजय विमान है, दक्षिण में दिशा विजयत विमान है, पश्चिम दिशा में जयत विमान है । और उत्तर दिशा में अपराजित विमान है दिव्य सुन्दर अति प्रकाश वाले शोभायमान जहाँ में देवों सुख अति साठा मानते हैं ॥२६८॥

ऊचे योजन इक दम, गतते ऊपर केतु ।

द्रव्य अनुत्तर मणि त्रिपत्, तामे मुर सुख लेतु ॥२६९॥

अर्थ—५ अनुत्तर विमान (११००) योजन के ऊचे हैं उसमें ऊपर १ अति सुन्दर भदेन्द्र नाम की ध्वजा शोभति है जहाँ विमानों अति प्रधान उत्कृष्ट देव रहते हैं, महा उत्तम मणि की मरहे दिपते हैं, और वहा पर देव सुख भोगते हैं प्राप्ती करनी के फल का आनन्द लेते हैं जिन वचन हैं ॥२६९॥

इक कर तन सित रतन दुति, अति बल सुख जस शक्ति ।

सकल अमर मिर मुकटमणि, चित जिण पर गुण रक्ति ॥२७०॥

अर्थ—वहा पर देवों का शरीर एक हाथ का ऊचा है वहाँ महा श्वेत मणिमय है अति बल अति सुख अति यश अति शक्ति अति गुण कीर्ति अति पुण्यवान हैं और सारे देव इन्द्रदेव देवों के मिर ऊपर जैसे मुष्ट सोमता है ऐसे ही सब से ऊपर शोभा पाते हैं और अत्यन्त के गुणों में रक्त है ॥२७०॥

तस सच्ची पचिंदिया, पुरुष लिंग जिह ताय ।

अन्य कर्म उप मुक्ति के, देव अनुत्तर धाय ॥२७१॥

अथ — अनुत्तर विमान तब तस और सच्ची हैं, ५ पंचेन्द्रिय हैं पुरुष लिंग हैं और देव हैं तिनके कर्म जोड़े रह गये मुक्ति के निकट हैं कीस प्रकार से ? ५ अनुत्तर विमान के देव हैं जिन वचन है ॥२७१॥

पच विमान अनुत्तरे, पच विषय उतकिष्ट ।

पचम गति के पादुणे, पच पद चित इष्ट ॥२७२॥

अर्थ — अनुत्तर विमान श्रेष्ठ हैं, ५मी गति मुक्ति श्रेष्ठ है, ५ शब्द विषय उत्तम सुख उत्कृष्ट हैं । ५ पदे महा श्रेष्ठ हैं और मुक्ति के देने वाले हैं ५ दान मन्त्र श्रेष्ठ हैं, लज्जादान (१) करुणान्न (२) अभयदान (३) सुपात्रदान (४) शान्नान (५) यह ५ दान मुक्ति देते हैं ॥२७२॥

षड् में लघु इकतीस की, उतकिष्टी तेतीस ।

मध्य सर्व तेतीस ही, सागर कही मुनीश ॥२७३॥

अथ — पित्र्यादि ४ विमानों वाले देवों की स्थिति जघन्य ३१ सागर की और उत्कृष्ट ३३ सागर की सर्वार्थ सिद्ध के देवों की स्थिति जघन्योत्कृष्ट ३३ सागर की यह त्रिनेश्वर देवनी ने कहा है ॥२७३॥

जितने सागर आयु सुर, तारधे फुन सास ।

तितने वर्ष सहस्र गति, भूख करे प्रकाश ॥२७४॥

अर्थ — जिस ० देवों की नितनी ० आयुष्य हैं स्थिति उस हिसाब से देवगति से देवता के आहार और दवासोश्वास गिण लेणा चाहिये अगर दश हजार वर्ष की आयु हैं तो दश

श्यामोश्वास आता है अगर भूप लगे लौं धप मे लगे, और ७
की होने तो हजार पक्ष वितने पाद श्यामोश्वास आरे अगर
धप विते तो अहार की इच्छा जागेगी आहार लेव भूप लगे रोमाह
वासना पुरी करे यह हिमाय चतुराह से निरातोगे तो अच्छा होगा

॥२७५॥

मध्य गिरद यासठ खिते, ता बहु दिशे त्रिकोण ।

चौ दूरे फुन गिरद इम, धुर खित आमठ होण ॥२७५॥

अर्थ — ऊरध लोक देवा की त्रिसठ भूमिका यदि है, उत्रासश्च
भूमिका मे से त्रिषका विमान गिरदगोल है मर्याते जो जनका और
उसके चारों दिशा एक २ त्रिकोण के विमान हैं और असख्याते योजन
के ऊनसे असख्याते योजन परे एक २ चतुकोणे विमान हैं फिर ऊनसे
धरे एक २ गिरद है (गोल) उताते फिर परे गिरद है ३ त्रिकोणे ४
चतुकोणे विमान हैं (जैसे सुर्याप्रदेव के विमानों का उकरा है ऐसे ही
समझना चाहिये) इस प्रकार प्रथम भूमि एक २ दिशा त्रिसठ त्रिसठ
विमान है ॥२७५॥

खित खित इक इक घटत इम, अ त अनुत्तर एक ।

पक्ति बध विमान इम, बहु दिस अमर अनेक ॥२७६॥

अर्थ — एक २ भूमि घटति २ अतम अनुत्तर देव भूमि एक है
त्रिजयादिक विमान ३ त्रिकोणे हैं इस प्रकार से पक्ति बध विमान ।
चार दिशा असख्याते देव वसते है सत्य वचन ॥२७६॥

धुर विचलौ नर खेत मित, सम दिस उड शुभ नाम ।

अतिम जबू दीग सम, सरार्थ मिद्ध ठाम ॥२७७॥

अथ — प्रथम भूमि के निचका विमान (४५) लाख योजन का लम्बा चौड़ा हैं ऊम्के चौगिरदा (४ चारों तफ) परधि त्रि ३ गुणा बुद्ध ऊपर हैं मनुष्य क्षेत्र दाई द्वीप सम उसके तुल्य हैं और उसके उपर सम निश हैं उम विमान का नाम अह है सबसे प्रेमठमी रतम भूमि सरार्थ सिद्ध की हैं जवूद्वीप प्रमाण दाई द्वीप समक्षेत्र हैं सत्य वचन १२७५॥

पक्ति वधी सुर्व ही, योजन अगनित मान ।

तिम ही ताके अन्तर, निनवर वचन प्रमान ॥२७८॥

अर्थ — पक्ति वंध विमान सार ७८१२ हैं वह विमान असर्याते योजनों के लम्बे छोडे हैं, और निनों के अन्तरे भी असर्याते योजन के हैं यह वचन निनदेन के हैं ॥२७८॥

पुष्प विकीर्ण और सब, सरुष असरुष प्रमाण ।

दीपे शेष खित ऊपरे, विरष वर्ण सठान ॥२७९॥

अर्थ — (६३) विमान निचले संख्याने प्रमाण (७८१२) हैं और पक्ति वंध असर्याते प्रमान इनसे छोटे विमानों की विमान पुष्प रिर्ण संज्ञा हैं (८४, ८६, १४६) यह विमान कैइर सर्याते योजनों के हैं, कैइ असर्याते योजनों के हैं, और कैइ छोडे २ अन्तरे हैं कैइ बडे २ अन्तरे हैं और निनों के नाना प्रकार के वर्ण हैं । और अनेक प्रकार के सठान है ॥२७९॥

चौरासी लाख सहस युत, सतानने तेईस ।

सुर विमान खित पामठे, देव कहे जगदीश ॥२८०॥

अर्थ — (८४, ८७, २३) सर्व विमान हैं त्रेसठ भूमि का के ऊपर

हैं विमान वहाँ पर दिव्यतः आनन्द भोगते हैं । जिन वचन सत्य हैं
॥२८०॥

सात बीस सय धुर घरा, अन्तिम सय इक्कीस ।

भूमिमान मिल पिंड सब, योजन सय बत्तीस ॥२८१॥

अर्थ—पहली भूमि का मोटी (२७००) योजन की है दो फल्पों के विमान उसके ऊपर हैं । और ऊचे (४००) योजन के हैं फिर ऊपर श्री फल्पों की मोटी भूमि (२६००) योजन की है, उसके ऊपर विमान (६००) योजन के ऊचे हैं ऐसे विमान भूमि का दोनों मिल (३२००) योजन का पिंड है, ऐसे ही दूसरे २ फल्प (३२००) योजन के हुवे । ऐसे ही अत तक गिने तो ओढक अनुत्तर विमान ऊचे (११००) योजन की धरती (२१००) योजन की सब भूमि यह सर्व मिल करके (३२००) योजन की हुई, यह ५ अनुत्तर विमान का वर्णन है ॥२८१॥

आयु वर्ष वसु ते चतु कोडि पुंर लग कोई ।

पाल महावृत वैश शृत, सुर विमान पद हीई ॥२८२॥

सौ ओडक नर देव कै, सात आठ भव पाय ।

केवल दसण ज्ञान, छहि छये शिष पुंर जाय ॥२८३॥

अर्थ—८ वर्ष से ऊपरत आयुष्य वाला मनुष्य, एक कोड पूव लग साधु श्रुति पाले अथवा आरक श्रुति पाजे और आराधिक विमानी देव होवे वह जीव उत्कृष्ट ७ भव देवता के करे और मनुष्य के ८ भव लेकर केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त कर सिद्ध मुक्ति में अजर अमर पद पावे जन्म मरण से रहित होजावे ॥२८२-२८३॥

कल्पार्तित सुभक्ति चिन्ने प्रेक्षु सोवे निज टाम ।

ध्यावे से वे गुण सिंभर, मोल है अभिराम ॥२८४॥

अर्थ — १२ देवलोक से परे सब कल्पातीत देव कहे जाते हैं
यहाँमिद पद है वह देव वहा से ही भगवत को यज्ञा स्तुति सेवा
भक्ति करे गुण गान मन मन ध्यान से तदा रच रहने है ॥२८४॥

चार जात के कन्य लग, प्राप करे जिन मक्ति ।

वन्दन पूजन धृति करण, कथा सुने चित्त रक्त ॥२७५॥

चहुँ विध सुन ते होत हैं, बल धत्री मरुतु ।

सुरे विमान जिनराध हरि, तीर्थकर बचतज ॥२८६॥

अर्थ — चार प्रकार के देवता देगी यहा पर भगवत को यज्ञा
नमस्कार के लिये आते हैं । १० देवलोक से आगे नहीं भक्ति करते हैं
स्तुति करे कथा सुने एक चित्त से और मातलोक में आने वानों को
कल्प कहते हैं । १२-१३-१०-१६-१७ भगवत तब भगवत के दर्शन
को आते हैं देवता गण ॥२८५॥ और आगे (१) भजनपति (२) ध्यान
कर्मतर (३) ज्योतिषि (४) विमानी यह चारों ही जाति के देवता निकले
कर बलदेव बने धत्रीपति बने, केवली बने, वासुदेव बने, तीर्थकर
ऐसे २ जीव देवलोक से आकर यह पदवी प्राप्त करते हैं । यह वचन
जिनेन्द्र देव भगवत के है सत्य है ॥२८६॥

परमार्थभी किल धिपी, नहि पाये पद यह ।

तिर्य कर हरि ईश बरा, चक्रि केरखि लह ॥२८७॥

अर्थ — २५ परमा धर्म और तीन किल धिपी यह अकार १२
जाति के देवता कोई भी पदवी नहीं प्राप्ती करते जिने वचन ॥२८७॥

विह्व लिंगा ते द्य गति ताते तीन लिंग ।

नही नपु सक सुर गति विपे, जिन वचखे नहि विंग ॥२८८

अर्थ — ३ लिंग वाले जीव देव गति में पावें नपु सक लिंग का जीव देव गति में नहीं हैं, ३ तीन लिंग देव गति से बाहर हैं देवग में तो देवी और देवता यह दो ही लिंग हैं जिन वचन हैं ॥२८८॥

त्रय लिंगी आराधकी, पुरुष लिंग ही पाय ।

बिना आराधक लिंग विग, सुर गति में जिप धाय ॥२८९॥

अर्थ — देव गति में जो जीव जाता है, ३ तीन लिंगों में से निकल कर आराधिक हो देवगति में पुरुष लिंग पावे, और आराधक के बिना दोनु लिंग देव गति में हैं, यह भगवान का कथन है ॥२८९॥

जिन वचने अनुरक्ती चित्त पाले तिम आचार ।

निमल अ स करोश ते, पार करे समार ॥२९०॥

अर्थ — जो जीव जिनेद्र देव के वचनों में अनुत्तर चित्त रहे तं तन मन से धर्म करे वृत्ति सुद्ध पाले निर्मल चित्त रखे और निरकनेस रहे वह जीव संसार को परतपार कर सकता है ॥ चार गति बंद का मुक्ति जावेगा सत्य वचन हैं ॥२९०॥

बहु आगम विज्ञान घर, लहि समाधि गुण गेह ।

आराधिकपद पाय के, ऊ वी गति को लेह ॥२९१॥

अर्थ — बहुते सिद्धांत शास्त्रों का जाण पना हो और ऐसा ज्ञान धारी समाधि पावे और गुण को महन करने वालो हो दोष रहित शुद्ध आचार पाले और आराधिक पद प्राप्त करके चार गतियों के चक समाप्त कर स्वर्ग से निरल ऊ च गति मोक्ष में जावे ॥२९१॥

मर्षा आराधिक इक तथा, मर्षा विराधिक हैन ।

देश आराधि विराधि की, चतु विघ ताता वैन ॥२६२॥

अर्थ—आराधिक विराधिक के चार भेद कहे हैं भगवत ने एक मर्षा आराधिक १-एक मर्षा विराधिक २-एक देश आराधिक ३-एक देश विराधिक ४-यह चार भेद ह ज्ञान सूत्र म ६ पट्ट म अग म द्वा द्वाप्य तृप्त दृष्टान्त जहा पर चार प्रकार की वायु चलती ह ॥२६२॥

सहै परिपह क्षमा कर चतु एते सुख होइ ।

तथा गाही पर जिंग के मर्षाऽऽधिक सोई ॥२६३॥

अर्थ—जो जीव क्षमा धारके सय परिपह सहेन करते हैं और साध्वि श्रावक श्राधिका जी के शिष्यों के कठन शब्दादिक सम प्रकार से सहेन करते हैं ऐस ही गृहस्थी के अथ लिंगी के दुष्ट वचन ताडना तर्जना वत् बंधादिक सहेन करते हैं और निर्य्यादि का परिपह महेन करते हैं देवता सन्तो आदि से चलायेमान न होवे, यह जीव मधाराधिक कहै है ॥ १ साधु सात्री की वचा रूपी वायु ॥२ श्रावक श्राधिकों की वचा रूपी वायु ॥३ सातन गृहस्थी के वचन रूपी वायु ४ अन्य लिंगी साधुओं की वचन रूपी वायु को सहैन करें । ऐस ही उत्तम दय दब्बा नाम के वृक्ष कुमजाते नहीं हैं पूर्व-१-पश्चिम २-उत्तर ३-दक्षिण ४ की हवा चलने से घत्राने नहीं ऐस ही साधु सात्री सन की सहे तो आराधिक होगा ॥२६३॥

सहै चतुर विघ सघ के, औरन के न सहैय ।

देश विराधिक सो भए, दिनवर वचन कहैय ॥२६४॥

अर्थ—चार प्रकार धर्म मंत्रालि के परिपह सहेन करते और

औरों के न सहन करे तो वह मायु जीव दान विराधिक है ॥२६६॥

और सबन के सहित है, सगो सहे न जेय ।

देंसा अराधिक दान दधा, भेद तिम तेय ॥२६५॥

अर्थ — और गृहस्त्री अथवा निगा आदिक सर्व जीवों के परिपेह सहन करे चतुरविध श्रीसंघ के परिपेह नहीं सहन करता है वह जीव देशाधिक और सर्व विराधिक हैं मुक्ति नहीं ॥२६५॥

निज मति पर मति सबन के, सहन बोई मोई ।

सर्व विराधिक सो भए, पृथ हीन गुण जोई ॥२६६॥

अर्थ — आपने धर्म जैन की निगा करे औरगुण बाद बोले और परमत मार्ग से प्रतिकूल बने औरगुण बाद बोले सर्व लोगों से और मन पर बोध कपाय करे किसी की भी नहीं सहन करे वह जीव सर्व विराधिक कहा है ॥२६६॥

राग सहित आराधकी, दान विमानी हाई ।

पदवी पच रिपे यति, वीतराग शिब सोई ॥२६७॥

अर्थ — सराग समयी आराधीक निश्चय ही ह्राव उत्पन्न विमानी के देवताओं में दान पद पाव और पचम पदवी रिपय पदवी पाव साधु और वीतराग समय पालन करने से मुक्ति गमान होवे, जन्म मरण के दुर्गों से रहित होकर अमर पद पावे, सराग समय से आराधक होवे और वीतराग समय से मुक्ती पावे, तिन बचन है ॥२६७॥

बाल वही उत्तरत अदि, तप मानी वीरीय ।

बोधी वही निमित्त की अमर क्षांत में थीय ॥२६८॥

अप — अज्ञानी पक्षी नाना प्रकार के रूष्ट सहेन करे, भूख
 तृषादि सहेन तपन गरमी सर्नी महान करे शरीर को दमे ऐमे तपी
 हानी कहाते है परन्तु जीव अजीव पदार्थ का जान पना रहित है
 और उत्कृष्टि अथि अपने आपने को बोलत है वागेवार कोप उठे
 ऐमे तपी है और तप के अभिमानो अनमनस्य में से परे ही जावे
 और क्रोध के माथ तपस्या करे ज्योनिपी यरप लाम अला भवतावे
 ऐसे जी करणी करके देव गति मे जाव पर असुर जुमार मे उपन
 होवे और उच गति मे नहीं जावगा ॥६८॥

अरिहता अरु धर्म का, गुरु उपाध्याय क्रिया ।

निंदा चहु विंघ मघ मी, सुर मिल विपिया थीष ॥२६६॥

अर्थ — जो जीव संसार में अधिक दुःख पाते हैं उनका कारण
 यह है कि पापी देव मिल विपि उन्हा म जाकर पैना होते हैं, उन्हा
 में क्यों उन्नत होते हैं ? अरिहत देवों की अरिहत धर्म की (१०)
 यति धम की १० श्रावक धर्म की निगा करे और सब चारा संघ की
 जो निगा करेगा वह जीव मिल विपि देवताआ में जावे पैदा होता
 है, अत्रण बाद बोले गेटा वचन कहे हम कारण से किलविपि देव
 बने ॥२६६॥

विदया हास बतूइले, मरे चरलगा काम ।

इन्द्र जाले इम दोष धर, कर्षी गुरु ठाम ॥३००॥

अर्थ — चार प्रकार की कथा रती कथा (१) भोजन कथा (२)
 देश कथा (३) रात्रि कथा (४) करे, विकार सहित हासो बतूइले चप
 लता इन्द्र जाल के साथ जोडु दुणा मंत्र तत्र आदि करे दोषादि सक्ति

करणी के फल कर्पणी देव में उत्पन्न होवे और फिर ममार में भूमि
करेगा ॥३००॥

मत्र यत्र तत्रैषधि, सुख रम ऋद्धि हेत ।

इत्यादिक दोष सहित, अभियोगी गति लेत ॥३०१॥

अर्थ—मत्र सायन करे, यत्र तिर्य करे, तत्र द्रव्य मिलान कं
औषधि से वशीकरण मोहनदिनारण मंत्रे मिलाने ऐसे दोषो सहित
करणी करे, सुख साता स्नाते ऋद्धि प्राप्त रहेन सदेन रस के लिये
आपने छदे है परछन्दा त्यागे पर छदे चो नही, वह जीव ऐसे जीव
अभियोगी देव पने उत्पन्न होवे जन्म ले नोंकरों या नोंकर घनेगा
॥३०१॥

विष भक्षण आयुद्ध करी, जल अग्नि इत्यादि ।

अनाचार सेरी मरे, बधे जन्म मरणा द ॥३०२॥

अर्थ—विष खाकर मरे, शस्त्र मार मरे, पाणी क्षुप म डूब मरे
अग्नि में जल कर मरे, इत्यादिक बुरी प्रकार की मृत्यु से मरे अति
चार सेवन मरे, अकरण योग नहीं, करणी चाहिय उसे भी करके
मरे, ऐसी तसी हरे मरता रहे तो संसार में जन्म मरण करते
बहुत रुलते रहेगे ॥३०२॥

तत्र समय करणी करे, विषय सुख चाहि ।

धर्म हीन धर्मात्तरो, दु ख लई मगमाहि ॥३०३॥

अर्थ—जो जीव तप जप समय करणी करे, और अन्तस
करण में शस्त्रादि ५ प्रकार के विषय सुख भोगन कि इच्छा से
नियानादि करे तो शुभ गति प्राप्ती करना कठिन है, धर्म सं रहत रहें

धर्म का अंतराय पावें संसार भमे ॥३०३॥

किए नियाने कुछ फल, बहु करणी को नाप ।
 तन घमोलरु मूढ़ जिम, बेचे लघु घन पाप ॥३०४॥

अर्थ —अति कठिन तप क्रिया करणि करे जिसका अधिक फल
 वे और उस तप से इत्यादि की पदवी प्राप्त करता हैं महाश्रुति
 ने भी पासके घड़ी आयुष पावे ऐसी करणि से बहुतसी पदवी श्रद्धि
 पासके परन्तु राग भोग रूपादि इच्छा के वास नियाना कर थोड़ी
 कीमत में महाकरणी घेचदी नहीं तो जिसमें महा लाम सुख मिलता
 मगर जैसे जहौवरी ने फोड़ी बटे करोड़ों की जवाहरत घेचदी ऐसे ही
 निदान करने वाला होता है ॥३०४॥

विषय कपाय विकार बस, फोड़े लम्बि जो कोड ।

प्रायश्चित्त दंड लिए बिना, नहीं अराधिक होइ ॥३०५॥

अर्थ —जो माधु श्रावक तपसी जप तप के प्रभाव से फोड़े
 लम्बि होती रू में से अगर विषय भोगों के वास और कपाय नर
 नो कपायों के बस और राग द्वेष विकारों के बस कोई लम्बि फोड़े
 तो आराधिक नहीं होगा बिना प्रायश्चित्त लिये नित यचन सत्य है
 ॥३०५॥

तपस्या करणी बहु करे, काम लालसा तीय ।

गणका देवी माहि देवी माही गति, बहुसुर भोग करीय ॥३०६॥

अर्थ —जो कोई स्त्री तप जप नेमादि करणी करें और चित्त में
 लालसा विषय विकार राग रग काम भोगों की हैं मिलते नहीं चाह
 वाहोत हैं वह स्त्री देवगति में जाके, गणका देवी वैश्या बनेगी उसे
 फिर देव भोगेंगे ॥३०६॥

जिह् इच्छा सतान की, बाल गौभाल खिडाय ।

बहु पुत्तिया जिम सो भवे, करणी का फल खाए ॥३०७॥

अर्थ—जो स्त्री कोई तपस्यादि करणी करे और दिल में इच्छा संतान की है और लोगों के बालकों को खिलावे रिमावे उनके साथ बहुत प्यार करे तो वह तपस्या करे जोर से देव गति में जावे वहा पर जाके बहुत पुत्तिया नाम की देवी बनेगी वैत्रिय लधि से अनेक बालकों के रूप बनावे और लड़के लड़कीया और देवों को नाटक दिखावे ॥३०७॥

कोप तपी आयुष पणे, माने वाहन होई ।

कपटे समा निरादरी, लोभ श्रद्धि गेई ॥३०८॥

अर्थ—क्रोध के साथ तपस्या करे, तो देव गति में जाके शस्त्र पने देव होवे जैसे मुद्गलान चक्र श्रीकृष्ण महाराज पास था, मुद्गलान चक्रमान के साथ तपस्या करे तो देव गति में जाके वाहन बने, गज घोडादि इन्द्र महाराज के सवारी देने के लिये हाथी घोडा बने जैसे ऐरावत (हाथी बनदेवत) गज बनाया तापस का जीव सीर खाने वाला कार्तिक शेठ का जीव इन्द्र बना सवारी लेने वाला दो सागर जो अज्ञान पने से तप करते हैं वम पशु देव बनेगे और जो कपट के साथ तपस्या करते हैं उनका सभा में निरादरी होती है और समान नहीं पाते हैं । और अपने जो लोभ लालच के साथ जो तपस्या करता है । वह देवगति में देव बने उनको श्रद्धि के मालिक बनेगे नहीं, यहा पर भी वहा पर भी देव न बनेगे बहुत ही थोडी श्रद्धि पावेंगे आके मातलोक में सत्य है वचन अरिहंत दयजी के ॥३०८॥

मुख फिर भडे हमे, तप करणी के साथ ।

भड देव मं उपज क, बधे कर्म आनाथ ॥३०६॥

अर्थ—मुख से बुरा बोले गाली देवें उचा नीचा हंसे हासी
मसकरी करे अप शब्द (गंदे) मखोल करे दूसरे को भंडे और साथ
ही तपस्या भी करे इसी प्रकार की करणी करने वाला भाड देवों की
देव गति जापावे फिर पर दोष बहुत कमावे और कर्म चिकने घने
बाधे और अनाथादि की योनि पावे, दुःख बहुत भोगने पड़ेंगे ॥३०६॥
इत्यादिक दोषे करी, नही आराधिक होई ।

दोष रहित मुनि अनुष्ठतां, आराधिक पद सोई ॥३१०॥

अर्थ—ऐसे दोषों को लेकर और भी अनेक विधि के दोष हैं
और जो दोष सहित तप १ जप २ नेम ३ वृत ४ दय ५ पौषद ६ क्रोध
पच्चक्रवाण ७ वृत ८ महाव्रत ९ इनको बिना नेम द्वेष से निग्रा
करके औरा के अवगुण लेके पाल रहा हैं ऐसे जीव आराधिक नहीं
होते हैं और जो निर्दाष साधु श्रावक के ५ महाभ्रत पालन करते हैं
साधु के और अनुमत पालन करते हैं श्रावक के दोष रहित ऐसे जीव
आराधिक होते हैं ॥३१०॥

आराधिक नर भव लहैं, श्रद्धि धर्म सयुक्ति ।

सात आठ भव ओडके, पावे अत्रिचल मुक्ति ॥३११॥

अर्थ—आराधिक देव काल करके मनुष्य गति में आवे और
श्रद्धि धन धान्य धर्म दान शील प्रेमादि सहित उच्चतम उंच पद मनुष्य
होवे ऐसे ७ भव देवता के करे और आठ भव मनुष्य के करे संसार
के मुख भोगकर ८ पालन करके कैवल्य ज्ञान कैवल्य

दर्शन पाकर त्रयय पद शिव का पावंगे ॥३११॥

भक्ति करें भगवन्त की, दसन वंत्न गाय ।

चार जात कनया लगे, लेवे प्रभु त्रिग आय ॥३१२॥

अर्थ—१२ कल्प देवसोक से चार जाति के देव भगवत की भक्ति करते हैं और दर्शन करें नमस्कार करे गुण प्राप्त कीर्ति गावें भगवत पास (समधि) आवें सेवा भक्ति करें (और आगे ॥३१२॥

नाटक गीत रचाय, सुष वाणी लीनराज की

नर मय शुभकुल पाप, धर्म सहित सर्गत्त लहै ॥३१३॥

अर्थ—भगवान की भक्ति देव करें, नाटक नृत्य गायन करते हैं अरु ३२ प्रकार के नाटक पाव गीत गावे भगवत का यश बहुत करें अनेक जर्मों के सिद्धि कर्मों की निर्नरा करते हैं कर्म तपावें ऐसी भक्ति का फल परलोक में मनुष्य ज म पावें उत्तम पुत्र में जावें धर्म समुक्त श्रद्धि सिद्धि सपदा पावें ॥३१३॥

उत्तम सुर वर सोय, जो जिन धर्मी भक्त चित्त ।

जिन भग द्वेषी जोइ मय सागर में सा भूमै ॥३१४॥

अर्थ—जो उत्तम प्रधान देव हैं, यह देव भगवत देवाधिदेव की भक्ति चित्त से करे और जिन धर्म का रागी हो जिन मार्ग दया सत्यशील संतोपादिक गुणालकृत का प्रेमी प्यारा हो, सो देव चार गति संसार रूप में भगवत करना पड़े मुक्ति नन्दिक हो यह वचन जिन के सत्य है ॥३१४॥

ऊच नीच बहु भात, रचना कहीए देवकी ।

सुनो भविक चित्त शान्त, धर्म साध शुभ गति लहो ॥३१५॥

अथ —सुर देवा की मीड़ा कहतूल रचना ऊच नीच बहुत प्रकार से कही है । सोहे भव्य जीनो तुम सुनो चित्त लाकर के सोचो जो कोद धर्म दया दिसा घेगा वह जीव उत्तम पदवी को लेवा है ॥३१५॥

कबहुं सतोगुण ठाण, कबहु रजोगुण में रमें ।

कबहु तमोगुण आण, करै कर्म बहु भाव के ॥३१६॥

अर्थ —कभी किसीमें मे वयादिक सतोगुण मे भरवते हैं । कभी किसीमें मय व्यवहार रचना रजोगुण में रमते हैं कभी किसीमें मय क्रोधान्ति युद्ध क्रिया शास्त्र चलाने तमोगुण मे बहुत सुश रहते हैं इस प्रकार के शुभाशुभ कर्म करते रहते हैं ॥३१६॥

कबहु तीय साय मलोल करै, कबहु नृत गद तिनोद चहै ।

कबहु वाहिराज समा विगसे, कबहुं रिषु सोरण भूमिदहै ॥

प्रभु साय सपूरण भक्ति करी जोर सु छन्द उचार कहे ।

मिल मित्र हसे हित रीत रमें, इमर्मात दिवो निश मोदलहै ॥३१७॥

अर्थ —देवता देवलोक में किसी समय अपनी ललानों के साथ हास विलास करते काम भोगों में रम जावें हैं और कभी २ नृत नाचने में नाटक करने में गीत गाने में यज्ञ यजाने, मे इत्यादि श्रीडा करते में आनन्द मानते हैं, कभीयन समा में सिंहासन ऊपर तिष्ठ बैठ बैठ मोके बहुत सुश हंसते हैं कभी शत्रु के साथ युद्ध भूमि पर युद्ध करते हैं और गाना प्रकार के परहरण चोरी करे कैदक रम रद्र रूप दिखते रिष भरा क्रोध करे ऐसे २ भी देव गति में देवता होते हैं, चोरी आदि करने वाले, कभी भक्ति रूप भगवत की भक्ति करते हैं । स्तुति महिमा करते हैं अरु अनेक प्रकार के खौन छन्द श्लोक

काव्य मुनावे कभी थापन न मित्र मित्रों मिने हसैं रगें स्नेह करे
 वहुत ऐसे आपस में हर्ष मनाव निग वचन है ॥३१७॥

कितहु नट हीकर नाचत है, कितहु धरजत्र वस्त्रावत है ।
 कितहु हय रूप करी दिनके चपला गतिवेग जनावत है ॥
 गज रूप करी गरजाट करै, सिंहनाद करी हरि आवत है ।
 फणिवार फु कारकर वरहि, बहुमांत कि नाच दिखावत है ॥३१८॥

अर्थ — कित्सी जगह पर देवते नाटक रूप करके नाटक कर
 नाचते हैं कहि पर अनेक प्रकार के वस्त्र पहनाते हैं, कहि पर घोड़े
 का रूप धर वहुत शीघ्र चलते दौबडाते, कहि पर हाथी का रूप बना
 कर गजते हैं कही पर शेर का रूप करके समुद्रन आते हैं और कहि
 कहि पर तुरंग बुरग गज गोमृगादि रूप धार कर धौरो को डराने
 कहि पर साप काल नाग का रूप बना फु कार करता आवे, कहि पर
 मोर का रूप करे और फणिवार सापों को भेगाव फिर खुमी में आकर
 नृत करता हैं और अपनी शक्ति भी दिखाता हैं कलोल भी करता हैं,
 यह बातें सब अपने पूर्वा पुन्योदय से योग मिलता हैं ॥३१८॥

कितहु असवार बने पर के, कितहु बिन बाहण धावत है ।
 कितहु हयवार बने सुर के, कितहु हयवार चलावत है ॥
 कितहु त्रिय और चले पुरुषा कितहु रुचि श्रोत्रिय आवत है
 कितहु प्रश्नोत्तर वाद कहु सुर खेल मिद्वान्त दिखावत है ॥३१९॥

अर्थ — कहि पर देवता असवार होते हैं दुसरे देवों पर कही
 ब्रुद देवों को चढावे और अप बाहन बने, कहि पर देवों का देव खुद
 शस्त्र बनता हैं, और कहि पर आप दूसरे देवों को शस्त्र बना दूसरों

पर चलाते हैं, कहीं पर देवता देवी को देव पिछे भागते हैं, कहीं पर देवी देवता को मन तन से पिछे आती है सुरा शेर और दासी कहे आशापुरो कहीं पर देवी देवते आपस में वाद करें कहीं पर देव देव आपस में बर्बा करते हैं, कहीं पर देवी देवी आपस में प्रश्नोत्तर परती हैं, और सर्व आपस में जय परानय करते हैं, परन्तु अपने २ सिद्धान्त मुनाते हैं ॥३१६॥

कितहु लालना सुविनंत भई, विय के पग शीश छुदावत हैं ।

कितहु रिसवार गुमान भरी, विय आतुर होई मनावत हैं ॥

कितहु लडके विय खेजत हैं हयें निपे सुसकावत हैं ।

हमधी ननु भात कलोल करे, रचणा गुणवत सुनावत हैं ॥३२०

कभी तो देवी आपने देव इन्द्र के पगों में विनय से शिर देती हैं अरु कभी मिठे २ विनय से शब्द धोलती हैं कहती हैं हे स्वामी आप मेरे पति देव है । और तन मन से मान भक्ति भी बहुत परती हैं वार २ पति के चरणों के ऊपर आपना शिर रखती हैं इन्द्र महाराज को मोह लेती हैं कभी आपना रूप योवन लावण्य गुण चतुरण्ड दिखाती हैं फिर इन्द्र आनंद मानता है और कभी २ देवी अभिमान में आजाती हैं तो स्वामी को बड़े फटोर बचन कह रूस जाती हैं फिर इन्द्र महाराज के साथ धोलती भी नहीं गुसे में रहती हैं फिर इन्द्र महाराज उसके बिना दुग्गी हो जाते हैं और कामातुर हो पानों में सिर दे इन्द्र आपनी देवी को मनाने के लिये अरु कुसामदे बचन बालें लाल पाल कर उसे मानाते हैं । उसका विनय से गुमा दुर करते हैं, कहीं पर आपस में देव देवीया रत्न मिल क्रीडा करते हैं घटुन

सुशी मनाते हैं, और आपम में नयन विलाप विषय करे मुनो मुन
 राते हैं इत्यादिक अनेक प्रकार के कलोल करें ऐसी दय रचना गुण
 जन सुनाते हैं ॥३२०॥

कितहु परखे छल सोमुनि को, घर रूप पिशाच डरावतु है
 कबहु कर जोर लगे चरणी, विध सो अपराध खिमावतु है
 अति रीकू घरी सम सेवकु मी मुनि के गुण ग्राम दिपावतु है
 कबहु घर औघ लखे तपमी निज ठाम नमे गुण गावतु है ॥

अर्थ — कहिं पर देखते ऋषिद्वर मुनि महाराज की मृत्यु
 दृढता देखने के लिये परिपहा देते हैं कारण हेतु के श्रावक प्र
 हेतु छल कपट करते हैं ३ रूप से परिपाह लेते एक तो देव रूप
 यज्ञ भूत पिशाचादि रूप बनावे दूसरा सर्प नहुल मुसक दास वि
 शिर चित्ता विभाग वाग रिद्ध नाग हाथी और जरिने जात्यगदि
 धनारों, तीसरा खड्ग नेजा माला त्रिशूल तीर वरिच्छी फणु अ
 लेखर कोइ रुड मु ड मुख रुद्र रम रूप निंद्य आके डरावे, और
 के है— साधु अगर तु धर्म नहीं छोड़ेगा तो तुजे मारुगा, तो है स
 धर्म में दृढ रहना भय न खाना, तो सम्यक् दृष्टी देख विचारे यह स
 दृढ है धन है । तो वह देव अति प्रसन्न हो अपना अपराध, क्षम
 क्षमाते है हाथ जोड़ धरना करते हैं और साधु मुनिराज के चरणों
 ऊपर अपना सिर धरते हैं स्तुति भक्ति करने हैं और सेवक बन अ
 भाव धर खुश हो मुनि महात्मा के गुण दिपावें गावें देव देरी क
 पर साधु को परीक्षा करते हैं कहिं पर चरणों में पढते हैं कहिं
 मुनियो को डराते हैं, कहीं पर माफी मागते हैं, कहिं पर मुनिराज

लेना करते हैं फहिं पर सतों के गुण गाते हैं फहिं पर तपस्त्रियों के दर्शने को जाते हैं सत्य हैं ॥३२१॥

सुर सगम तीर्थ थान कहु ऋषि ज्ञान जगै निर्वाण समय ।
 कितहु तिथि अष्टम चौदस पूर्णम् मास अमावस पर्वणमें ॥
 नृत गीत ठठे भट युद्ध मचे मत वाद जगै कितहु मग भं ।
 निन जन्म महोच्चवि मेरु नगे वर दीप नदीश्वर माहि रमें ॥३२२

अथ — देवताओं के इकठे होने का समय बताने हैं सारे देव धाने वाले किस समय पर आते हैं, एक तो जिस समय किसी महात्मा को केवल ज्ञान होता है तो वह देव केवल कामोद्भव करने के लिये आते हैं, और दूसरे निर्वाण के समय पर भी आते हैं, तीसरे अष्टमी के दिन चोथे १४ के दिन, पचमे पूर्णमासी के दिन और छठे अमावस्या के दिन सातमें कोइ पत्र के दिन आते हैं । आठमें अरिहत् देव जी के समुद्र नाटक गीत नाच धाजरादि के बचाने के लिये आते हैं, और नवमे कोइ महा संप्राम युद्ध होता होवे तो देव देखने के लिए आते हैं, फहिं पर मत भेद याद विवाद होता होवे तो भी उसके हार निजत देखने सुनने के लिये भी आते हैं देवता दशामें विनेन्द्रदेव के जन्म उत्सव करने के लिये देवता देव इन्द्र मेरु पर्वत ऊपर आते हैं ११-१२-१३-१४ मे पाच बह्याणों के मोह छत्र करने के लिये आते हैं । १५ मं प्रवान नदीश्वर द्वीप में आके ८ दिन का महा उत्सव मनाते हैं ॥३२०॥

जिनरान महोच्चवि माहि करै, पति के उपजे घर बादल की ।
 वर्षा शुभ गघ मई जल की, फुल २ सुगन्ध मई

कलघौत मणी रज तो तम की पट भूषण की मुक्ताफल की ।
गुर दुःखि नादकरे हितसो, दमही दिम माहि प्रमा भलकी ॥३२३॥

अर्थ — श्री विदेवर देवों के महोदय महिमा गुर देवता करते हैं, और आपने सने देव इन्द्र के उत्तपात (पैंग होने) का महोदय भी करते हैं लेकिन सु दर मुगधी घागे वादत करने रचना रचके अनेक प्रकार की वर्षा चर्पाते हैं पानी भी मुगधी धारा होता है — जैसे गुलाब ईलायची मोतिया करणादि फल फूलादि की मुगधिय पाच घण सहित महा मुगधी वाले प्रधान घृष्ट्यों के पनों की सुवर्ण मोरों की मणि की रूपे की वस्त्रों की अमण भूषणों की उरामोस्त मोतीयों की ऐसे अनेक प्रकार से वर्षा करते हैं देवता और साथ ही देव दुःखि बनाते हैं अति प्रीति के साथ मोहदय भी करते हैं देव देवीयां और उनके शरीर अभर्णादिना प्रकारा भी वदोत दर्शा ही दिसा प्रमा पैल जाती हैं निममें ७ मर्द हैं सु दर रस १ शिंगार रस २ हास रस ३ रानरस ४ कामरस ५ वानरस ६ निहारस ७ इस प्रकार से देवता आपस में धर्म की महिमा करते हैं, यह वचन जिनेन्द्र देव का है ॥३२३॥

कितहु पर औपध गध मई, कर चूर्ण देव उढारत हैं ।

कितहु पर रत्न मई करछा लिय उत्तम धुप धूखावत हैं ॥

कितहु पर गेद लई पिध सो नम माहि सुखेल दिखावत है ।

कितहु गुर घुन्द वणे हित सो जयकार सु शब्द बुलावत हैं ॥३२४॥

अर्थ — कहि पर देव देविया बहुत वडिया औपधि को चूर्ण की तरह पीस अकारा में उड़ा देते हैं कहि पर वणे कीमत के रत्नों

हाथि घना कर उममें उत्तम सुगन्ध धूप धूपाकर सारे फेरने हैं ।
 कहि पर देव देविना आपस में प्रदान गैद लेकर सम सेन
 हैं और कैसी शीघ्र गति से गैद ले फौरन प्रासाद में बैठ
 हैं फिर आपस में चिलाते भङ्गा भङ्ग पङ्क लेते हैं कहि पर
 सारे देव देविना मिलकर सर्व आपस में ऊचे स्वर से जय जय
 शब्द बुलाते हैं स्तुतिगुण प्राप्त करते हैं भगवत ॥३२४॥

तीर्थ नीर सुद्ध ग भरी इरु खीर समुद्र सुचावत है ।
 लेला निमला जल गघ मई, प्रभु मजन हेत अनावत है ॥
 औपत्र मेरु गिरि मिरररो वर चन्दन आदि मगारत है ।
 वरुण गुप्पर सुगन्ध मई, वन चन्दन आनि सुन्यावत है ॥३२५॥

अथ — एक एक देवते मगध वरदाम विभासादिक तीर्थों से पानी
 डु म वरतन भर कर लाते हैं और कैइरु देवता नार सार (समुद्र)
 से पानी फल से भर कर ल्याते हैं और कैइरु देवता निपु आनि
 वन ननीया का जल प्रति निमल महा सुगन्धी वाण अपने स्वामि
 स्नान कराने के धारने पानी ल्याते हैं अपने आने लेते हैं औरा
 भी मागते हैं और प्रधान औपधि सुमेरु पर्वत के ऊपर पद्म आदि
 नों से ल्याते हैं, बडीया यावना गोसी चन्दन लङ्गने के लिये लाने
 कैइरु देव बहोत रंगो वाले सुगन्धी वाण लाने हैं सुन्दर नदन
 आदि से माला और सुगन्धे वाण विष्णु आदि के लिये और भी
 बहोत सामी लाते हैं ॥३२५॥

मरदग सु भालरुर भेरि तुरी नर निन वटन शख्य की ।
 घण घोर, महा रिय दु दुभि ही वग्नर मई पुत दघय की ।

रस हास सिंगार सुवीर सजे रघण रस अद्भुत लक्ष्य की
अति मोदत देव महोद्यम हैं प्रभु भक्ति करे शुभ पक्ष की ॥३१॥

अर्थ—मृदङ्ग (तबला) धजारों भालर भेरी तुरी रसनाई इत्यदि बानरों की धूनी होवे नरसिंह घटे शरत बनारों उनके शब्दा ध्वनि दु दुभि नोयत नगारे छैण डोलक याजै उनका महा शब्द होवे या साथ ही उनके अनेक देवी देवताओं के जयकार रूप ध्वनि उषरण की जाती थी जहा पर राग रग होते हैं वहा पर यहा का अक्षय ही होते हैं हास्य रस सिंगार रस का नरम वीर रस काम रस जिह्न रस इस प्रकार के कार्यों की अधिक हैं। ऐसे रसों का वहा प समागम हैं जेने २ विषयों में पसकर भी फिर धर्म में तहलीन महोद्यम कर भगवत की भक्ति करते हैं ॥३०६॥

सब द्वीप समुन्द्र असख्यण मैं, लघु मध्य विषम लक्षण मई
इस योजन लाख प्रमान अय, पर जघु सुदीप सुनाम थई ॥
जगती घर बज्र मई गिरदे, चतु द्वार चतु दिग क्रांत भई।
विजये विजयत जयत तथा, अपराजित नाम सदीप लई ॥३२॥

इस भूमि पर असंख्य द्वीप समुद्र हैं सब द्वीप समुद्रों के बीच के मध्य भाग में सब से छोटा प्रमान एक लाख योजन का लम्बा चौड़ा है चारों तरफ और उसकी परद्वि चक्र चोपेरे ३१६२२७ योजन पौने ३ कोश १२८ धनुष्य १३॥ अगुल भूमेरी इस तरह से जंबू द्वीप सौमा को पाता है और इसके गिर्द एक फोट हैं वज्र का रत्न मई जिसका नाम जगती हैं। वह जगती ८ योजन की ऊंची १००० योजन की ऊँड़ी भूमि में नियो हैं और निसके चारों दिशा में चार द्वार हैं।

नाम पूर्व विनय १ दक्षिण विनयत २ पश्चिम जयन ३ उत्तर अपरा-
 नित ४ इमी नाम पर इनके स्वामी रक्तक हैं देव बड़े क्रान्ति वाले
 हैं ॥३७॥

इमदीप विषय वर मध्य विषय गिरि मेरु सुजोजन लाख तणो
 तिस पूर्व पश्चिम में विनय महाविजया जिन धर्म धणो ॥
 भरयो दिस दक्षिण उत्तर तो मम ईरवत्तो सत्र साच भणो ।
 सुर स्वा मे अणाडि दीप तणो तरु जवु सुदर्शाण वासमणो ३२८

अर्थ—इस जवु द्वीप के मध्य भाग में प्रधान पर्वतों में पर्वत
 सुमेरु पर्वत है जो के एक लाख योजन का उचा उमके उपर चूलिका
 है उस चूलिका के उपर १ महान् पर्वत है और सुमेरु पर्वत पर
 चारों धरों से सुभायमान है सत्रमे प्रथम सम भूमि पर मेरुके चारों
 तर्फ भद्रशाल वन हैं (१) फिर मेरु पर्वत के उपर जाने चारो तर्फ
 नन्दन वन हैं (२) आता है, फिर आगे उपर जाके, सुमानम वन आता
 है (३) फिर ऊपर आगे जाके मेरु के सिगर पर पडग वन मोमा पावा
 है (४) इस पडकन के मध्य भाग में मेरु पर्वत की चूलिका मोमाती
 है और मेरु पर्वत के पूव दिशा में पूव महा विदेह क्षेत्र है मेरु से
 पश्चिम तिसा में पश्चिम महा विदेह क्षेत्र है, पूव महा विदेह क्षेत्र के
 मध्य भाग में हो सीता नदी पूर्वागमनी विजय दरवाजे के निचे से
 होकर लाखण समुद्र में जा मिली और इस सीता नदी ने महा विदेह
 क्षेत्र के दो भाग कर दिये गये महा विदेह क्षेत्र के १६ विनये है नदी
 ने ८ विनय दक्षिण की तर्फ होगये है । और ८ उत्तर की तर्फ होगये
 हैं और इसी तरह से पश्चिम महा विदेह क्षेत्र भी समझ लेना चाहिये

जिसमें उन क्षेत्रों के दो भाग किये अंतो धाहनी नदी ने और बरारा पर्वत के अन्तरे में हो पश्चिम दिशा में जयंत नाम के द्वार के निचे से होकर लवण समुद्र में जा मिलती हैं, अनेक नदी लेकर पश्चिम महा विदेह क्षेत्र की भी १६ विनय हैं दो भाग नदी ने कर किये ८ विजय दक्षिण की तरफ होगये और ८ विजय उत्तर की तरफ होगये, एक २ विनय में हैं २ खंड हैं एक ० खंड में तीर्थ पर चक्रवर्त यामुदेव धल देव प्रति यामुदेव जिनेत्र देव पा धर्म साधु साध्वि धावन श्राविका समदृष्टि उत्तम पुरुष आदि २ अनेक आत्मा होगी और महा पर सदा चौथा काल होगा उच्च गति के अधिकारी हैं ५०० धनुष को औगहणा लेकर जीव निरोप हैं फोड़ पूर्ण यात्रे जीव बद्धत हैं और ५मी गति जाने वाले जीव बहोत हैं । “अथ क्षेत्रों का हिसाब है” मेरु पर्वत से दक्षिण की दिसा में विनयंति नाम का द्वार है उन द्वार की तरफ पास ही भरथ क्षेत्र है भरथ क्षेत्र पूर्व पश्चिम लवान हैं दक्षिण उत्तर चौड़ा हैं जंबूद्वीप प्रस्थान १ लाख योजन का लम्बा चौड़ा हैं निसके ८६० भाग किये जायें तो तथा तकसीम करीये तो कितने २ भाग हीसे में आयेंगे सयके १ भाग का तो भरथ क्षेत्र है, दो भाग नितना चूल हेमवत पर्वत हैं । ४ भाग का तो हेमवत क्षेत्र है । ८ भाग का तो महा हेमवत पर्वत है । १६ हिसे जितना हरिवात क्षेत्र है, ३२ भाग का निपठ पर्वत है । ६४ भाग का महा विदेह क्षेत्र है । ३२ भाग करे इतना बड़ा नीलवत पर्वत है । १६ भाग रम्यकू वास क्षेत्र है । ८ भाग जितना एक रूपी पर्वत है । ४ भाग इरावत क्षेत्र है २ भाग का शिपरी पर्वत है एक भाग नितना इरावात क्षेत्र है एक भाग ५२६

योजना और ६ कलाउ पर हैं। एक कला का हिमात्र १ योजन के १६ भाग करें तो ६ भाग का नाम छै काला हैं यह भरत क्षेत्र ५०६ योजन ६ कला का लम्बा चौड़ा ह जिसके मध्य भाग में ५० योजन का चौड़ा बेंताड़ गिरि परत हैं जोके लक्षण समुद्र की जगती कोट के साथ जा मिली हैं बेंताड़ परत और इस करके भरत क्षेत्र को दक्षिण दिशा में दक्षिणाद्ध भरत क्षेत्र हैं क्योंकि गंगा अरु सिंधु नदी ने भाग ३ कर दिये बेंताड़ परत के आग्रा भरत उत्तर की दिशा में हैं, आधा दक्षिण दिशा है जो बेंता परत से दक्षिण भरत क्षेत्र हैं मध्य खंड में २४ तिर्थ कर होते हैं १० धनुर्वर्ती होते हैं ६ नव वामुदेय होते हैं ६ बलदेव होते हैं ६ प्रतिग्राम देव होते हैं, साधु सावि भावक धाविका अनेक पुन्यवान उत्तम पुरुष होते हैं जैसे भरत क्षेत्र का कहा, वैसे ही उत्तर दिशा में इरावत क्षेत्र ममजना और उत्तर दिशा में अपराजित नाम का द्वार हैं निम्के पास इरावत क्षेत्र हैं जिसका वर्णन भरत क्षेत्र जैसा जाण लेना चाहिए। अत्र आगे महा विदेह क्षेत्र से दक्षिण दिशा की तफ निपट पर्वत हैं और की तफ नीलवत पर्वत हैं निम् निपट अरु नीलवत पर्वत में से गज दत्त निकले चार २-८ गजदत्त हैं ४ गजदत्त पर्वत मेरु साथ जा मिल गये हैं और दो गजदत्त के अतरे दक्षिण दिशा देव कुरुक्षेत्र की तफ गये दो गजदत्त उत्तर दिशा उत्तर कुरुक्षेत्र की तफ गये है यह दोनु क्षेत्र युगलियों कहैं जन रत्न मई सुदर्शन नामे वृक्ष हैं और परिवार सहित जंबू वृक्ष के बपर जंबू द्वीप का स्वामि है और अणादिये नाम से देवता का बहा पर वासा हैं रहने का यह देव बड़ा पुन्यवान हैं अपने अर्द्ध कर्म का फल भोगता और सदा आनंद से रहते हैं ॥३२८॥

इह दीप सपूर्णचंद्र जिसो इनको लवणोदधि ही बलिया ।
 विप्र जोनन लाख विपम जल, रिच है दग्माल जिमो दलि
 दस सप्त हजार उच्चत मई, नव पच हजार दमा छलिया
 सूठिया लवणोधि नामा दिपै रतना धर मुकृत ही फलिया ।

अर्थ — यह जंबू द्वीप गोल है जैसे पूर्णमासी का चन्द्रमा
 कला से पूर्ण होता है ऐसे ही जंबूद्वीप गोल है चन्द्रमा की तरह
 जिसके चारु तक लवण समुद्र ने घेरा हुआ है जो के २ लाख योजन
 का चौड़ा है चुड़ी के आकार घेरा हुआ है लवण समुद्र के मध्य
 में इक उदक पानी की माला है, निम्न कारण अपने आप
 अंदर बाहर दोनों तरफ गिर जाता है, बोह जल माला १७००० योजन
 की उंची चढकर पानी की माला निचे ढल जाती है और वह
 १००० योजन सम भूमि के नीचे से ऊपर १६००० योजन ऊपर
 जाती है ऐसे १७००० योजन है माला लवण समुद्र के मध्य भाग में
 पताल बलरो है चारों दिशा में चार बड़े और छोटे हैं उन कनशा
 से जल पानी निकलता है पूहारे की तरह वह पानी उचा दोनों
 ढल जाता है और वह उक्क माला १०००० योजन की चौड़ी
 है और जिस वक्त वह पानी ऊपर को उच्छलता है उस वक्त ल
 समुद्र का स्वामी स्वस्थिति नाम देवता है वह देव हर वक्त सेव
 रहता है रत्नों के यममय बड्डे लेकर रखे है और उनके पास
 हैं उन्हीं का पुत्र भी प्रबल अधिक है ॥३०६॥

लवणोदधि को बलिया घर घातकि खड विथार तिमो दुग
 विर मेरु गिरि चौसाठ विजय विर है भरथो रिच उत्तर

इस धात की दीप पर जलघी जिह नाम कहायत ब्राल
तिह ते पुन पुष्कर द्वीप इमे दुगुणो २ निस्तार मणो ॥

अर्थ—लवण समुद्र को चारों तरफ से धात्री लंबद्वीप ने
लिया चौड़ी चुडी के आकार से और धात्री लंब द्वीप ४ लाख
पा चौड़ा है। जिसमें दो समेरु पर्वत हैं ८४००० जोनन के ३
जोके जंबूद्वीप का सुमेरु पर्वत है उसके एक तो दक्षिण की तरफ
परत है धात की लंब का और दूसरा जंबूद्वीप के मेरु पर्वत से
की तरफ हैं धात्री लंब का मेरु पर्वत हैं, एक उत्तर में एक दक्षिण
पर २ मेरु पर्वत के ३०-३० विनय दोनों पर्वतों ६४ विनय हैं
धात्री लंब म दो भरथ हैं दो इरायत क्षेत्र दोनू भरथ क्षेत्र हैं
महापुरुष होते हैं और भी अनक दोनों इरायत क्षेत्रों में ६३-६३
पुरुष होते हैं और भी अनेक धात्री का लंब को घेरने का द्वीप
आकार कालोदधि समुद्र हैं ८ लाख योजन का क्षेत्र जो कि
कालोधि समुद्र को घेरा देने वाला चारों तरफ पुष्कर द्वीप हैं ३०
योजन का चौड़ा हैं जैसे धात्री लंबद्वीप का बरारी क्षेत्र है पुष्करद्वीप
भी समझ लेना चाहिए आगे ऐसे ही दुगुणो इच्छे क्षेत्रों, यह
जिनेन्द्र देव की याणी हैं ॥३३०॥

तिह पुष्कर दीप तदार्य विर मेरु विर वदु साड कही ।
विर ईरवत्तों भरयो द्वित में पदरी वा द्वा द्वाति सही ॥
इह द्वीप दुसार्द्ध दुमिधु युते नरखे धावन मोख गही ।
इहताई घणादिक खेचरणा सुरगती काल मिलोक लही ॥
अर्थ—उस अर्ध पुष्कर द्वीप में ३३००० पर्वत हैं

खंड द्वीप दोनों में ६४ विजय हैं दो भरय दो इरावत हैं । इन देशों में तीर्थ करा देवादिक पद के धारक पुरुषों की उत्पत्ती जहा है वहा निश्चय है और इस अध पुत्र द्वीप के परलेपार एव परंत है चुडी आकार वाला है उसका नाम मनुष्योत्र पवन है जोमे मानुषों से प्रधान है उसके परे कोई मानुष ही है और दूसरे नाम से ताइ द्वीप भी कहते हैं मनुष क्षेत्र भी कहते है और समय क्षेत्र भी कहते हैं मुक्ति इसी क्षेत्र से लेते है । यह क्षेत्र २५ लाख योनि का लग्ना चौड़ा है इस ढाह द्वीप के वादर गजना लिसकाना वादला मेघ होना मुभा वर्षना कही २ रज घातादि कदामह होना चंद्रमा सूय के प्रहण का होना चंद्रमा सूय प्रह नक्षत्र तारों का चलना और शुभाशुभ फल का घतलाना ढाह द्वीप से वादर नहीं है फल ॥३३१॥

जिह वाहर पावक काल सुकाल भवे नर उत्पत्ति काल करै ।

जिहा ताइ महा वृत्तघार मुनि व्रत द्वात्म श्रावक धर्म भरै ॥

नर रूप जिनेश्वर चक्रपति बल केशव केश जेह हरे ।

सर्वज्ञ मुनि युगनादि विराजित सो नर क्षेत्र सुश्रद्धि भरै ॥३३२

अर्थ — इस ढाह द्वीप क्षेत्र में वादर अग्नि काय रहति है इसके वादर नहीं है और इस क्षेत्र में काल सुकाल होवे, मनुष्य मात्र जन्मत है मरते है और इसी क्षेत्र में माधु माध्वि श्रावक श्रापिना भी हैं तीर्थ कर चक्रार्त्ति वासुदेव बलदेव प्रति वासुदेव राणा मटलीन राणा केवल ज्ञानी युग लिये और नर गारि नपु सक उच नाच मनुष्य योनि में अनेक पैदा हंगे इस क्षेत्र में और टाई द्वाप से वाहिर नहीं होते है, यह सर्वज्ञ के वचन है ॥३३॥

देव लिया फिर स्नाधान होते हैं आपने नम भुगारने के लिये त्याग
 होनाते हैं और फिर श्रावण के ११ वन प्रदूषण कर सकते हैं और ए
 १२ मा युत नहीं है क्योंकि द्रव्य से धान नहीं दिया जाता और तपस्
 अधिक करे कर्मों को रूपायें अत समय मे संवारा करें ऐसे जीवों की
 गति ८ मे देवलोक तक जासके है मर कर और चार पदवि मे से
 कोई पदवि पावे ऐसा भगवान कहते हैं । द्रव्य १ देव भाव देव ० सम
 दृष्टि ३ इन्द्र की पदवी पाव ॥३०४॥

तियंच पचेद्रिय सनी असनी अराम मइ निजरा कि फन्धी ।
 गति भवन पति नन देव विषय चिति ओइक भाग अपरुण प
 मनस पुरातन जात लखी ग्रह बाल तप गति जोति कनौ ।
 समदृष्टि लई शुभ रूचि धुर कल लगे शुभ भाव मनौ ॥३३५॥

अथ —सनी अमन्त्री जो जीव है यह सब पर बगुने भूप
 लुण शरदी गरमी रोग शोक बध वध इत्यादि कष्ट सहते हैं, तो उन
 करके इन जीवों की आराम निजरा होती है जि इच्छा जो काम होता
 है उसको अराम निजरा कहते हैं तो उसका फल क्या वह जीव अत
 समय उन जीवों का अंत समय परिणाम शुभ हो जाते हैं इस करके
 वह जीव कात करके देवता बने भयनपती या वाण नियतरा से पैदा
 होवे जिनकी स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की हैं और उत्कृष्टि आयु
 एक पल्योपम की स्थिति पाते है । भयन पतियों देवा की जघन्य दशा
 हजार वर्ष की उत्कृष्टि तक सागर की है । और छोटे देवी देवताआ
 की १ पल्योपम की भी हैं और पल्य के असख्यते म भाग की हैं ।
 पन्यों की भी कहि हैं और पलके असख्याते में भाग की तिथि पाते हैं

अप संनी निर्यञ्च पचेद्रिये मनवाने जीव को जाति स्मरण ज्ञान होजाये और पिछले भय के अनुसार तप किया मगर अज्ञान के बस भूख तृषादिक नाना प्रकार का तप करते रहे हिंसामई जिसमें सवर नहीं है ऐसे तप वाले भी मर कर भवनपती देव घाण व्यंतर देव ज्योतिषी देव इन देवताओं में जा पैदा होते हैं और जो जाति स्मरण ज्ञान के साथ हो तो उसको समदृष्टि कह सकते हैं क्योंकि उनके भाव दान शील तप भावन दिव में वरते और अगर भाव चढ़ते जायें तो प्रथम देवलोक में जाकर उत्पन्न और वहा के सुग भोगे ॥३३५॥

जुगला थिति भाग अमरगपलो सत्र छप्यन्न अतर दीपन के ।

गति भौन वने पिन हेमवाए पिण इरुवण पल एकन के ॥

पूर कल्प लगै उपनै तिय ते दुतिय लग जावन शोपन के ।

पिछले शुभ भिचत ने सुर ही निज आयु सम कहि उछनकै ३३६

अथ — अकर्म भूमिये मनुष्य जुगलिया जितकि स्थिति जघप्य एक कोड़ पूर से अत्रिक और उत्कृष्टि पलके असंख्याते वे भाग की हैं और सब छपन्न अतर द्वीपों के जुगलियों की स्थिति जघप्य पल्यके असंख्याते में भाग कम हैं, और उत्कृष्टि पल के असंख्याते में भाग की हैं, और सर्व सारे अकर्म भूमियों मनुष्यों की स्थिति जघप्य तो कोड़ पूर्व से कुछ अधिक हैं । उत्कृष्टि ३ पल्योपम की हैं । बाकी सर्व मध्यम स्थिति हैं (विशेष वर्णन देसो श्री जीवाभिगम सुर) और यह सर्व जुगलियो ५ भरत क्षेत्र में बसने वाले, ५ इरावत क्षेत्र में रहने वाले और ५ महा विदेह क्षेत्र में हमेशा रहते हैं, अतरा नहीं जिनों का अब अगे ५ देव कुरु ५ उत्तर कुरु ५ हरिवास ५ रम्यकू वाम ५

हेम वय ५ ईरणय, और ५६ अंतर द्वीपे यह द्युगामी ८६ युगनियं मनुष्य मरकर नरक में नहीं जाते तिय चमे भी नहीं जाते और मनुष्य में भी नहीं जाते यद तो सर्व दश प्रकार के भवनपतियों में सोला धाए व्यंतर देवताओं, दश प्रकार के ज्योतिषी, विमानो २ पहले देवलोक दूजे देवलोकों में जावे फिर वहा से मरकर मनुष्य गति में आते हैं वह युगलियो शुभ सिंचत शुद्ध भावणा के जो कम क्रिये थ उनका फल देवलोक में सुग्न भोगत है ॥३३६॥

न गता गति नारकी घात शिखी त्रिकलैन्द्रीय समूहम मानन
जल भू वन वादर में उपजे नगता गति सूक्ष्म के मव मे ॥
नर ते नर मे तिर्यञ्च तथा, उपनै न असन्नि तिर्यचन मे ।
जूगलू सर ही सुर नाहि तहा उपनै इम फेर नहीं दिव म ।३

अर्थ — श्री जिनदेवनी ने कथन किया है । कि चार देवलोक के देवताओं की गत अगति के दोनों गोलों म से वचों की देवते देवलोक से मर कर नरक गति में नहीं जाते हैं और मर कर फिर देवता से देवता नहीं होते हैं और ३ त्रिकलैन्द्रिये में असन्नि मनुष्य में अर्ग वायु काये में और पाच सूक्ष्म स्थानों में मर कर देवता नहीं जाते हैं और ८६ युगलियों में देवता मर कर नहीं जात हैं और असंन तिर्यच में भी नहीं जाते हैं परन्तु देवलोक से देवता मर करके पृथ्वी काया में आप काया में वनास्पती काय में जाकर उत्पन्न होते हैं और संनी तिर्यच पंचेन्द्रिय में गर्भनक सन्नि मनुष्य पंचेन्द्रियों में पैदा होते हैं । मनुष्य मर करके मनुष्य होजाते हैं तिर्यच से मर कर तिर्यच में बन जाते हैं नरक से मरनाकि नहीं होते है, देवता से मर देवता नहीं

होते हैं। यह कथन श्री परमामा योतगणी देवका हैं मत्व हैं ॥३३॥
 गति मंथि लगे मरणात् ममप नर मे तिर्यञ्च त्रिपय मुर को ।
 तिह मिश्र सुभाय भवे मुरसो इत अतिम पापन के धूर को ॥
 इह गर्भ त्रिपय उपरै सुन रैवय भांध मह उल है उरसो ।
 तप चान तणा फन होत इमो इहि रैन अनंत त्रलि गुरुसो ॥३३॥

अर्थ — एक २ देवा की काल के समय मरणाति समुपात होती है क्योंकि जब सधि का वक्त होता है तब गति समुपात कहते हैं उसको और वक्त दोनों गति के प्रदेशों का ताता बंध जाता है आना और जाना उसका नाम सधि है। और जब एक इन्द्रिये में देव पंचेन्द्रिये आता है तब उसको मिश्र कहते हैं और जब एक घेनिया करता है जब भी उसको मिश्र कहते हैं, गति से गति का प्रदेशों जरिये प्रदेशों का जब ताता लगता है तब प्रदेश गति में आते हैं ज्यादा और जाते हैं थोड़े उसका नाम समुपात है और जिस वक्त एक काया से दूसरी काया में जाता है। उसका नाम मांध मिन एक इन्द्रिय में पंचो द्रव्य और पंचेन्द्रिय से एक इन्द्रिये में जाके पैदा होते हैं तो उसको उच वक्त मिश्र कहना, नर से तिर्यच म जावे तिर्यच से मनुष्य में आवे नरु से मनुष्य में आव मनुष्य से उच म जावे उच से मनुष्य या तिर्यच योणि जावे उसको मिश्र कहिये मनुष्य गति से उच या तिर्यच या नरु में जावे तो उसको उस वक्त मिश्र कहिये उच गति से दूसरी गति में जावे उच वक्त उसकी मिश्र वक्त कहिये उच गति मनुष्य १ नरु २ तिर्यच ३ इम देव गति का उच गति उच से उसने अंतम पवित्र होना है क्योंकि जब उच गति मनुष्य

होजागे और इकठे जाव फिर नही आत तो उनका मिथ पता दूर हो जावे फिर जिस गति मे गया जीव उमी गति का पहलायगा फिर वा जीव पूर्वज्जे पुन्य के प्रताप से वंकि ये लच्छि औधिज्ञान या विभंगता देव श्रद्धि पाइ देव भव में सुख भोगे भोग कर फिर मनुष्य मात्र क गर्भमे आवे फिर भे रे रहते हुवे भी पूव कर्मो तपके प्रभाय से वैद्वि लच्छि ज्ञानादि साथ लेके आया और गर्भ मे रहते हुवे अगर ज्ञान में उपयोग लगावे तो बाहर कि नितती शार्ता मुनी सब जाने उस वद इच्छा होवे तो वैद्विय करे तो दो प्रकार के जीव बनाव एक समदृष्टि जीव औधिज्ञान और दूसरा मिथ्या दृष्टि विभंग ज्ञानी जो सम्यक् दृष्टि धर्माभिलाषी मुक्ति के इच्छक शुभ भावी जीव बनावे ऐसे माया मे बरते तो घतमान गर्भ विषे का न करे गर्भ में ये देव गति में आवे यह जीव मर के पहले सुधमा देवलोक तक जाव उत्कृष्ट यह जीव सम्यक् दृष्टि १ दूसरा मिथ्या दृष्टि जीव पापाभिलाषी राग्य श्रद्धि सुख काम भोग मनबद्धत सुख भोगे युद्धादिभिलाषी महारंभीया ऐमे शार्ता में सदा मन बरते तो घतमान गर्भ मे से जीव काल करके जीव १ नक गति मे जावे और नक मे नारकी बने, ऐसे जीव देवगति नर गति से आया, एक २ जीव गभ मे ही श्रद्धिवंत होवे तो जानो पिछले भव का तप जप का बल साथ आया है यह बचन अनंत बनी केवल ज्ञानी के है बचन सत्य है जानना ॥३३८॥

सुर दीप पतिगिरि कूट गूफा पति द्वार पति पिजाधि पति ।
 वन देव पुरी पति चैत पति जलधीश्वर तीरथ देवसती ॥
 ब्रह्मास पुरी सलिला धरणि मणि औपध की रमणी मुमति ।
 इम और धणीविध द्रव्य विषय हित धारक मानवलोकरती ३

अर्थ—कैटक देवतो द्वीपों के स्वामी हैं कैटक देव पर्वतों के स्वामी हैं, कैटक वृद्धा के मालिक हैं उताव पर्वत की यह ७२ गुफा है उनके नाथ हैं और कैटक नगरीयों के द्वार के स्वामी हैं विजयादिनी क्षेत्र हैं उनके स्वामी हैं, कैटक नगरीयों के नाथ हैं, कैटक देव नगर नारिया के मालिक हैं कैटक दरनेंद्र तलाभा के सागरों समुद्रों में के पति हैं कैटक दरने तीर्थ के स्वामी हैं । कैटक देव मगध वरदाम विभा मालि के पति हैं और कैटक देवता ब्रह्म म के वासी देवी श्रीरत्न और कैटक देवी देवता सलिजा नदि के गगानदि देवी के सिद्धु आदि के नदीया के कौश भटार के मणि मोती आदि के जागहर हीरे पत्ते आदिके और औषधि आदिके मंत्र मंत्र आदिके रक्षपाल चक्रेश्वरी देवी पैरोप्या देवी निद्रायका देवी जैसे और अनेक भाक्त के देवी देव आदि मनुष्य लोक में रमण करने वाले प्रमोद मानाते हैं ॥३३६॥

इक है सुम्यदायक वल्पवति लुगला जनके सुख सेवन को ।

इक है परमा धर्मी यमत्रूर रहै नरके दुख देवन को ॥

इकलोक फिरे घउ मधि रिपप जगमार मली विध लेवन को ।

इक ऊच पदार्य सार्थ रहे रतनादि निधि मुख वेवन को ॥३४०

अथ—एक ० देवने अनेक जीवों को सुख देते हैं जैसे १० प्रकार के वरुण वृद्धा के मालिक देवता हैं और उनके जरिये अकम भूमि जूगलिया के जीव आपणी जीव का अपणी आशा पूरी करते हैं । और आपणा बंदूक्त सुख भोगते हैं, और एक २ देवते अनेक जीवों को दुःख देने पर प्रसन्न रहते हैं । जैसे भवणपति असुर कुमार जाति महाभुर रुद्र रूप यम १५ प्रकार के परमा धरमी चिन्हों दिल में

दया नहीं और वह जीव नरु मे नारक्रिया को दुःख छान भेदन मार
 पिट करने मे नारकी जीवा को बहुत दुःख देते हैं ॥ एक २ देव सारे
 लोचुवार गति म फिरके देगने है कौन २ से जीव सुयी या दुःखी है
 जैसे त्रियापभर देव वाण व्यतर जानि म सँ आपणे लोम्पाल का
 आरर सूचना सुनाते है जाते है आप अरणे क्षेत्रा मे मारि लपर
 राखें, और एक २ दवते उत्तम पनाथ ने साथ रहते है नस चक्रवर्ती
 के १४ रत्न एर २ रत्न के साथ एक २ हजार दयता साथ रहते है
 और दो हजार देव जो चक्रवर्ती का शरीर है उसने साथ रहते है
 और उसनी रत्नपाल करत है, एमे १६० - दय चक्रवर्ती १४ रत्न
 अब निधान के तन मन से मेरा करत है दवते य श्री भगवन क
 कथन है ॥३३०॥

इरु मत्र अधीन सुरी सुर है इरु यत्रन म इरु तत्रन में ।

मति भेद घणे जग मादि कहै तिनके हितरत घण मनमें ॥

इरु वदन पूजन सेवन ने सुखशायरु काव विषय घन में ।

इम देव विराजत लोच विषय इरु हैं रखवाल महा घन में ॥३४१

अर्थ — एक २ देवता मत्रों के अग्नि हैं । जैसे रावण ने मत्र
 साथे थे १००० एक हजार आर जैसे प्रमात्र चोर के अधीन थे मत्र ।
 एक २ देवता यंत्रा के अधीन है जैसे विद्यापत्रों के विमाम और जैसे
 कपड़ा सिनेवाली मशीन इसका नाम यत्र है विस प्रमार से सुदर्शन
 चक्र श्रीरामचन्द्र का आशालिफोट (अग्निफा) रावण का और एक २
 देवतें तंत्रों के अधीन है जैसे आननल रेलगाड़ी मोटर आदि और
 जैसे हवाइ जहाज चलते है । आजकाल प्रत्यक्ष पवन पानी अग्नि के

सहियता से चले। उमरों तब मरते हैं इनके भी उमर में देव हैं। एक एक श्रेयता मर्ता से पक्षपाती है मन्चे को क्षुद्र बनाते नम चेष्टाराना सत्य न्याय निति पर ॥ और काण्ड राजा आनीति पर था पर तु घमरेद्र ने घनेन्द्र ने दोना न काण्ड को विनय दिया करें और मचा विनाशिया जैसे देवी देवता दली नाना लक्ष्म मत् भेन करन दिखाते हैं जैसे गौशाले के मत को मचा मन्चे थ और श्री भगवान स्वामी के मत को क्षुद्र कहते थ देवने। दशत तो गग द्रुप क पिडे पडे हैं। कैदक देवने दूसरे को मुक्त बन में खुन है नम अरिहल कैदक घन के अधीन के है कैदक बदनादि करन म नम ताधर भगवान को) सुश रहते हैं और नगी कडर देवते पुत्र से अधीन हैं नमे चक्रवर्ती के १६००० हजार हुकम म रहत हैं जम रामुत्र उलदेन प्रति रामुत्रेयादि के सेवक हैं देव एक ० श्रेयता मचा मपने म धन धान्य के पंग करने में चान्दी स्वणमणि जमीनादि की मचा म रहत हैं देवता ॥३४॥

इक खेवर खेय विषय रमत नर नारि विषय उहु शक्ति घरी ।

नम चाल पताल प्रवेश विध जल पात्र शत घानादि करी ॥

सन रूप बटावन भोग घरी बहु द्रव्य उपावन गुप्तचरी ।

इम और घणी जग रीत विषय वरत मन मोहन रीत मरी ॥३४२

अर्थ — एक ० श्रेयता विद्यापरा के देश जगम म प्रवेश कर बहा के नर नारियों के शरीर म आपनी शक्ति भर नेत है, जिसके जरिये आकारा गमन करे पताल प्रवेश न करे पाणी अग्नी वायु मेघादि चतुस्र करणो इने चिन्तों की उपन पंग करना और रूप परवत विद्या करिणायुवान से बाल करे बालक से जुवान करे वृद्ध से जुवान युवान

से वृष कर याग से वृष कर वृष से याज्य करे, गारी से नर नर से नारी करे देव आपनी शक्ति में ऐसा रूप बना देव और अनेक रूप अन्वय भेष धर और अनेक प्रकार के द्रव्य भी उत्पन्न कर इत्यादि और भी लोक रचना करीन १ मोहनी मूरत बना दिये सबको शेष अन्त्री लगे ऐसी कर्य रत्ता भर देते भेजते ॥३४०॥

इक देव रमै नर की तरुणा नर माध रमै इक देव त्रिया ।
 नालोफ रिपय इक मोह धरे इक दूर रहै मन दूर किया ॥
 इक मोह करी नर मन बन इक बैर करी भय रोग दिया ।
 रचला सुरका षट्भात लगा जिम जैनकि चैन पयूप दिया ॥३४१॥

अत्र — एक २० राण्य यत्र त्वे गणुय तीके गाय भोग भोगतें हैं एक २ व्यतरणी देशी के साथ भोग भागत हैं गणुय १० और भेजत भी एक २ मात/गोत्र के साथ गणुया से मोह ममता करते हैं एक २ देवता भी इमलाक से दूर रहते हैं भय ग्राते मन से दूर रहते हैं और एक २ देवता पुत्रा आत्मा के साथ प्रीति करते हैं और वासुदेव का भी काम करते हैं जैसे पूर्ण भक्तान भक्त दयता अगमे काल पहिने सा १ कर देवरी मैता वनगी टाणग सूत्र के नर म टाणे के पहाई ऐमा कामदेव करगे एक २ देव सा राग द्वेष के परा धर पाथ है । भय भे है रोग पिडा धीमारो करते हैं ऐसे अपने अनेक प्रकार स्वरो की रचना हैं । जने ने जैन मार्ग के वचन रपी अमृत पाण किय ह वह इसको मली प्रकार से जाणते हैं देखते हैं जीवों की रचना को ॥३४३॥

इक बैर करिनर के घसके रिपुको दु ख देन डरारन ही ।
 पिछले भय मोह करी दु ख मोचन कारन को इक जावन ही ।

रिपुमो रण मडण कारण नो मिलने पुन मित्र कि घावनही।
सुर ऊरध केजु पताल घसे तिह क इम ऊरध आवन ही ॥३४४॥

अर्थ—एक ० देवता आपने शत्रुओं को दंगते हैं तो उधे नरुं
मं दुःख देने को जाने हैं और मारते हैं डरात हैं पिडा देते हैं आपने
शत्रु समझ कर एक ० देवने आपना मित्र जाण दुःख मे दुर करते
सुख देते हैं क्यकि पूरु भवा का प्रेम होने से शत्रु के साथ युद्ध करते
हैं और मित्र के साथ मिल जाते हैं मित्र नैसे सीता का जीव एक ०
देवता रूपर से पताल मे जाव पताल से ऊपर को आवे जैसे सीता
मती का जीव गया और आया ॥३४४॥

इहि लोरु अशीन श्रुतागम ही सुरलोरु रिपय सुर साथ रहै।
तिह देख बड़े श्रुता धारक को अमिमान गले चित्त शोक गहै ॥
पछतारत हैं चित्तरत इसो धल प्रारुम होत प्रमाद बहै।

नहि उदम आगम माहि कियो अब होई निरुदम खेद सहै ॥३४५॥

अर्थ—एक २ जीव इसलोक मे से परलोक दव गति मे जाते
हैं और जो ० उनके विद्या याद हो वह सत्र में जाति हैं प्राकृत संस्कृत
हिन्दी आदि पने शिष्यो धारे सिद्धा त शास्त्र वेद पुराण सिस्मरति पद्य
पुराण आग वेद (११) उपगवेद (१०) छेद (४) वेद-मूल वेद (५) पष्ट
द्रव्य परमाणु पदगल इत्यानिका ज्ञान हो अहिंसा मइ जीव को सो वह
जीव देव गति मे आपनी विद्या लेके साथ जाते हैं एक २ थोड़ी विद्या
वाने होते हैं जो २ थोड़ी विद्या बाने और नहीं पढ़े लिखे प्रमाद में
यक्त रौया यह देख और जो बड़े पढतों को दस आपने आप बहोत
ग्लगीर होते हैं चिन्ता करते हैं पश्चाताप बहोत करते हैं और मन

ही मन में बहोत दुःख मानते हैं कहते हैं हमने उदमन नहीं किया उन देवों के सामने लजा खाते हैं (उदाहारण ठाणाग सूत्र) और जब जबाब नहीं आता तो निरउत्तर होजाते हैं वचन सत्य हैं जिनका॥३४६॥

कितहु जिन आगम की चर्चा जिन आगम साख सुनावत ही ।

कहु वेद पुरान पढ़े हित सो अपने २ मत मान ही ॥

कहु छन्द कला प्रगटे सरसे स्वर ताल सुगीत बनावन ही ।

कहु शब्द कई वर ग्रन्थ पढ़ पर बोध प्रकाश लिखावन ही॥३४७॥

अर्थ —कहि २ पर ठिकाने २ देवते एकत्र होते हैं सम्यक् दृष्टि देव और मुक्तगामी आपस में चरचा करते हैं जिनत्र देव के वचन सिद्धात की सत्य बात सुनाते हैं आर धर्म चर्चा खूब करते हैं । और वही पर देवते वेद पुराणादि पाठीयों की चर्चा होती थी प्रीति से और आपो आपने मत को चाहते हैं आपने २ मत की शोभा करते हैं । क्योंकि जिनदेव ने कहा हैं परित्रयक ब्रह्मचारी, तपस्वी, योगी, सन्यासी, तपी, जपी, सयमी दानी इत्यादिक मर के देव गति में जाते हैं और कही २ पर देव इकठे हो छन्द शास्त्रों को पढ़े अनक प्रकार के छन्द प्रगट करें और नर रस रचना सहित अलङ्कार संयुक्त सहित कहे कहि पर सप्त स्वर प्राम मुच्छी पट राग ३६ रागणी अनेक भाति के गति कहते हैं और मृदगादि बाजत्र ताल प्रगट करे । कहि २ पर शब्द शास्त्र व्याकरण शारत्र कोपादि प्रकारों और आपो आपने ज्ञान का प्रकाश दिखते सत्य हैं ॥३४७॥

कितहु सुर आप थकी अधिको लखके अति आरत माहिपदै ।

कितहु निज थी लघु को लख के फिरके अभिमान विखाद धरै

जिह पास मृपापति रू सखी तिहरो बहु दोष विकार भरै ।
समदिष्ट सखी जिह सायरहैं तिनरोदुःख दोष विकारहरै ३४८

अर्थ—कहीं २ पर देवता आपने से अधिक श्रद्धि अपने मन मे बहुत दुःख मानने और दुःख २ करके उसको आर्त ध्यान चित्ता करत हैं कहते हैं मनि गुरु महापान का कहना गही माना पुन्य दान नही दिया जिस करके अब मैंने निचा देखा कहीं २ पर देवलोक के देवता आपने से कम श्रद्धि जाने को देखकर अपने मन मे अभिमान गर्व अहंकार करते हैं । और उसका तिम्कार करत हैं विपाद करते हैं उमरो कहते हैं अय ? धैरमन मूर्ये ? कहीं पर देवते जो इरुठे होते हैं माय में मृपायाद मत रूप सखी हैं जिनों के साथ मिथ्यात्व सेवन की है और उहों को अधिक पाप विकार लगत हैं दोषों मे भारी होते है । (पक्षपात मे कुछ नहीं देखते हैं) । कहीं २ पर देवते सम्यक् दृष्टि इरुठे होते हैं तो सब आपने पाप दुःखों को दूर करते और भगवान के गुण गते हैं पुन्य पाधने हैं ॥३४८॥

कितहु सुर चोर कला घरके दरठे प्रह रत्न त्रिया परकी ।
पकरे तहि देख घनी बलपो बहु आयुध चोट करे कर की ॥
तम काय विषय छर जाय कवे जेहि जोतिन देव मणि घरकी ।
इक दुष्ट कला घर देरगणे परमानत सीख घराघर की ॥३४९

अर्थ—कहि २ पर एक २ देवते चोरी करते हैं कैं तो रत्नों की और कोइ पराई देवता की देवी को चुरा लेजाते हैं जब मालिक को पता लगता है तो खबरदार हो पिछे २ दौड़ते हैं जो बलवंत हैं वह पकड़ लेते हैं और हथियारा से मारते हैं हाथों से ताड़ते हैं अपनी वस्त

ले लेने हैं और उसको बँड देते हैं जो मग चाद ररें रोता ही रई
 कही २ पर चोर तमस काये म जा द्विपते हैं, वहा पर महाधकार के
 हैं, जहा पर कोड भी रोशनी नहीं हैं ऐसे चोर बला के जाणने व
 चोर देव हैं यह चोर देव लोक परलोक का भय नहीं मानते हैं । फा
 कही पर उहो देयों के भी मिर पर दुष्ट दयतादण करने बाने
 और भय से उनसी शिजा मानते ॥३४६॥

रण माहि सुरा सुर भूभत है अहिदव सुवर्ण कुमार मिला ।
 हम ही इतरे रिपु साथ भिड जल प्राक्रम आयु धारवली ॥
 इतनो नु विशेष विमानन को तिय फंकर पात चलाय कली ।
 बहु हीत मणिमय आयुद्धही रिपुभग लगै तिह शक्तिदली ॥

अर्थ —दयलोक म भी यह हाल होता है दरो अतुर कुमा
 देव सुवर्ण कुमार दय आपस म अयुद्ध करते हैं लड़ते हैं ऐसे ही औ
 भी शत्रु साथ में भिड़ते लड़ते हैं एक २ जानि आपस में बहोत लड़
 भिडते हैं और बडे होते हुवे भी शक्रे द्र इशाने-द्र जैसे आपस में
 संप्राम करते हैं तो छोटी जाति का क्या ? कहना है । ऐसे ही एक
 जानि के लड़ते हैं । और एक जाति दुसरी जाति से लड़ने मरने हैं
 आपस में बल प्राक्रम फोडते हैं शस्त्र धारके बलवान देवते युद्ध कर
 हैं और त्रिमानी देवते भी पुण्यगनों में विशेष करके गिणे जाते हैं
 और जो आपने शस्त्र बिन और दन तृण ककर पत्र फल इत्यादि
 वस्तु चलावे तो रत्न मई शत्रु कोशस्त्र होने लगते हैं और शत्रुओं प
 शक्ति को घन हीण कर देते हैं ऐसे युद्ध रचना देवा की होती
 ॥३४०॥

शुभ शब्द सुगन्ध सुवर्ण मई रस उत्तम साय स्पर्श मले ।
 सुख भोगन पच विषय त्रिवधा मन चैन शरीर विषय कुशले ॥
 बहु वर्ष पलोपम सागर की जिह आधु जरादिक रोग टले ।
 इहि पुन्य महा तरु के फल हैं सुनयो नर नारि सुजान रले३५१

अर्थ—बहोत अच्छे शुभ शुद्ध शब्द रागादिक के ध्वनि वाजंत्रों का शब्द पेमावकी घनपोर घयटा मादना की गजें ऐसे ही रात्रों की जयनार शब्द बाने आपनी शोभा शब्द इत्यादिक शब्द विषय पच वर्ण अनेक भेद के मनोगम देव ने कुकुम्भन्दनादिक महा सुगन्धी थाला पुष्पमाला सुगन्धी वस्तु इत्यादिक सुगन्धी सुगन्ध मिष्ट मनोहर रस स्वाद सुगन्ध पियूप पानादि रस इन्द्रिये सुगन्ध शुभ स्पर्श स्त्री पुरुष सयोग अलिंगन कोमल वस्त्र शिष्या इत्यादिक सुख भोगते हैं और दुसरा पच विषे सुख मन बचन काया सुख फारी मिलि हर्षत सुख भोगते हैं घने बहोत वर्ष दश १० हजार ३ पल्योपम की सागरोपम की आयुष हैं और जरा रोग आग क्षीणता रहित हैं ऐसे सुख देवता भोगते हैं, यह सब नव प्रकार के पुन्यों का फल पाना है तपत्यादि करणी का फल सुखदाई मिलता है सुनों सुम हे पुरुषों ? हे स्त्रियों ? हे चतुर जीवो ? जो भगवान कहा हैं सो सत्य हैं ॥३५१॥

शुभ बघन २ देव तवे जब भक्ति करै जिन की मुनि की ।
 पग बदन पूजन प्रेम धरी महिमा धरये तिनके गुन की ॥
 सुनके सम धर्म कथा रचणा रच नाटक गीत महा धुन की ।
 शुभकर्म विषय शुभ बघइमे रचणा रचणी जिन जी उनकी ३५१

अर्थ—देवते भी श्री जिनेन्द्रदेव भगवान की भक्ति करते हवे

शुभ कर्म बंधते हैं और भी देखो साधु महात्मा की महासती माध्व जी की भक्ति करते घरणों में शिरा भुजाके बंदना करते हैं पूजा स्तुति गुण प्राप्त गाते हैं अति ही आपने मन में मगन होते हैं और धर्म कथा अति रुचि प्रीति से सुनते हैं कथा सुनके नाटक करते हैं गीत गायन करते हैं ऐसे भी किया करते हैं सुद्ध भावना भाते हैं शुभ बंधन प्राप्त होते हैं इस भाति सुरा की रचना कही श्री विन भगवान ने ॥३५२॥

सुर बंधन भाव मलीन विषय बहु कर्म भविष्यत नीच मई ।
तन चोट लगै जय आयुष की न मरै विन पूरण आयु यई ॥
सुर शक्ति न आयु बंधान की गति जोनि छुड़ावन की न मई
सुमके शिर ऊपर कर्मवली इह सार महा मुनि राज ठई ॥३५३

अर्थ — देवलोक के देवता भी अशुभ कर्मों बंधन बाधने हैं नीच भावों में आकर हिंसादि के भाव तिन तीम कपायों में प्रवर्तते हैं और मोटा बंध बाधते हैं सो वह कर्म आगमेकाल उनका दुष्ट फल मिलेगा तिर्यच दुर्गति में भोगे या मनुष्य दुर्गति में पड़ेंगे मनुष्य विद्वान कोह यादिक कि युनि में जाकर जन्म लेते ऐसे दुर्भाग्य उदय पाप से पावें अगर देवता के शत्रु लग जाये सो दुःख पावें लेकिन मरते नहीं क्योंकि जितनी आयुष कर्म की स्थिति बाधी हैं विना भोगे मरते नहीं देवता में अनेक शक्ति हैं मगर आयुष कर्म बंधाने शक्ति नहीं और नहीं घटाने की है आपनी आयुष्य या औरों की भी नहीं आयुष कर्म घटाने बंधाने की शक्ति नहीं देवता में विना निमत के और नहीं अपनी गति योणी छुड़ा शके नहीं औरों की गति योषि घटाने की

ति है देवता में और मय जीवा के निम पर कम महा बलवान है
ह महा ऋषियों गणधृष्टि देवों ने कहा है ॥३५३॥

रलिंग ग्रही कहु घायक मान चढे सहै केवल ज्ञान जहा ।

क दशतहा मुनि भेष दए महिमा नत गीत करत तहा ॥

दृष्टि करै पन वर्ण प्रमून गुगंधित नीर सुगुप महा ।

सुगुप सुधावक देहत बी सुर भक्ति नृताद करत तहा ३५४

अर्थ—भगवन ने कहा है किसी जगह पर अथ लिंग (यानी
पणे में हुमरा भेष हो उमरो अन्य लिंगी कहते है) महस्तीजीव महा
पय में आया हुवा और उत्तम विचार यानें प्यायक भागों से गुण
चढते २ चढते केवल ज्ञान पामकता है भरत महाराज धक्रवती
म महलों में केवली हुवे सेठ मुदरान पला पुत्र वास पर केवली
य देवी, साता हाथी जैसे अपाठ भूत सागूनट फेयल हुवा देवता
साधु का भेषदिया दे और देयता फिर नाटक नृत गीत महिमा
रते फिर देव कही पर पंच प्रकार की शृष्ठी वर्ण करते हैं कही पर
व वर्ण के पुलों की शृष्टि करते हैं कही पंच रसां वाला पानी की
रते करते हैं कही पर अनेक सुगंधी वाला जलकी शृष्टि करते हैं और
दी २ पर देव धूप धर्याते हैं महा मुरी मानते हैं कही २ पर माधु
रम्य र्मथाग कर शरीर छोड़ने हैं कही पर उत्तम धावक शरीर
गाने हैं वहां पर देवते जाकर महोत्सव करते हैं सुगंधी वाला पानी
रकृष्ठी नृत गीत करें, जैसे गज सुम्न माल वरुण धावक ने शरीर
गा देव महिमा करी धर्म की ॥३५४॥

सुर धमन शस्त्र शिखी जलगत पशु नर व्याल महाबल को ।

देण में तरु बेल उगाप करे, पल फल फली सघणे दलको ॥

लघुकाल विषय रच वाम पुरी विपनी ग्रह वास मही यत्न की
बहुकाल करै न करै शिखी मुनिराज करै पद उजलको र३५॥

अर्थ—श्री भगवत न कहा है के देवनों की ऐसी स्थिति राशि
हैं जो शस्त्र को अग्नि को जल पवन पशु नर सप को महापन्नवन
को भी एक क्षण में वृक्षलता चत्पल करै फल पुष्प पत्र संयुक्त यो
काल में रचलें ये धमन योग द्वारा नगर बजार हाट शुभन संयुक्त जैसे
धनपत्नी महाराजा के चक्रवर्त के त्रिये चो बढाइ रत्नादिक १४ रत्न
ये उनके जो अधिकार में हैं देवते वह चक्रवर्ती के त्रिये सब हु
तैयार करते हैं एक मुहुर्त में नर से नर दो वक्त रोच पैदा करते हैं
देव ऐमे ही यह भी जायना और भी ऐमे २ अनेक काम कर सके
लेकिन देव गति मे से देवते सिद्धे मुक्ति में नहीं जा सकते क्योंकि
बिना मनुष्य के धैर्य शरीर वाले मुक्ति में नहीं जाते मुक्ति में सं
भाव साधु ही जायेंगे ॥३५॥

जल माहि तरावन पाथर की गिर पाट उडावन खेल करै ।
नर नारि पशु अहि कील धरै अथ सर्पणि दे शुद्ध बुद्ध हरै
शुभको सम जीवत देख करै कह जीवन शत्रु रूप धरै ।
इमशक्ति धणी विष है सुरकी मुनसी नहीं जोमव सिंधुतरै ३

अर्थ—देवते पाणी ऊपर पपाण को भी सीरा देते हैं, जै
भीरामचन्द्रजी महाराज ने फटक यानि सेना को पार उतारने के लि
सागर के ऊपर से पत्थरों का पुल बंध्या था मगर देवता पथरों व
उडाकर २ आपना खेल पूरा करते हैं और आपनी इच्छा के अनुसा
नर नारी पशुर्षो सर्पादिक को कील के रखें और उनको अथ सर्पा

निद्रा दहर चेतन रहित के जैसा बना देव्य अगर कहीं पर चाहें तो मृत्यु को जीवित करके दिग्गा देव्य और कर्मी पर जीवित को मृतक के समान कर देव्य ऐसी २ अनक शक्ति देवता म हैं लेकिन साधु महात्मा जसी शक्ति नहा हैं । जो देवता देव जन्म से मूर्ति लेनेवे और जन्म में माधु मोक्ष लेते हैं मिद्ध उद्ध होजाते हैं ॥३५६॥

द्वग हीन सुलोचन घतम ए सुख गु ग सुवाच भए जिनते ।
 उपु कुष्ट दुग्ध अनग छपि अति दीन महिप भए तिन ते ॥
 लघु बुद्धि विचक्षण रात्रयए मन रक्षित अद्धि करै छिन ते ।
 सुरशक्ति घणी जिनराज कही छट मस्त सुधारु रहे गिनते ३५७

अथ — श्री भगवन ने कहा है के देवतों की शक्ति ऐसी चाहे तो अथ को सुन्दर घडे बना जाता कर देवे सुग के गूगे वाले को महा सुन्दर खोलने वाला बना देवे विहों के शरीर में महा कुष्ट रोग होवे और दुर्गंधी वाला शरीर होवे ऐसे २ जीवों को देवता कामदेव जैसा शरीर बना देवे सुन द्र और जो महा रक जीव होवे उनको देवता प्रथी पति के समान कर देव । सुग को थोड़ी बुद्धि को चतुर विचार वाला चतुरों के शिरोमणि बना देवे ऐसे २ काम देवता करें तन्त्रिण में मनरन्ध्रत आशा पूर्ण करें जैसे देवता किसी को चितामणि रत्न देकर चिता मिटा देवे परन्तु किसी को केवल ज्ञान नहीं दे शकते हैं । इस वास्ते श्री वीतराग देव ने कहा है के इ मनुष्य ? मनुष्य का जन्म दुर्लभ से पाया है बुद्ध पुत्र तान जप तप सेवा भक्ति करने गुरुदेवों की सेवा करे ३५८॥

खिणमो पहुचाण दूर घकी लघु खेच विपय गहुघा पसर ।
 कहु सीस ग्रहै नरको पशुको कर चरण देम विदेम भरे ॥
 तिह फेर चुने रच सीस धरै तिह जीवन को नहि मार परै ।
 इह प्राक्रम देव महाबलका पर शक्ति नहीं निज मुक्तिकरै ३५८

अर्थ—अनेक योनन सब व दन तिए मात्र मे ही पहुचा
 देव जैसे समुद्र मं से जिनपाल को सेलक दवन चम्पा नगरी मे पहुँचा
 या पौर जौर छोटा क्षेत्र हो तो बइजार परसे (पसरे) एक प्राग्भी
 पुष्प का या पशु का कोई देव शीस उतार कर लेवे और उसका चूण
 करके चारा तक उडा देव फिर उसको इन्ठा कर जब उमना शिर
 लसी प्रकार से कर देवें परन्तु उस ज्ञान यान को पता नहीं लग
 किधिमात्र दुग्ग न होव ऐसी २ शक्ति देवता मे ह । नमा चाह सी
 पर देवे परन्तु इस नाम मे देव गति से मुक्ति नहीं प्राप्त कर सके
 हैं ॥३५८॥

दिनको रजनी निशि वापर ही हिम ग्रीषम २ शीत करै ।
 दिन काल विपय वर्षा रूतहि वर्षा ऋतु में विपरीत धरै ॥
 विप अमृत करुण को मणि ही दग पायक कानन ऋद्धि मरै ।
 जलको घल भूमिकरै जलही सुरशक्ति घणी मुनि वाक्खरै ३५९

अर्थ—देवता मे शक्ति ह दिन को रात्रि को दिन कर देव गर्द
 ऋतु को ग्रीषम ऋतु करे और ग्रीषम ऋतु को शर्द ऋतु करे ग्रीषम
 काल को शीत काल करे या शीत काल को उष्ण काल कर देवें और
 विना वर्षा ऋतु के वर्षा कर देवे वर्षा ऋतु को विपरीत कर देवे और
 विप को अमृत करे, मुधा को जहर कर मणि को ककर कर वनर को

रत्न करे, दारानल म बुसुम (पुष्प) पर दवे जलमे वन, वल मे जल करदवे ऐमी २ शक्ति देवता मे हें परतु मोच नहा लेसके हें ॥३५६॥
 उर्रो फहु गर्भ गटावत हें चहु भात करे शक्ति चिप्र सही ।
 नहा खेद फहु जननी गभ सुर शक्ति प्रभाय थापद लही ॥
 फहु नामिथी नामि प्रवेशतही फहु जोनि थकी फुन योनि वही ।
 फहु नामिथी योनि रिपय थरु योनिथी नामिरिपय सुर शक्ति वही

अर्थ — एक २ दय हिरण गवेपि जमे गर्भ गटापन की रचना करनी चाहते हें जैसे किसाना स्त्री का गभ गटा देवे शीघ्रति शीघ्र पर तो कुछ भी पिछा गभपती को गभ क जीव को नहीं होये और ऐमी जल ी कर करते हें जीसे उसको मालूम भी नहा पड़ । मालूम पडने के पार भद हें एक तो नामि से निराने और नामि से प्रवेश करे, २ योणि से निकाने और योणि से प्रवेश करे गभ मे २ नामि स निकान और योणि स प्रवेश करे गर्भ मे ४ योणि से निराने और नामि से प्रवेश करे गर्भ मे ऐमी शक्ति देवता भ हें ॥३६०॥

इक दय फनु हल खेल करे पणु मानय सीम रगाय धर ।
 तिड देस इस फिर ठाम बुठाम सवार धरें मन मोद मरे ॥
 इरुदेय महागलि चिप्र गति दुख द्रव्य उद्धान चलत फिरें ।
 इम दीप तणे गिरदे इतरार सुग्राई भप इम शक्ति सुरै ३६१

अर्थ — एक २ ग्यते तेन कनु हल करत हुये मनुय का पणु का सिर गटा देव और उरर का गभ कर देवें फिर ऐसे रूप को देख देस के हमे और आपस मे कनु हल करे फिर इनका मिर टिकान २ पर दवे ठिकाने करवे आपन मनमे गवेदर्य धरतहें दयताम ऐमा गति

इं और २ देगो एव देवन महाबलवत शीघ्र गति से कोइ वस्तु उठा
 लके और इम जवृद्धीप के चारा तक फिर के २१ वार चक्र तगारें,
 और उस गिरती हुई वस्तु को भूमि पर पड़ने से प्रथम पकड़ लेवे ऐसा
 शक्ति देवता में है लेकिन मुक्ति की शक्ती नहीं है ॥३६१॥

अति प्राक्रमवत सुनानगुणी बहु कारज माधिक लोकर तणे ।
 नहीं शक्ति मुनिवृत की तिनम नहीं श्रावक कीवृत देस मणे ॥
 इम कारण सम्यक्वत सभी मुनिको पद उत्तम ऊच गिणे ।
 तिनके पद परज पूजन ही रहु मक्ति ररै जन दास बनै ३६२

अर्थ — श्री प्रितराग देव न कछा है के देवते अति बलवत प्राक्रम
 में पूरे और चतुर गुणवत संसार के वस्तु से कार्य सिद्ध करणे में
 बड़े होनहार हैं परंतु साधु महाराज ने पंचमहावत पालन की शक्ति
 नहीं लेकिन श्रावक के भी १२ व्रत नहीं पाल मरते हैं और होते हैं
 सम्यक् दृष्टि विवेकी गुण मही है और सत महात्मा का पद उत्तम
 जाणे आपन से उचा मानत और उन्हों के चरण कमला में उदना
 नमस्कार करके सेवा भक्ति करते और सेवाक धन के रहते मसुर हर
 समय ॥३६२॥

विषु मोह महाबल साधु हणें नहीं शक्ति सुरिंद महाबल की ।
 सुरतेन मरे मुनिलोक अलोक प्रमाश करै दुति कैवल की ॥
 सत्र द्र अशक्ति करै करणी मुनि मोक्ष महा पद उजवल की
 इम कारण देवमहा मुनिका धरभक्ति मरिष्य महाफलकी ३६३

अर्थ — इस जीव का परम शत्रु है मोहनी कर्म महा बली है
 महा संसार में भ्रमण करने वाला है जिसको महामुनि जन उस मोह

कर्म का पाप करते हैं, ऐसी शक्ति तो देवता के इन्द्र में भी नहीं है तो छोटे देव का क्या कहना है, और इन्द्र देव से नहीं होनी संत महात्मा लोना लोका में केवल ज्ञान की उक्ति प्रकाशते हैं, मर्य देव त्पी इन्द्र भी अशक्त है मोक्ष साधन की करणी स करणी तो महा साधु महात्मा कर सकते हैं इसी वारन देव इन्द्रादि साधु महाशक्ति के चरण कमला में नमस्कार करत है और चित्त में भाव भक्ति धरते है जो आगमी काला सुख अक्षय्य ऐसी भक्ति जो भक्ति है वह सुगति सुरूप सुशाल सुतप सुदा सुगुण सुपरिवार सुवरा सुगन भागमु लक्ष्मीसुपुत्र भगवत की भक्ति देने वाली है ॥३६३॥

निनराज समोमरणे रुद्र मोक्ष जघन्य पदे गुर सेव करै ।

उत्कृष्ट पसेन इन्द्र समेत यमग्य मिते चित मोक्ष भरै ॥

निन जन्म नमय रिख म्य समय वर केवल पानन मोक्ष करै ।

मय इन्द्र महोत्तव आय करै शुचि अग उपाग सुभक्ति भरै ॥३६४॥

अर्थ - देवादिदेव तीर्थकर देवता के समोसरण म जघन्य तो एक छोटे देव सेया म होते हैं भक्ति करने वाला और जय उच्छ्रिते हाते हैं तो असांग्याते देवत होनाते हैं सारे इन्द्रादि देव परिवार सहित आवे तत्र हो गते हैं और मय मित्र सचनादि मितकर आवे हैं और श्री तीर्थकर देवता जन्म विद्या केवल ज्ञान निपाणादि का मोक्ष करने के लिये ६४ इन्द्र मिलकर आवे हैं खुशी मनाने हैं और श्रंग उपग से भाव भक्ति करके हरे भरे होनाते हैं ॥३६४॥

निन काङ्ग प्रदेश सुदट करै बहु रत्न प्रदेश ग्रह सुचने ।

विह मेल रचे सुर वैश्वय को बहु रूप जनेयुत धृन्द गुणै ॥

बहु द्रव्य रचे युत ऋद्धिपुरी वनसिधु चम् इम आर मुने ।
मुशक्ति धर्णा नर्ही मुक्तिमई मुनि मक्ति रर तदि देन धुने ३५

अर्थ — देवी दरते नर कोर किमी समय म वैश्य परन क
ग्याल हो तो आपन शरीर के अन्दर म आत्म प्रदेश निगले को
अमरयात योजन का दड करे अनर प्रकार के विरिज वर्य या
रत्नोंदि के पदेश रिचे और आपन प्रदश रत्ना के वैशिय री पि
जैसी अपनी इच्छा हो सो रूप घना सकता है विरिज रूप करे अन
द्रव्य वस्तुयों को घना दवे जैसे अनर नार रचे घर हट हवैति
वनार ऋद्धि सहित करे या वृक्ष लाग फल पूज जागर धलय
घनचर संचर पहादिक मागर गरी छरोवर यात्रकी मच्छ कच्छा
अनेक जाति करे वैश्य से और सीता लगी घोड़े रथ पैदल गत
प्रकार के शरत्रभारि ऐसे और भी रचना करे देव ऐसी २ शक्ति दवत
मे वताह है भगवन ने पर तु मुक्ति लेन की शक्ति नर्ही मुनिजा त
आपनी आत्म शक्ति से लिया है अमर पद ॥३६॥

गुण पूण सयमवत मुनि मुर तप उलय चले स्व वले ।
इकमास प्रयोजित व्यतर को उरगादि दुमाम उलय चले ॥
इकमाम हिमाम बंधे तरते असुरो ग्रह तो इम इन्द्र वले ।
इर मल्प दुगे २ ची नवते पुनते मुनि उत्तल सरं थले ॥३६६

अर्थ — जो साधु संयम में तप जप मे सेर विनय मे जल स
मे पूण हो वह मुनि गुणवत है उसका तप तेज देतो कैमे उपर जात
है अपने धम के बल से देवता के तेज बल को उलय
तेजवत होवे (एक मास के साधु बाण

और दोमास का साधु होवे तो नाग कुमारात्मिक नर जातिसे भयणपतियों से ऊपर जावे ३ मास का साधु होवे तो असुर कुमारासे ऊपर जावे। चार मास का साधु होवे तो तारा ग्रह मे ज्योतिषी द्रों मे ऊपर जावे। पंच मास का मुनि होवे तो चन्द्रमा सूर्य से ऊपर जाव। छै मास का अणुगार होवे तो सुप्रर्मा ईशान देवलोक कल्पा से ऊपर जावे। सात मास का ऋषिशिवर होवे तो सं कुमार महेन्द्र दो कल्पों से ऊपर जावे आठ मास का सत होवे तो ब्रह्मदेवलोक लातन देव दो कल्पों से ऊपर जावे। नव मास का महात्मा होवे तो महा शुद्धदेवलोक सहस्र देव लोक दो कल्पों से ऊपर जावे। दस मास का भ्रमण होवे तो प्राणत प्राणत अरण अच्यु ये चार देवलोक कल्पा म जावे, ग्यार मास का त्यागी होवेत नर भीवेग म जावे ऊपर, बारह मास का माहण होवे तो पंच अनुत्तर विमान वार्मा दवा म जावे ऊपर परन्तु त्रिपक श्रेणी में बढके सत्र से ऊपर सारे लोक को तनवरसे अलो-लोक की सधि में जा विराचैगे ॥३६६॥

सलोक विषय नर नारि घणे मुर उदन सेवन मत्र लिखे ।

कर ध्यान रचे विधि पूजन की सुगु सपति को बहु राज विपे ।
जगमान कुमान कहं जिन नी गिन कारण सुमान मिद्वान्त लिखे
इम कारण देवनमे मुनिमे हम वदत है मुनि को हर्षे ॥३६७॥

अथ — इस ससार में बहुत स्त्री पुत्प देवी देवता को वन्दन पूजन करते हैं और मन्त्र जपे जंत्र लिखे ध्यान धरें और बहुत सामग्री के साथ उन देवी देवता का पूजन करते हैं सुगु सपति पुत्र पुत्री स्त्री राज अद्वि सिद्ध इन्द्रान वानि ऐसी आशा करत हैं कहते हैं

हमारे रोग शोक दुःख चञ्चल मरण मर्त्य स्रष्ट मिटा लो ऐसी दुनिया
 कहती हैं। और भगवान ने इस प्रकार से कहा है। वे जगत् के
 जीवों ? कार्य से मुक्त करते हैं क्योंकि विना रोटी गाय भरे पेट म
 सत्र नहीं आता ऐसे ही विना अन्न के त्यागे मुक्ति नहीं मिलती है
 अथवा त्याग जैन सिद्धान्त में वर्णन है कि विना दया ज्ञान ज्ञान त्याग
 वैराग्य के मुक्ति नहीं है। इसलिये आप लोक दयता कि आशा छोड़
 दो और जो कुछ चाहते हो ता मत महात्मा का सेवा करो उदना
 सतकार पुना स्तुति गुण गाओ देवता ना दे मरता ना ते मरता हैं।
 मुक्ति मुनि महात्मा सत्र कुछ कर सकत है मुनियों को देवता भी
 नमस्कार करते हैं ॥३६॥

धुर एव मुहुर्त्त अतर माहि अनान अपूर्ण आदि दशा ।
 उपरत मपूर्ण ठेह मई दुतिया सुज भोग मउ सरिसा ॥
 जब यापु रहे पटमास तमे तृतीया दु ल शोभ त्रियोग वसा ।
 इमकारण भापन है त्रिदशा शुभ र्म नरी सुरलोक धसा ॥३६॥

अथ — देवता को त्रिदश क्या ? कन्ने हैं ? क्या कारण है ?
 भगवान के वक्त पहले जिस वक्त जीव दय गति में आकर सिद्धा में
 पैदा होता है तो एक अन्तर मुहुर्त्त तत्र अपूर्ण होता है। और
 उसने बाद पूर्ण पर्याप्त हो जाता है। फिर उसके बाद पंच प्रयाप्तानि
 सहित देवता का शरीर सपूर्ण हो जाता है उस वक्त जन्म सिद्धा
 के ऊपर बैठता है और औपिज्ञान का उपयोग लगता है फिर पूर्वाक
 भवा का स्वरूप जाना और देखा तो उत्तमान काल की बात जानी
 आगमी काल की बात देखा इसलिये पहले एक अन्तर मुहुर्त्त के बाद

तो २ सोच विचार किया देखा जाणा ओर सपूर्ण शरीर पाया सुख
 भोग विलासों में लगा यह (दुसरी दशा है) अत्र तीसरी दशा कहते
 हैं अत्र आयुष्य छै मास की शेष रहती है । तत्र तीसरी दशा होती है
 म तत्र आपने मन में दुःख प्रियोगादि से बल हीण होना ज्ञात होने
 लगा तत्र पश्चात्ताप करने लगा हाय २ यह मेरा सुख छोड़ना पड़ेगा
 इस कारण से यह तीसरी दशा कही है । जो सुभ कर्म क्रिया करेगा
 वह सुभ गति पावगा उत्तम देवलोकादि यह भगवान के उचन
 ॥३६८॥

॥ नव रस रचना-दुमला छन्द ॥

तत्र रूप प्रभा पट भूषण की भवनादि छत्रि सुमिगार कहें ।
 तत्र प्रात्रम वैक्रम को कण्ठ गुणम रस गीर स्वरूप लहे ॥
 दुःख मोचन को सुख देनको सुर दयाल भए करुणा सुगहै ।
 तिसवत भए भयके करणे रण क्षेत्र विषय रस रुद्र रहै ॥३६९॥
 सुख भोग विलास हुलाम विषय नृत गीत रसे रस हास भवे ।
 अत्रिण कुगध कुरूप रसे अमनोगम माहि गिलान ठरे ॥

तत्र माल लमा परके डरते भयवत भए रस भीत लवे ।
 रस चित्र निन्द विभूत लखे रस सत समो सरणे सुहवे ३७०

अथ — श्री निन्देव ने दुनिया के विषय नव रस बताये हैं,
 और देवों में भी नव रस है जो यहां पर निर्देश किया जाता है ध्यान
 से पढ़ें क्योंकि इनके पढ़ने से विचार उत्पन्न होंगे अत्र सत्रके नव रसों
 की रचना करते हैं ऐसे देवता का शरीर शरीर के रूप वर्ण की
 सुन्दरता वरत्र अभूषण अभरण की क्रांति भवन विमान आवास की

छवि चमक पड़ती इत्यादिक मु ंरता को देगें तो उसमें सिंगार रस उत्पन्न होता है ॥१॥ बल प्राकृत फोटो वैक्य करना और युद्ध करना इत्यादिक कार्य करने में सहासिक हो उसको वीर रस कहते हैं ॥२॥ चय इथानु भाव आवे दु स्त्री को दुग्गी दस उसका दुग्ग दुर करने लगे सुग्ग देने लगे उसको पर रण रस कहत है ॥३॥ चय देवता फीर क्रोध करते भयानक रूप धारे पिशाचरत अरु जब संग्राम करे आयुद्ध करे शस्त्र चलाये तो उसको उस वक्त रुद्र रस कहते हैं ॥४॥ १३२ जब प्रश्न होय और सुग्ग भोग भोगें गान्धरी गीत वचना के राग रग म मगन होवे भगवत की पूजा भक्ति म आन्तर मान तो उसको ह्यास्य रस कहते है ॥५॥ जय अपमान वस्तु दुग्गै वुरूप कुचर्ण माओ अगम गति देग्ग तय मन से उसका दुग्ग माने तो उसे निभसरम कहत है ॥६॥ जय काल आया जाणे अपणा वनगत वगैरे भय दवे भयवत होये तो उसको भय रस कहते हैं ॥७॥ जय देवाधि दन की शानादि विभूत देव विभो दवे तय अद्भुत रस ८ होता है ॥८॥ जय तीर्थंकर देव के समोसरण आया भगवत की वाणी सुने अर्थ महण करे और प्रश्न पूछे गुरी से तन उसको शानि रस कहते है ॥ ऐसे जो नव रसा को जाणे यह चतुर ॥३६६॥

दिस दक्षिण उत्तरलीक दुधा। सुरसास दुधा तिह इन्द्र दूधा ।
 बुद्ध आयु बढ़ावल रिद्धि तथा दिम दक्षण ने उत्तरे पिन्धा ॥
 सरलोर तणे रिच मेरु गिरि जग मध्य दिशा निहते रसुधा ।
 दिगपाल करी सुरसाय सजे जिनमे जिन वैन पिपुष हुधा २७१
 अर्थ — देवलोक के दो भे हैं एर तो उत्तरार्द्ध दुसरा दक्षिणाध

से ही देवजो के दो वासे हैं और दोना वासों में दो २ इन्द्र भी रहते एक ४ जाति जुद २ भे हैं । दक्षिण दिशा जाने से उत्तर दिशा जाने विशेष हैं आयुष में शक्ति श्रद्धि में भय करते नहीं कीसी का योंकि सारे लोक के मध्य भाग में मुमेरु पर्वत है उस मेरु पर्वत से दिशा गिणी पूरुदिशा १, अग्निगौण २, दक्षिण दिशा ३, नैऋत्य गौण ४, पश्चिम दिशा ५, वायव्य गौण ६, उत्तर दिशा ७, ईशान गौण ८, यह आठों दिशा हैं पूव में आधा पूर्ण दिशा दक्षिण की तफावत पश्चिमतक एक इन्द्रकाजासा है आर आध पश्चिमसे लेकर उत्तर दिशा आये पूर्व दिशा तक दूसरे इन्द्र का वास है जैसे एक रोटी काटी कर लेवे तो ऐसे आधा लोक उत्तराय आधा लोक दक्षिणार्ध से मुमेरु पर्वत भद्रशाल वन से शोभता है इसी प्रकार से ८ दिशा पाल आठ दिशापाल देव गन रूपा पवत पर निवास करते हैं और श्रद्धिबत हैं उनके साथ मुमेरु श्यामि सुदरान द्बराण शोभते हैं ऐसे वने २ देव के अमृत मक्ष वचन सुनो तिनही सेवा करो तन मन ॥३७१॥

देश दक्षिण लोक पताल विषय चमरेन्द्र पिराजत भौनपति ।

तेनके सिर उपर उर्ध्वलोक सुशक्र सुरेन्द्र अनूप मति ।

इस ही बल इन्द्र सु उत्तर में तिह ऊपर इन्द्र ईशान वती ।

इस ही इनके उनके उपरे वर इन्द्र विमानपति सुगति ॥३७२

अर्थ —अथ देवेन्द्रों के नाम लिखे जाते हैं दक्षिण दिशा के पताल में चमर चचा रायवानी हैं वक्ष पर असुर कुमारो के इन्द्र चमरे इन्द्र के नाम से बोलते हैं सुधर्मि सभा में सिंहासन उप

विराजमान रहते हैं आपन मय परिवार मशित शोभा पाते हैं और इनके भी ऊपर उधलोक समदिश सुधमा दधलाक सुधर्मा विष्मद विमान की सुधर्मा ममा म सुधमा इन्द्र महागण विराजमान रहते हैं स्वपरिधाययुक्त ऐसे ही इस प्रकार त्रिगा के पतान म बल संचा गंधानी हैं यदा पर अगुरदुगारा की बली इन्द्र नाम म बालने हैं यह भी सुधर्मा ममा में मिहानम उपर विराजमान है स्व परिवार के माय प्रसन्नता पूष्य करते हैं और इनके भी उपर उधलोक समदिश इशान दधलोक इशान सुधर्मा म विराजमान रहते हैं, इशान इन्द्र बली इन्द्र के सिर उपर लोक म इशान इन्द्र आपना हुकम चलाते हैं ऐसे ही उपर से समझ लेना चाहिये सर्व नाम से जो २ इन्द्र महाराज हैं ऐसा कथन जित पुत्रों का है ॥३७२॥

इन्द्र मयना मु ईशान मिले इन्द्र ठाम त्रिपय द्वित रीत करे ।
 इन्द्र त्रित कारण युद्ध मने बल प्राक्रम फोरन मन भर ॥
 थर जायत शक्र ईशान जय तर सतदुमार की ध्यान धर ।
 बहु प्राण भाज जिह मीय दण बहुमान लण चित्त बर हरै ३७

अर्थ — किसी समय में शक्र इन्द्र ईशान इन्द्र दोनों मिल कर किसी एक ठिकाणों बैठ और आपने आपस में मित्र मार करते और बहुत उपकारे वही पर कभी किसी कारण से परस्पर होने लगी और मंग्राम होने लड़ने कि तैयार होगइ संभाम लड़ने लगे बल प्राक्रम लगने लगे शत्रु चलाने लगे कठोर वचन सुनाने लगे पंच प्रकार के संभामी अणिष्ठा सजाने लगे परस्पर युद्ध करने लगे युद्ध करते न पानेना धर मए बहुत चुर २ शरीर होगये और दोनों ही कहते हैं देव

कि हमारे को फोड़ें फिर सन्ततुमार का ध्यान करने लगे फे हमारे आके जुदे २ फर देव तप बह तीसरे देवलोक याज्ञा देवता आवे और गेना को घमगाया फिर गेना जुदे २ भाग गये शर्म ग्याके मत्तुमार देव ने क्या तप किया इमन पूर्ण न म म बहुत लोगों को सुग दिया तन मन से मत्र जीवों ने आनन्द माना सुख पाया और इस जीवने बहा पर प्रप्त पुन्य उपाचन किया हैं इस कारण इसका तप तेन मया नहीं जाता सत्र इरते हैं इसके समुत्त ॥३५३॥

सुर उत्तर वैश्वरूप धरी उत्तरे इत्तर इत आगत हैं ।

कन्दु दिन सात्थ ते निज मूल शरीर लई फुन धामत हैं ॥

इकने गिए भरय अमरय लगै तन धारण शक्ति मुहागत है ॥

रचना सुर कल्प लगै प्ररणी उपरै नहिं लथि फुरागत हैं ॥३७४

अथ — देवते आपने मूल शरीर से उत्तर वैश्वरूप करके रूप आपने स्थान से चनते हैं । और किसी दूमेरे स्थान पर जावे या इहा पर आवे कभी किसी कारण से आपने जावे तो मूल के वारीर से आवे कारण पडे तो जैसे चमरेन्द्र सुपर्मा देवलोक में गया बहा पर पद्रव किया हटना मचाया उम ममय शम्ने ने दग्गा और उठाके चलाया बत्र आता चमरेन्द्र ने देव फिर् भागा आगे चमरेन्द्र पीछे बत्र आते इरना हुआ श्री अरिहंत ज्ञान पुत्र वर्धमान जी के शरणे में चला गया और फिर इन्द्र ने पिछे विचार किया यह यहा पर कैसे आया हा ? हा ? हा ? भगवत का शरणा लेकर आया हैं मेरा बत्र भगवत को आमाता देगा इम वास्ते में शीघ्र जाकर बत्र को पकडू ॥ फौरन पिछे चल दिया आया भगवत के पाम आके बत्र परडू लिया बंधना

करके १२ व्यापरा सुमा याचना करी इम कारण से मूल के शरीर ७
 आया था ऐसे कारण से थोर भी जो देवता वैश्वय करे तो एक रूप से
 अनेक प्रकार के रूप करे संख्याते असंख्यात रूप कर लेते हैं तेम
 शक्ति कही हैं पर हैं १२ दवलोक तक और उमर के देव वैश्वय नहीं
 करते हैं ॥३७४॥

तन भाग असंख्यम अंगुल की भव धारण आदि समस्त तणे
 उत्कृष्ट पद १२ सात लगे विच भेद अमरय जिणद भणे ॥
 सुर उत्तर वैश्वय १२ लघु मित्र संख्यम भाग लघन्य पणे ।
 उत्कृष्ट सुयोजन लाए लगे इस अतर भेद अमरयणणे ३७

अर्थ—प्रथम भव धारण समय शरीर की औगहणा सर्व देव
 देवतों की अंगुल के असंख्यात में भाग की होती (जब आके गर्भ में
 जन्म लेते हैं उस वक्त) फिर उसने बाद बढ़ती २ केइर की ७ हा
 की हो जाती हैं । जपय तो अंगुल के असंख्यात में भाग की हैं औ
 उत्कृष्टी सात हाथ प्रमाण की है । परन्तु भगवत ने तो अंतरे प
 औगहणा के भेद जुदे २ करके संख्याते असंख्याते कह बता दिर
 जिन-द्र देवता आपने मूल शरीर से निजाल के उत्तर वैश्वय शरी
 करे तो उसका प्रमाण यह है सूक्ष्म रूप में करे तो जपय अंगुल
 असंख्यात में भाग का करे उत्कृष्टा करे तो लाए योजन का क
 और इसके अन्तर में भेद बहुत असंख्याते हैं । केवल शान्ति जाण
 हैं ॥३७५॥

पट मास रहे जर आयु तवे कुमलावत फूल की माला गले
 सुर चीर मलीन लसे अपने बल हीन हुलास विनोद टले ॥

सबसाल समय अति आरतही प्रिय मित्र वियोग दुःखके मने
नाह। देवरो जीवन होत तये इम भासत है मुनिगव सुते ३०२

अर्थ — देवताओं कि आयुष छ मान रोप रहन है न्य अने
गले में जो पुण्या की माला होती तव वह कुमचा जात्र है और दृष्ट
म वस्त्र मलीन अनेक वस्तु महेल विमान आन लगन है हर अरुण
बलहीण दया फिर चिंता अधिक होती है प्रसन्न बन हाय है
और विपरीतता आगद यह क्या होगया ? आधिमान में वनरोग
लगाया तव जाना कि मेरा जाल आया मैं किउ गन के मे किम गत
म उत्पन्न होवु गा ? इम प्रकार जाए के आर्त ध्यान में पड़ जान है
फिर स्त्री मित्र परिवार विमान भजन आदि को वैचा ता मरा दुःख
होगया जिन देव न कहत हैं मुनिराजो को के इ मन्त्र अगिर शोक
चिन्ता परित्यागन कर देवो सत्य वाक्य कहे ? अथ ध्यान न करो
धर्म ध्यान मे मन लगावो ॥३०६॥

सबसाल धरें मुर आरत को हमारे मित्र भोग विलास टरें ।
इतते चल गर्भ विषय पर क घूर वींगु रक्त आहार करै ॥
बहुमाम बसे तम घोर विषय दुर्गम मरा दुःख गर्भ भरें ।
जिसदेव जिनेश्वर होवन हैं इममा नहिं पितत शोक धरें ३०७

अर्थ — जब देवता को आपने कल धा समय दखा तव विना
हुइ बहुत अब क्या किया जाय ? तव अनेको आपन सुख का आन
ध्यान आया और अतियत दुःख इअ विसार है है हा ? मेरे
समान काम भोग छूटेंगे यहा से मैं और तम में जा पड़ गा
सयसे पहिले पिता का वीर्य और शक्तता रक्त का आहार

यह तो महा अपवित्र वस्तु है हा ? हा पट्टा दिना तर वगैरे
 लटकना पट्टा मद्य पीर अंधकार म महा गम की दुर्गा में दे
 मोचकर महा दुर्गा होता है वस्तु भगवत १ ऐसा कहा है वे
 दवता द्य पणै म चरु तथ कर द्य हागा हाव व जीव किन्तु
 शोक सताप करना नहीं स्तका चित्त मदा प्रमत्त रहता है जो कि
 भोग म अस्त है यह विना करत है ॥३७॥

लए जन्म भविष्यत् मानसो अरु आर्न दग मुधर्म कृने ।
 हर्षे गु गुन्दर भाव धरं चित्तये पुन धर्म करो गु फले ॥
 जल भू वन मे नियंच रिपय मुर भूरत आरत माहि रले ।
 निज रमं महा बलरत भाण इम भावत है मुनिराज भले ॥३८॥

अथ — नव दवता १ औधिहात मे उपयोग लगा कर दे
 आपना अगरा मत्र जन्म तो उम पत ररा ? कहता है मैने अप
 मत्र प्राप्त करने की बात जानी है कि मे मनुष्य योगि म आर्न दे
 मे उत्तम कुल में दया धम वालें म निर्दय जाति में कुल जाति
 कलत्रित है नहीं और कुल जाति हीण न हो फिर अरत मत्र मे य
 हर्षयत हुआ ऐसे स्थान पर जहा नव तप धम ध्यान पुत्र्य गन संय
 दि त्रिया करू गा फिर रग या मुक्ति जाऊ गा और फिर म पू
 पाणी बनाएणि घायु तेउ तिर्यंच मे नहीं जाऊ गा परतु जैसे ज
 कम करता है पल पाता है वैसा ही शुभ कर्म महा बलगत है ज
 को ४ चार गति में भ्रमण कराते है ऐसा भगवत ने कहा है कि
 पाणी मुनि वैसा ही करमाते है पाप से बचो ॥३८॥

इस क्षेत्र मरारण प्राप्त है जिह माहि भविष्यत जान लिया ।
 अपत्रि पदार्थ दूर कर शुभ पुगल मिंचत खेत्र क्रिया ॥
 ऋषि रूप धरि शिष्य हेत कह उपमात पिता भण्य नैन ठिया ।
 तुमरो सुत होयन योग ग्रहे तुमनो अटनावत मोहि हिया । ३७६

अर्थ — एक = देव अपने जन्म लेन जाने क्षेत्र को सोधने सवा
 रणे के लिये आते हैं जहा पर मैं जाऊँ पैदा होणा हैं और सगुरु
 अपने सुत के वास्ते अशुचि वस्तु को दूर करने के लिये और सुगंधीत
 शुभ पुद्गल अन्दर प्रवेश करने के लिये दयत आया करते हैं रूप
 परिवर्तन करके यहा आऊँ गा मुझको सुग्य होवेगा ऐसा सोच कर
 सारा उपाय करते हैं और फोड़ = देवता धर्मा अभिलाषी मुक्ति के
 इच्छा काल अक्सर जानकर आगला जन्म मुधारने के लिये देव
 साधु महामा का रूप भी वारण करने माता पिता के पास आया धर्म
 कथा सुनावे और ऊनको समभावे कह तुम्हारे ? पुत्र होवेगा परन्तु
 तुम मेरा कथन मानो तो पर वह साधु ऋषिया का धर्म लेवेगा तुम
 उमको रोचना मत ? आशा देदेना यड़े महोत्सव के साथ दित्ता होवे
 इस मेरी बात को तुम लोग मान लेयोगे तो तुम्हारी इच्छा सर्व प्रकार
 से पूरा होगी ऐसा कह आपने द्य स्थान पर गया भृगु परोहित के
 जैसा यह जिनसे वचन है ॥३७६॥

सुर काल करै त्रिया जीवत ही उपनै सुर होर सुभोग करै ।
 चर जात त्रिया विह होर भई मिल भोग करै चित शोहरै ॥
 विरहो उपजत जघन्य समो उत्कीष्ट पदे पट माम पर ।
 परिवार मिलाप नियोग इमे सुर रत्नपल्लवै मुनि वाक उरै ३७७

अर्थ—एक देवता देवी का जोड़ा मिल जाय है किसी कारण से देवता की मृत्यु होगी हो और उसकी देवी पिछे हैं तो क्या वह सत् पालसम्ती है ? या दूसरे देवताओं को पति स्वीकार कर लेती है उत्तर, स्वर्ग लोक में विवाह सादीरी प्रथा नहीं है । वहा तो मिक सुस भोगने की योगि हैं वहा पर सुहाग रंडेपा नहीं हैं जैसे इस देश से अन्य देश में जाकर व्यापार किया बहुत लाभ हुआ फिर अपने घर आकर आनंद भाते हैं । ऐसे ही मात्र लोक में धर्म किया और देव लोक में जानर सुख भोगने हैं उनका कोई शरीरिक धर्म नहीं है खाना पिना भोग विलास करना विषयों में लीन रहना यह ही उनका धर्म है और पुन्य पाप का प्रदत्त नहीं है । उस देवी के लिये उमी स्थान पर और देवता पैदा होनात है फिर उनके साथ वह भोग विषय करते हैं । मोह संबध उनसे होनाता है अगर देवता से पूर्ण देवी का मृत्यु होजावे तो उनके स्थान और देवी पैदा होजाती है वह देवी देवता किसी का सागे नहीं करते हैं जैसे कोर मर जावे तो बिता नहीं है देवी और देवता में अगर अंतर पड जावे तो सबसे जोडा एक समय से कुछ अधिन अंतर पडे तो छै ६ मास का पड़े उसके बाद जरूर २ देवी देवता पैदा हागे निश्चय ही होंगे स्त्री पति की तरह सर्व परिवार ऐसे ही संयम लेना पूर्व कथन हो चुका है ॥३८०॥

हुहु कल्प लगे जल भू धन में यिति सरय मई नियंच नरै ।

सुर अष्टम कल्प लगे नर औ तियंच पचेन्द्रिय देह धरै ॥

उपरे नर योनि विषय उपजै न समूच्छ सत्तम माहि परै ।

जिनधर्म अराधिक धर्म लहै शिव स्वर्ग विषय निजरास करै ३८१

अर्थ — भवणपति वाण ध्वंस्तर ज्योतिषी और पंडिते हमारे देवलोक वाले देव गति से मरकर पृथ्वी पारणी वनाश्रति में आकाश रूप हो सकते हैं संख्याती स्थिति वाले त्रियं च मनुष्य में आवे भी आते हैं । और ओं-गेके ऊपर के ८ में देवलोक तक के मर कर अत्रे तो वह सत्री पंचेन्द्रिय त्रियं च मनुष्य में पैदा हो सकते हैं । और एने-द्राये अस्तनी त्रियं च मनुष्य में नहीं आते हैं । आठमें देवलोक से ऊपर के सारे देवलोक के देवता एक मनुष्य गति के बिना और कहीं नहीं जाकर उत्पन्न होते हैं और नहीं सूक्ष्म में नहीं किसी प्रकार के धामोद्धम में पैदा होते हैं जो देव मनुष्य गति में जावगे और तिन धर्म दया अहिंसा धर्म दान धर्म पुण्य धर्म इन सब को आराधेंगे पालेंगे फरसंगे तन मन वचन से करगे वैद मुक्ति वैद रसंग जायेंगे ऐसा यज्ञ तिनका कथन है ॥३८१॥

समदिष्ट आराधिक सयम के शुभ दश घृति सुर होइच्छुता ।
नरलोक विषय भय मानसो बहुन्दृष्टि जहा धन वान्य मता ॥
ग्रह क्षेत्र पशु गृह दाम सखा वपु सुन्दर भूषण चातुरता ।
उल ऊच सुग्रायु अरोगपणा इहि पावत हैं मुनिनी कथिता ३८२

अर्थ — जो जीव किसी के अवगुण नहीं लेने वाला वह जीव सम्यक दृष्टि आराधन होचार्हे और वह जीव संयम साधु महाशत पाले (या) देशश्रुति श्रावक धर्म पाले, साधु तथा श्रावक धर्म को पाल कर जीव देव गति में जाय और देवता के सुख भागे आपनी आसु सुखे २ पुरी कु करे फिर देवलोक से काल करके इस मन्त्रोक्त के द्वा द्वीप में आवे भर्त्त शरभर्त्त महा विदेह क्षेत्रादिक में

मनुष्य का जन्म पापों निम्न जाति पुत्र म आर्यें उहा १० योनों की प्राप्ति हो स्वत हो सुनी भूमि कथ्यु हो दकि भूमि धागादि हा चाग सोनाहो पशुर्दास दामी हो मित्रहोव जाति मुद्ध होवे उच गोत्र होव ऋद्धि धा धान्य होवे मटल मदर हावे पशु हाथी घोड़ ऊट घैल गौ भैंसादिव बहुत होवे सुन्दर शरीर रूपवत बलवत प्राणम चतुर होवे ७२ बला पुरुष की ६४ कला स्त्री की शिष्य कला का चाण फार रही रातगुल ६५मकुल मेठकुल इत्यादिक उच पद् पात्रे । रात मन्त्री सेनापति गाथापति आयु बड़ी निरोगान पात्रे तेमे मुनि महात्मा कहत हैं जो धर्म करेगा वह जीव मुत्र पात्रे ॥३८॥

दम जात पताल गु भौनपति सग कोर नहत्तर लाल त्रिपे ।
 मुर व्यतर रौडश जात दुधा तिरछे जु थमरय पूरे हरिपे ॥
 नमचद रनि ग्रह रिच उडु दग जात चराचर भेद लिखे ।

बहु ऊध्व द्वादम कल्प परे नरपच त्रिपे अहिमिद सुरे ॥३८३

अर्थ —अत्र सव देवतों कि संख्या यह है श्री भगवान ने अधोलोक मे दस प्रकार क मुत्रा पति देवता है अमुर कुमारादिका के भवन सात कोड बडत्तर लाल है देव । सोना प्रकार के चाण व्यतर देव हैं । जिनोके दो भेद हैं आठ ८ प्रकार के पिशाचादि जाति के देव हैं आठ प्रकार के अन्न पत्नी आदि जाति के देवता हैं ८ उत्तम जाति देव उत्तर दिशा की तरफ रहते हैं ८ द्योती जाति के दक्षिण दिशा की तरफ रहते हैं और व्यतर देवता तिद्यनोक म असंख्यामे तगरा में रहते हैं । इस भूमि पर आकाश मे वासा हैं, दस प्रकार के ज्योतिपी देव रहते हैं । चन्द्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र तारे पाच चलते भिस्ते हैं और

पाच नहीं बनते फिरते हैं उन ही जगह पर सदा रहते हैं फिर इन १० नाति देवता असख्याते हैं और असंख्यान द्वीप समुद्रों के ऊपर हैं, और इन्हीं से भी ऊंचे उर्ध्वलोक असंख्याते मोहन ऊपर पहिला दूसरा त्रैलोक्य है ऊर्ना से ऊपर ३-४ देवलोक जन्दा मे ऊपर ५-६ एमे ऊपर से ऊपर गिणते जाणा सर्व से ऊपर ५ अनुज विमान हैं यहा एक देवलोक है आगे नहीं है ॥३८३॥

॥ अथ श्री सिद्ध भगवान की स्तुति-दुमल छन्द ॥

गुरलोक समी जिह हेठ रहं शिव स्वच्छ अनूप प्रभा धरणी ।
 तिनके इच्छे ऊपर सिद्ध प्रभु महिमा तिनकी जीन जी धरणी ॥
 नहि जन्म जरा मृत्यु रोग छुधा भय सोग उपाधि क्रिया करणी ।
 परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म सदा मुनिराज भए तिनकी सरणी ॥३८३॥

अथ — जो जितने प्रकार के देवता होते हैं वह सबके सब सिद्ध शिला मे निचे हैं उन सब से ऊपर सिद्ध भगवान हैं क्याकि ? सर्वोच्च सिद्ध विमान की ध्वजा से ऊरध उपरलोक साठे १०॥ जाहरा योजन से कुछ अधिऊ उसके ऊपर एक भूमि हैं । ईपी प्रभारा उसका नाम सदा श्वेत वर्ण है गो हीर से भी अति उज्वल निर्मल है पूर्ण मामी चन्द्रमा के अकार ४५ लाख योजन लम्बी चौड़ी मध्य भाग में ८८ योजन की मोटी हैं और घटती २ जाये तो अक्ष मे किनारे पर सगरी के पंख जैसी पतली हैं जैसे लकटे छत्र के अकार हैं । और इसकी परिधि १४२३००४८ योजन से कुछ ज्यादा है हम भूमिका के ऊपर १ योजन के २४ में भाग ऊपर आकाश में सिद्ध भगवान विरा

जमा है वहा पर जो पूर्ण मग्नहानी है चिन्ता मे ऐसे ० गुण है देखो कैसे २ गुण जरा नहीं भरन नही जम नहीं काल नहीं रोग नहीं सोग नहीं भूख नहीं मय नहीं व्यास नहीं उपाय नही किया गते करणी नहीं परमेश्वर है ऐसे का शरणा मुनिराज प्रश्य करने हैं ॥३८४॥

सब जान रहे मन दर रहे दु ए सुख श्वेद समाधि थई ।
 अविहार अचाहि अमूरत है नही गौत शुभाशुभ भाठ लई ॥
 नहिं वधन आयु अनायु भए मन व्यापक राम मई ।
 वसु कर्म हणे गुण अष्ट दिपे भरसिंधु तरै लहि मोक्ष गई ३८५

अथ — भय जीव सिद्ध पद प्राप्त करने के गुण प्रगट हो जाते हैं । जिसने ज्ञानायणी कर्म को नाश किया तो केवल ज्ञान के द्वारा सर्व लोक चराचर को जाये ॥१॥ दशानामनी कर्म क्षय करे तो धर्मन केवल दर्शन पावे जिसके द्वारा सब विद्वे को देखे आरल फलवत् ॥२॥ वेदनी कर्म को नारा कर देवे तो पादा पिडा से रहित होवे फिर शरीरिक मानसिन वेदान न होवे ॥३॥ मोहनी कर्म क्षय करने से धीतराग देव पद पावे जिसमें राग द्वेष विषय कषाय आदि नहीं हैं ॥४॥ अत्युष कर्म क्षय करके जीव अनर अमर पद प्राप्त करे कभी दुनिया में आकर जम नहीं लेता ॥५॥ नाम कर्म क्षय करे तो अमूर्ति हो ॥६॥ गौत्र कर्म क्षय करतो अगुरु अलघु गुण प्रगट होव न हलका न भारी होवे ॥७॥ अंतराय कर्म क्षय करे तो अनन्ती शक्ति पैदा हो इसलिये जिसमे यह आठ होवे उसको सर्व व्यापक कह सके हैं क्योंकि जीव में और परमात्मा में अंतर नहीं है चिन्होंन आठ कर्मों

को क्षय किया वह जीव = आठ गुण प्राप्त करते मुक्ति में विराजमान हो जाने हैं & गति गये ॥३८५॥

चित्त रूप चिदानन्द चेतन है अपिरल्प निरञ्जन लोकरूपति ।

बुद्ध आदि अर्न्त अनादि कहै अपिनागी यखड अनूप गति ॥
अशरीर अनिन्द्रिय प्राण नहि महिमा श्रुति वाक् प्रिय वरती
प्रणमो परमेश्वर मिद्ध सदा चित्तमो वरती समता मुमति ३८६

अथ - ईश्वर का रूप कोई नहीं है सत् चित् आनन्द मय है ।
चेतन है जड़ नहीं है संकल्प विरल्प से रहित है कर्मों के मूल से
रहित है । निरञ्जन निराकार है सर्वलोक के पत है निश्चल है परंत
की तरह सत्न से आदि है परंतु आदि भी पाइ नहीं जाती ऐसे अनादि
के भी अनादि अर्न्त जीव हैं तथा उहा का अर्न्त नहीं आरगा ऐसे
अनंत है विनाश नहीं अविनाशी है स्रष्टा नहीं अग्नष्ट है । गति
ऐसी पाइ है निम पर कोई भी उदाहरण प्रमाण ओपमा कोइ भी नहीं
मिलती है अनुपमा है और निर्हा & शरीर में से कोई शरीर नहीं &
इंद्रियों मे से कोई भी नहीं इंद्रि दरा प्राणा में से कोई भी प्राण नहीं
तीन योगों में से कोई भी योग नहीं महिमा गुण किर्नि जै बड़
सिद्धातागम में गाइ है । इस गान्ते परमात्मा भगवान् ईश्वर को बार
बार नमस्कार करो उहों कि सेवा भक्ति से हमारे चित्त में ममाधि
भावना बढती रहेगी और बुद्धि भी बढगी ॥३८५॥

जगन्नीश्वर लोकरु अधार प्रभु जग मस्तक उचम उच वमै ।

सर्व शिरोमणि लोकरु शिपा जिम मन्दि उपर ऋतु लमै ॥

सर्वान लखै निरखे तिनको छामस्त मुध्यावन शान्ति रमै ।

प्रणमो परमात्म ज्योति मइ जिहक मिमर अथपु न नमै ॥३८६॥

अर्थ — जगत् के ईश्वर हैं जगत् के प्रभु आधार हैं जगत् के मस्तर के समान हैं जगत् म उत्तम हैं जगत् म सर्व के सबसे ऊँचे स्थान पर हैं । सारे लोक के मस्तर पर जिस प्रकार से मुफ्त शोशुभिता हैं जैसे मैयूर के कलंगी शोभती हैं मस्तर पर जैसे भय उचे २ विमान घरों पर मदिग पर ध्वजा मोभती हैं ऐसे ही सब जगत् के शिर पर सोभा पाते हैं सिद्ध परमात्मा वह सर्वज्ञ हैं । केवल ज्ञानी केवल दर्शी हैं सब देखे सब जाणे और जो ध्य मल जाण हैं वह सर्व शक्ति रसमय होकर उत्तम ध्यान धरते हैं और प्रभु से प्रार्थना करते हैं ऐसे परमात्मा परमेश्वर ज्योतिमय भगवान को बंदना गम स्कार करो स्मरण करो स्मरण करन से पापों के जो सप्रह हैं वह सर्व पाप छय होत हैं । यह गुरुदवा के कर्माण है ॥३८॥

॥ कमल बध दुमल-छन्द युग्म ॥

अनूध अरुजं अमित अतुल अवलक यश अरधंत पद ।
 अज अव्यय थिर अनक पतिक अडिद अनयं अमय सुपद ।
 अलस अभुज तु चराचर लय अनूपम सरमण जयद ।
 प्रणमी अमर मयते अधिक प्रभु सिद्ध पय सब मगलद ॥३८८॥
 परमेश्वर हो परमान्म हो, परमोत्तम हो परमोचक हो ।
 परमा महिमा परमागम मे प्रतीन हृदय परतीत हो ॥
 परवर्जित हो शिर सांसत हो अजरामर हो तन सर्वेग हो ।
 सुरनाग सुमानव भव्य नमै प्रणमी शिरदेव सुरांति लहो ॥३८९॥

अर्थ — परमात्मा पाप से वर्जित है कम रूपी रजसे रहित है शत्रु मित्रजनों से रहित हैं उनके समान दूसरा नहीं है कोई उनके कोई

कलंक नहीं हैं महा यशो कीर्ति जाने हैं महा ऊचपद वाले हैं निन्दा का
 पत्र कभी घन्टा ही नहीं, जन्म कभी क्रीपर नहीं लेना कभी भी इन्की
 पत्राय भी नहीं गलती है अत्र रहेंगे व्यसे रहित मन्त्र स्थिर रहेंगे
 नद्वैत चर्चों नहीं और नभा कपायेमान नहीं हागे अक्षिपित रहेंगे
 भगवत अर्द्ध किसी के छदे न नहीं यानी दुःख म नहीं है किसी के
 स्व इन्द्रा से रहने है । और उन्को कोइ विचय करने वाला नहीं
 अत्र है । मय से रहित है अत्र है उन्हा न सुग्रा की हमारे पास
 कोइ हेतु नहीं है अतस्त भगवत को कोइ देव नहीं मन्त्रा है जैसे
 अनेक जीव चराचर योणि मे है म लोका अन्को दग्ग लेत है ऐसे
 भगवत नहीं विद्यत हैं क्यारि भगवान् अरूपी है इस वास्ते नहीं
 दिग्गते हैं और जो मुक्ति स्थान है वह तो अणोपमा है निसकी कोइ
 अमा नहीं मिलनी है वह अद्भुत रमनीक है उसको और कोइ पराजय
 नडा कर सक्ता है इस मुक्ति का शरणा ग्रहण करे जो जीव कम
 शत्रुओं पर अभिमार करत है और इनको निते तो वह जीव मुक्ति मे
 जायेंगे । ऐमा सिद्ध भगवान् इश्वर को उदना पूजा करे जोकि जन्म
 मरण से रहित है । जो अमर है सर्व विषया से रहित है गुणा के
 भङ्ग है और नरे गुण गाणे मे मदा मगल है जय २ कार है देने
 वाल है ॥३८॥ है भगवान् ? परमेश्वर हो परमात्मा हो शान् दर्शन
 से परमोत्तम हो परम ऊचे पद के धरतौ हो परम अच कोटी आपकी
 महिमा है आपका सिद्धांत परम आगम्य है निसको पुत्रात्मा जीव
 के हृदय में प्राणी आपकी ऐसी रूचती जैसे मुग्ग को भोजन और
 चतुर वाणी को ग्रहण करते है विश्वास निदचय से आप शत्रु पक्ष से

रहित हैं सास्वस्ते शिव हो उपद्र मे रहित हो जरा बुढापे मे रहित हो मरणे जंमने से दुर हो त्रिकाल ज्ञाना हो त्रिकाल दर्शी हो मुर देवलोक में रहने वाले नाग कुमार अधोलोक वाले मनुष्य मातलोक में रहते हैं जो और अनेक मज्य जीव माधु साध्वि श्वायक श्वायिका सम्यक दृष्ट जन भी आपको नमस्कार करते हैं हे भगवान आप शिव हैं आपके नाम से शक्ति प्राप्ति है नमस्कार करन से पापों का नाश होवा है ॥३८६॥

॥ अथ सर्व मुक्ताक्षर द्रुपय छन्द ॥

परम परम पद रमण करम रज वरज अमल सत ।
 अज अमर अज अटल करण मन तन वच वरजत ।
 अचल अक्षय वर अनघ अलस जम अगल अक्ष मन ।
 धरन अमर नर मरप समन गण गणधर वरनन ।
 जम धरण समण सत घट सदन अघगण हर मर जल तरण
 तस सरण परण सत्र भपटरण जयजय परम अमय करण ३६८

अर्थ—ईश्वर भगवान परसे परम हैं इनमे परे दुसरा काइ नहीं है और ऊन्हों से परे कोई भी पदवी नहीं है सारे जगत में देवलोक इश्वर परमात्मा ऐसे मुक्ति पद परे है वसने रमण रहे है और कम रूपी रज से रहित हैं विषय कषाय रूपी मल से रहित हैं । महा श्रेष्ठ हैं जरा से रहित अजर हैं मरण से रहित अमर हैं जंम ने मे दूर है भय से रहित अटल हैं इन्द्रियां मन वचन काया रहित हैं निररूप हैं चलते नहीं अचल हैं नाशनी होते अजय हैं धर परधान श्रेष्ठ हैं अघ पाप रहित अनघ हैं जिनों की यशो कीर्ति देखी नहीं जात

मिलस यश है आपके आगम शास्त्र कथने का गुण देवते भी गा नहीं
 उठते मनुष्य विचार किस ? गिणती में है । और कहते २ धरु जाते
 हैं । आपका वाली का कथन करने से देवता मनुष्य भयलुगण साधु
 शरण आशागम्य गणधर गण मुनि शिरोमणि गण ऐमे गणधरों ने
 रत्न क्रिया जो सिद्धों का ध्यान धारके साधु महात्मा इन्द्र रूप धरके
 सर्व महिमा करे तो वह संसार समुद्र से तर जाते हैं जो ऐमे ईश्वर
 परमात्मा के शरण भ पड़ेगा वह सर्व भयों से दूर होगा तो ऐसा
 भगवान की महा जय २ धर हो परम अभय मोक्ष गति में जो जाये
 जो २ भगवान के गुण गाने हैं वह आपने दूरों का ज्ञान करते
 हैं ॥३६०॥

। कमल बंध सर्व लघुर्णी मवैया वतीसा छंद ॥

मन सुपतिवर सुमति भ्रमित धरसुधर सुकृत करशुचि मनचतन
 कवि विविधि विधि सुनमस्तरण रतिसुनिरच पदवर सुजकथनगन
 रम हरष उर विरम इगपर वदन हरष धर परम भगत बन
 शिवशिवशिव निधिसरुल जगतपति जयजयजयकर शरणपरतजन

अथ —सुमन नाम के देवतों के स्वामी इन्द्र महाराज और
 अप्रमान श्रेष्ठ मति धारण हार है महा चतुर सर्व काय करने वाले
 हैं निन्हा के पवित्र हैं मन वच काया और उत्तम महा कवि हैं
 अनेक तरह की कविता करण योग हैं भगवान की जो यश कीर्ति
 करता है वह वही पर उनकी प्रतीत वाला होता है अच्छे आदमी
 सुन्दर शब्द पद रच कर सुजस कर समूह भ वस्तुष्ट प्रमोद हृदय मं
 धारके महा प्रफुल्लित नेत्र प्रधान प्रमधसुर आनन्दीन होते हैं मन

करते हैं । और परम भक्ति करते हैं गण गान रटते हैं फिर व
रहित होते हैं मुक्ति के सुखा के निगान बनते हैं और मनलोक
नायक होते हैं, नय हो ३ जयकार मेवक तुमारे शरण भ
हैं ॥३६१॥

॥ यमकालङ्कार सवैय त्तीसा छन्द ॥

अमर अमरपति चतुर चतुरप्रिय वरण वरणजम रूचर रूच
रचत रचतधुति थरन यरतचित्त अगम प्रभु अलस अलस
जसनस ससियर धवलधवलर परमपरमदुति शिवशिवशि
हरपहरपचित भगतभगतर नमननित लहिलहि दुप रिद्ध ॥

अर्थ — देव देवेंद्र के इंद्र महाचतुर बार प्रसार के अ
मरके सुन्दर २ प्रिय के भगवान की स्तुति चचके होते हैं यरत
चित भगवन प्रभु अगम है अगम है अलस है अनस शक्ति पर
परम प्रकाश ह कल्याण है मुक्ति सुखा की खान है ऐसे भगवान
हप २ चित करी भक्ति भक्ति करते मेवक नमस्कार बारबार क
लिते हैं रिद्धी तथा बुद्धि ॥३६२॥

॥ सर्गगुरु वर्ण सवैय एकतीसा छन्द ॥

वैमानी देवा देविदा तारा म्यामी तारा धृटा
निर्य लोफ है जे देवा जेपताले भव्या
सर्वेमाने वद पूजे तन्त्रे लोका धीश सिद्ध
अगोपगो छाहे नित्य आजी भाते मव्य
यागे ध्यावे शास्त्र वेता श्री गिद्ध ते वदे शाखा
कव्योचारी कव्यापार यासी सोभा भारती

तं स्वामी को रक्षो नित्य या सेवे विश्रामो चित्त

पाव मेषा माता विच एमी आमा राखी है ॥३६३॥

मोखे कधी भद्रानदी ज्ञानी साधु ध्यावे यारो

तांत तामे वासा पावे पोपे चित्त सुग्या ते ।

याको ध्यावे बंद पूजे ऋरि रीते शोभा गाथे

जीभा रू पापां कूरे छूटे सारे दुखाते ॥

दविदी धक्कट्टी लच्छी इ दत्त पुज्जत्त मित्त

सिद्ध मिद्धा बुद्ध किच्ची पावे भाव्या पाहीते ।

त बद्ध चे लोया धीश मखी किच्ची चित्तानद

सम्मण्ठी मेहा भाया सुग्वा पावा ताहीते ॥३६४॥

अर्थ — उर्ध्वलोक के रहने वाले विमानी वासी दबते तथा देवता के इन्द्र त्रिदल्लोक में रहने वाले देवता देवता के इन्द्र चण्डमा सूर्य मह नक्षत्र तारागण आकाश में वासी निचे त्रिदल्लोक में रहने वाले वायु व्यंतर देवते रहते हैं और पाताल लोक में रहने वाले भवनपति देवता तथा देवों के इन्द्र उर्ध्व में अनेक मव्य जीव हैं वह सर्व देवते श्री सिद्ध प्रभु भगवान को नमस्कार करके स्तुति करते हैं महा सुशी के माय अङ्गोपाग को नमाकर विधि के साथ तन मन से सेवा करते हैं और यशो कीर्ति गुण गायन करते हैं । शास्त्रों के जाणकार प्रयचन दया माता को दिया ने वाले सिद्धात वेदों की महिमा करने वाले महा कविश्वर छन्द काव्या के कथन करने वाले काव्य रचके आपार महा भगवंत के गुण गायन करते हैं आपने ईश्वर भगवान की नित्य सेवा शरणा लेते चित्त से ध्यावे बंदे पूजे धुक्ति पावे माता

पावे ॥३६३॥ जो जीव मुक्ति गमन का इच्छुक है । वह ज्ञानदमन
 हैं ज्ञानवंत हैं ऐसे मुनि अपि श्री सिद्ध परमात्मा का ध्यान करते हैं ।
 और उसी पद को प्राप्त करते हैं । सदा ही यज्ञ पर विराजमान रहते
 हैं और आपने जीवात्मा को पौषण करते हैं उन्हीं का चित्त समाधि
 रूपी साता में रक्त हैं आनन्द मय हैं ऐसे २ जीव बदल भव में यदना
 पूजा स्तुति विधि पूषक करी हैं साथ कीर्ति गुण ग्राम गायन सेवा
 भक्ति से पूर्व कृत पापमय कर्मों के अक्षुर जल मूल से उखाड़े फिर
 जन्म मरण रोग शोकादि दुःखों से छूट कर देव शक्ति शकप्रती
 शक्ति मिली इन्द्रत्वपना पूजत्वपना गुरु पदवी मिली मिश्रतन्ममानिक
 पना अनेक तरह की शक्ति मिली है सन् कष्टी वन शुद्ध उत्तम
 सुद्धि ४ प्रकार की सब सुख पावे ॥३६४॥

॥ दंतोष्ट अस्पर्श मत्त गयन्द-व्यद ॥

पा जग-ठाकर के ठहरे हिय चाहि गई इटक अघ केगी ।
 आठ ठहरे अरू आठ जगे दिग आर्ज त्राय श्री रीक घणेगी
 जाच रही भठ के अघठाग इटाप कि छारत्रि काच कि ठेरा
 जागरही घट ठाडर ठीककी जोजग, ठाकर के दिग चेरी ३६।

अर्थ—जो जीव मुक्ति में जाये वाला होता है उसके दिल में
 आती है कि मैं कर्मों का नाश करू ऐसे ही जो जगत् के स्वामी ठाकुर
 ये उनके चित्त में आइ और हृदय में ठहर गई, घर कर गई और
 उसके मन की तरफ ऐसे उठी की जैसे अग्नि विनाश पानी करे फिर
 उस चित्त की इच्छा थी अधिक इच्छा थी वह पाप की, चाहना, दूर
 हो गई तब उसके न कर्म भयभीत होकर भाग जाते, हैं और न गुण

सम्बद्ध दृष्टि के प्रगट, होन लगते त्रिरोर करके । जागे और प्रकाश होने
 लय आरिन कारण तप संयम करके उसकी रीत यहात होइ तब
 ज्ञान करके पशुचान भने बुरे की होई फिर पाप रूपी ठग जाने उनको
 पराजय किया फिर मिथ्यात्व रूपी काज की टेरी को हटाया दूर फेंक
 दिया तब धर्म करण मं नमदृष्टि जागी फिर ठिक शुभ शुद्ध भूमि
 हुइ फिर वह और जगत के नाथ की मुक्ति चेरी है आपके सदा पास
 रहती है पुत्रपत्नी के ॥३६५॥

॥-रसना-बंध, अलकार-मत्त-यद-चन्द्र ॥

मेइ विपय रग केकि पपाह का प्रेम हिये कवि वाक कहे है ।
 कोकि हिये अहि माहि गए पिक माह कह हिय प्रेम गहे है ॥
 रामकि चामः हियः २ राम तु आग गहा खग खेला प्रहे है ।
 ककि कुनोह महाविय माउ मुशोपहु की महिमा कि पहे है ३६६

अर्थ—मेय में प्रेम होता किसका है यग का मोर का चातक
 का जैसे कविद्वर के वचन हैं । चक्रमे चकरी के हृदय में प्रेम होता
 है कोकिजा वसंत ऋतु मे प्रीत रखती हैं । कामदेव, की स्त्री को प्रेम
 कामदेव म ही होता है । चक्रोर पची चद्रमा को दस के प्रेम करता
 है बालक का प्रेम माता में होता है ऐसे ही भगवान से प्रीत करो
 प्रेम करो धर्म से गुरु देवों से आगम से सत्य संग से । निनपाणी से
 जो अहिंसा धम प्रेम करोगे सुख पाओगे और पाप से ऐसे डरो जैसे
 अग्नि से सर डरते हैं मनुष्य त्रिर्यच भी सत्य वचन हैं ॥३६६॥

एक स्थानी करण वर्ण-दोहा ।

गाहा गाहा कही बहा अह आ अ नह अगाह ।

अह अवहा अहका कडा, कह कहे गग गाह ॥३६७॥

अर्थ — एक का नाम गाथा है और एकका नाम अगाथा है अनेक जाति के छन्द करे तथा गद्य पाठ भी करे ऐसे पंडित जन ? कहते हैं यह आत्मा अकथ है आगाथ है अरु है यह आत्म के अव (पाप) नाश करने वाला है दुष्टों का नाश करने वाला है । ऐसे कहने वाल पंती इस आकाश को ग्रहण करे ॥३६७॥

सेहरा बन्ध दुति मिलवत छन्द ।

परम ज्योति अनादि अनतजी परम नाण सुदसणतजी ।

परम शक्ति अनूय सिद्धनी परमशानि नमोप्रभु सिद्धजी ३६

अथ — हे भगवत आप परम ज्योति स्वरूप हो अनादि हो आपकी आदि नहीं पाता कोई भी आप अनन्त हो आपकी सत्य गिनती नहीं है आप अरूपी हैं आपका अन्त नहीं आना आप परम ज्ञानवत हो दर्शनयंत हो केवल ज्ञान दर्शन से आप संयुक्त हो आप परम शक्तिवत हो आप ज्ञानदर्शनादि ऋद्धिवत हो आप परम शानि मुद्रा हो हे प्रभु आपको वार २ नमस्कार होवे ॥३६८॥

अथ श्री जिनेन्द्र देव स्तुति द्वादस स्वर

अनुक्रम कथन दोहा ।

सर्व साधु सिर सीसमणि सुखद सुरगण सेव ।

सैना सोमव सोर्य दिग मत नमत स देव ॥३६९॥

कर्म काल किल कीन खय कुमति कूट के अन्त ।

कै जु कोट को मोख दे कंत रूप क सत ॥४००॥

इहि विघ रचना लोचु की कही जिनेश्वर देव ।

प्रगट करै सब द्रव्य जग सी जिन जी को सेव ॥४०१॥

निन्के नाम सुगोत्र सुन उत्तम फल जिय पाय ।

दमण रदन कथा सुन ता फल उद्या न जाय ॥४०२॥

अथ — जो जीव भगवन् के दर्शन करने से वंदना से कथा सुनाने से बड़े ही पाप कर्मों का नाश होता जो भगवन् की स्तुति करते हैं वह उत्तम कुल म उत्तम जाति में पैदा होत हैं इसका महा फल है और सर्व मुनिराजों के शिरोमणी होते हैं जैसे सप के सिर मणि है । उसी प्रकार मुनिजन के जप तप शील संयम ज्ञान ध्यान क्रिया कम शुद्ध शुभ करने वाले हैं वह मणी उनके मस्तक पर सोशु भित हैं इसलिये सर्व साधुओं क गुण गान सेवा करना ॥३६६-४०० ४०१-४०२॥

सखी दिम भौन रिमान पुरे गिर कुड यने छवि छाजत हैं ।

वर उरध मध्य पताल रिपय जिहा भवनपति विराजत है ॥

सुर वंदन पूजन सेवन ही नृत गीत वज्र सु साजत हैं ।

प्रथमो तिहनाल निरजन की महिमा पर भागम वाचत हैं ॥४०३

अथ — भगवन् ने कहा है कि सत्र दिशा में मेरु पर्वत के चारों तर्फ देव हैं कहीं तो भवनों में रिमानों में कहीं धाण व्यतर के नगरों में कहीं पर्वतों में पर्वतों के ऊपर दनों में सुन्दर धूटों पर देवते अपनी सुन्दर छाव के साथ विराजमान रहते हैं और चिनों की शोभा ऊचे लोक में मध्य त्रिध लोक में निचे पताल लोक म होती हैं सर्व देवों की शोभा वह प्रधान हैं क्योंकि भगवन् को देव वंदना करने में सेवा भक्ति स्तुति करने में चतुर है । और नाटक में गीत गायन में वज्र वचाने में अति प्रसन्न होते हैं ऐसे त्रिलोकी के नाथ को वारम्बार

नमस्कार करते हैं। जोके तीत काज के हाता अगम निरंजन देव है
उहाँ की महिमा परम आगम्य लिखात म गाइ है। हम उहाँ को
धारम्भार करते हैं नमस्कार ॥४-३॥

समष्टि मिशुद्र सुबुद्र वधे चित्त शाति भवेगुण वृन्द जगै ।

परताप वधे महिमा पमारे रिपु भाज चले इरु पाय लगै ॥

'निनरा बहु कर्म पुतातन की नय बवत पु'य सुमोच मगै ।

जिन वदन पूजन सेनते फल होत मृषा मति नाहि ठगै ॥४०४

अथ — जो भगवान को प्रदना करते हैं पुत्रा भक्ति सेवा करत
हैं उहाँ का क्या फल है ? उत्तर—उन्हा की अज करण से समकित
निमज होती है और बुद्धि अधक बडती है। चित्त म तितलता पैदा
हती है गुणों के समूह जागता है और जगत् म पररथा बहुता है
और उस हा देश विदेश में यशोकर्ति फैलती है और शत्रु भी भय
भीत होकर भाग जायें। कई पगों मे पड़ जावे और बहुत कर्मों की
निनरा होती है पूर्वकृत दुष्कर्म भी क्षय होते हैं। नरोन कर्मों का
संचय नहीं करता मुक्ति स्वग माग का द्वार खुल जान। जो निनन्
देव की भक्ति करता है पर मन से उसको भी ठग नही सक्ता है,
अगर कोई मिथ्यामति ठगना चाहे तो वह किसी के भी ठगाइ में नही
आसक्ता परंतु अन्य को भी सद् माग पर लाना है ॥४०४।

। तन रोग है मन सोग है नच चूर है दुर कर्म है ।

। शिव वाम करै दिव भोग करै नरलोच प्रिय पद ऊच वरै ॥

जग वन्मता परिलोक तथा मुख सशति राज महत करै ।

'जिन मक्ति भली नरनारि सुनो भयसागर पार उतार धरै ॥४०५

अर्थ — जो भगवन् की मक्ति स्तुति करता है वह उसे ही
 भोग नहीं शोक नहीं नहीं मन के भयानक दुःखों का दूर करने का
 भूल को दूर करे अशुभ कर्तव्य सब दूर हो जायेंगे और सब दुःख
 धार देवलोक की सपत्न सदस्य भोग में रहने के लक्षणों
 वैसी समश्राद्ध प्राप्त करें विश्व में प्रिय होने का सब मङ्गल
 सम्मान पावे सुख सपत्न शक्ति बड़े सब मङ्गल के लक्षणों
 विनेत्र देव की भक्ति ऐमा है समाप्त मङ्गल मंत्र है कृष्ण मंत्र
 पञ्चावे भगवत् पूज्य स्तुति तीन प्रकार में है है मङ्गल और
 काया से मन को धिसे कि निरा धुत्तरे मङ्गल मंत्र है मन
 की मक्ति है । वचन से किमा को कृष्ण मंत्र का मंत्र यवन
 भक्ति है । काया से किसी को कर्षण मंत्र है मङ्गल मंत्र का
 काया भक्ति है योग विभक्ति करा ॥२१॥

गुण मूल इतीस मखा मन्त्रियो मन्त्र प्रकाश मन्त्र मायने ।
 ममदष्टि सुत्रत ममापिर पोषा मन्त्रि निरै न तरो ॥
 न कर जु आरभ कराय नहीं निरै मन्त्रि मु तने मु मने ।
 मुनिवेश स्वच्छ इरासमी इति मन्त्र प्रवर्तन स्वामिगुणे ॥४०६॥

अर्थ — श्री भगवान की पूजा का प्रथम प्रकार से अथक
 जन सेवा करन जाने होय और आरभ कराय नहीं निरै मन्त्रि मु तने मु मने ।
 मित्र साथ सनाय जायें तो मुन्त्र प्रवर्तन है मन्त्रि मु तने मु मने ।
 रूप मरी साथ में परिवार है मन्त्रि मु तने मु मने । पडिमा सदेवी
 दिन में प्रवर्तन ७ दिन मन्त्रि मु तने मु मने । ममापिर ७ पोषण
 आरभ का त्याग ७ आरभ कराय नहीं निरै मन्त्रि मु तने मु मने ।
 पडिमा

लिये किया जायें वह लेवे नही ६ साधु वृत्तिवत् सूखीवृ १ पाते १०
 और आपने २ कुल मे गौचरी करे ११ ऐसे मारी रहेलिया के साथ
 लेकर भगवान की भक्ति करे नगरशारादि स्तवन पढ़ें तन मन से
 भगवान का ध्यान नित्य करे ज्ञान म रमे ॥४०६॥

इम चेतन मित्र मखी युत होइ कर प्रभु भक्ति नमादि धुने ।
 तिहरो प्रभु द्वादस कव्य विषय सुर सपति दत्त पद्योच तने ॥
 गुण मूल सखा मग बीरा जहा सजनी दस दोष सरूप घने ।
 मिलसेव वर तिह कल्प अरुण्य दिए शिशुश इम ग्रथ मने ॥४०७॥

अथ - इस भाति से चेतन राय आपने परिवार को साथ
 लेकर अपने इश्वर परमात्म की भक्ति कर जसे काइ महाराजा की
 सेवा करे और सेवक करते है अगरे सेवक पर कृपा की दृष्टि करें
 तो महा ऊचा पद ददेते हैं श्री वर्द्धमान स्वामी जी ने शैलिक राणा
 को ऊचा पद ददिया है इसी प्रकार से आरक सेवकों को १२ देव
 लोक तक पहुचा दिये जैसे महावीर स्वामी के माता पिता सिद्धार्थ
 राणा त्रिराणा देरी माता ऐमे स्थान पर पहुचा दिये माता पिता और
 बहा पर महाश्रद्धा भोगते है । उन्होंने भगवान की भक्ति अधिक की
 है इस वास्ते ऊचे गये ज्ञान में ध्यान मे तप जप म सत्य सील
 संतोष मे शास्त्र पढ़ने पढाने मे भगवान की भक्ति करने मे जो लगता
 है वह ऊच पद पाता है ॥४०७॥

चहु भात मुमुद्व गहो चतुरो चहुमात सिद्धान्त लखो अमलो ।
 तज चार कपाय गहो सरखे चतु धर्म चहु विध धार भलो ॥
 चहु सष विषय जस पाय लहो जिन पाद मजो अघपु ज दलो ।
 शिखसाधन साध समाध गहो गतिचार मई भयछेद चलो ॥४०८॥

अथ,—श्री जिनदेव ने कहा है । हे भक्त्यो ? जीवो तुम्हारे पास चार प्रकार का धन बहुत है । सोच के विचार के देसो प्रथम-मति ज्ञान के द्वारा आपके ४ बुद्धि हैं उत्पात बुद्धी १ विनयबुद्धी २ कमिया बुद्धी ३ प्रणामिया बुद्धि ४ ऐसी चार बुद्धी से काम लो आपणें हृदय में प्रवेश करो और प्रकार का सिद्धांत शासन हैं एकतो चित्तान याद दूसरा विवादमाद तीसरा सुखमभय चौथा यथातथा भाव ऐसे चार प्रकार के सिद्धान्त को जानो पदो सुनो विचारो अमल में लो और चार प्रकार के मोटे पाप को छोड़ो क्रोधमान माय लोभ को यह ४ कषाय मोटा पाप हैं और जैन सिद्धान्त के ४ नाम हैं । (अङ्गवेद ११) (उपागवेद १२) (मूलवेद ४) (छिंद वेद ४) चार सरणो है अरिदितो का सिद्धो का साधुओं का केवली परूपे धम का जो यह चार प्रकार के सरणो ग्रहण करते हैं वह जीव मोक्ष में जाते हैं सदा और चार ही हमें ससार से तारते हैं—गन शीत तप भावना यह हमारा पवित्र धर्म है और भी पवित्र उत्तम धर्म हैं चार २ प्रकारे कहा हैं अभय दान सुपात्रदान पात्रदान लज्जा दान करुणादान ४ यह दान-ज्ञान दर्शन चारित्र्य तप यह धम का शरणा लेनेवाले चार संघ हैं निनके नाम साधु साध्वि श्रावक श्राविका यह चार संघ के नाम है दुतिया नाम माद्वण (१) क्षत्री (२) वैश्य (३) मुत्र (४) चार गति हैं नरक तिर्यंच मनुष्य देवता । जो जीव ऐसे कामों में लायेंगे मनको तुम्हारा उद्धार होगा अगर धरम न करोगे तो यह ससार के दुःख का जाल फटना फठिन होजायेगा जन्मान्तरों से दुरत भोगने पड़ेंगे “अभय दान” सुयगदाग सूत्रमें फरमाया है कि “दाणण सेहं अभयप्पयाणं” अर्थ-सब दानो में अभय दान ही श्रेष्ठ है ॥४०॥

सब सागर माहि बंदो चरमो, गिर ऊन पयो रर मेरु गिरि ।
 सब देव विमान रिपय सरार्थ सिद्ध अनुत्तर ऋद्धि भरी ॥
 सुर राज महा बल अच्युत को लग सत्तभगा सुर आयु करी ।
 जिन शामनतुल्य नशामन हैं जिनदेव समान न धर्मधरी ४०६

अर्थ - सब असंख्यात द्वीप समुन्द्र हैं धुंधी के आकार बाने एक से एक परे हैं द्वीप समुद्र सर्व से श्वेत का स्वयंभूरमण समुद्र नाम का समुद्र सर्व से बड़ा है उससे और कोइ बड़ा नहीं है परंतु सपसे ऊंचा है धंध पर्वत इमी जम्बुद्वीप के मध्य में सुमेरु पर्वत लाख एक योजन ऊंचा है यह भी ऊंचा है सत्र पर्वतों में कटा है । और सर्व विमानों में सर्व से बड़ा सत्रार्थ सिद्ध अनुत्तर विमान है सर्व गुणों से भरपूर है इससे बड़ा और कोइ नहीं है और कटा है । चौमठ इन्द्र में से सर्व से प्रधान है एक अच्युत इन्द्र हैं इसमें ओर इन्द्र बड़ा नहीं और जितने देव हैं सब उत्तम देवायु में सप्त लख बाने देव सर्वार्थ सिद्ध में उत्कृष्ट आयु बाने हैं बड़े और सर्वार्थ सिद्ध विमान में विराजमान हैं और विश्व में अनेक प्रकार के शासन हैं परन्तु प्रधान उत्तम नियन्त्रण उज्ज्वल वर्द्धमान शासन ओर शासन नहीं हैं जगत् नाना प्रकार के प्रचलित है परंतु जिनेश्वर देव के अहिंसा धर्म के समान अन्य धर्म नहीं हैं ॥४०६॥

नही कल्य समान तरोवर ही सुरराज मतग समान करी ।
 नहीं औपध पारद सिद्ध समो जिम कैशरि सिद्ध समान हरी ॥
 रवि तेज समोग्रह रिच नहीं जिनदेव समान न धर्म धरी ।
 इसकारण सम्यकवत सभी जिनदेव भजेचित्त भक्ति भरी ४१०

अर्थ—विश्व में कल्प वृक्ष के समान और वृक्ष नहीं हैं ऐरावत
 की के समान अर्थ हाथी नहीं हैं शुद्ध अट्टा के समान और औषधि
 ही जैसे केमरी सिंह के वैसा और नहीं मूय से अंधरु प्रकारा करने
 जो ऐसा नहीं हैं त्रिनश्वर देव के अहिमा घम से प्रधान धर्म नहीं
 श्री त्रिन अरिहत देव के समान कोई धर्म धारण करने वाला नहीं
 लिये इस कारण से सब सम्यक दृष्टि जीव त्रिनश्वर परमात्मा को
 रण करते हृदय में ध्यान धरते तन मन में भक्ति करते हैं ॥४१०॥
 न रात्रि कहा मणिवाच कहा विष अमृत हिमर्क टपाल कहा ।
 काल कहा खर नाग कहा गहु अंतर पडित मूड महा ॥

सुन्दर माल कुचील विषे घनरत महा नर दीन जहा ।
 न शाशन माहिमृपा मगमाहि अमाशय पूनमरात्रि तहा ४११

अर्थ—दिन और रात्रि में अन्तर बहुत हैं जैसे दिन के परमाणु
 मर्मल शुद्ध हैं उज्ज्वल श्रेष्ठ हैं और रात्रि के प्रमाण अशुभ निष्टुष्ट
 दिन के प्रमाण सम्यक दृष्टि तारने वाला रात्रि के प्रमाण मिथ्या
 टि संसार में होने वाला है कहा उत्तम श्रेष्ठमणि और कही
 काच का दुग्डा मणि तो घनवान बनाव और कहा काच कगाल
 नात्रे इसलिये मणि काच में कहा अंतर है विष में अमृत में
 विष अंतर है । विष तो जहर संसार में जम मरण बढ़ाने वाला
 है और अमृत संसार में पार करने वाला है अमृत करने वाला सुख
 देने वाला है हिंसा का ओर दया का हिंसा तो जीव को संसार में
 दुख के गोले बार २ लगायगी और जम मरण घटायगी पायाण के
 समान हृदय को करेगी । दया का नाम अहिमा प्रेम है करने वाले

जीव संसार में सुख पायेगा दुःखों में छूट जायेगा रोग साग वि
 मिटायेगी आनन्द प्राप्ति होगी ज म भरण मिटा मुक्ति या स्वर्ग
 जायेगा सिंह श्याल म बड़ा अंतर है गीदड़ कायर दरपोक पशु है
 गेर एक मद बहादुर पशु है । गिदड़ से नदी डरते सिंह से मय ड
 है गधे में और हाथी में चिन्ता बड़ा अन्तर है गधा तो एक गध
 पशु है और हाथी एक पशु राजा है । पंडित कइ मूरु बड़ा म
 पंडित में बड़ा अन्तर है पंडित तो एक चतुर आदमी को कहते हैं
 और मुख एक पशु के समान को कहते हैं रूपवंत म नील म य
 अन्तर है रूपवंत जैसे राजदुमार रूपवंत कोइ हो कहते हैं जैसे रा
 कुमार हो और कुरुवा हो तो कइत हैं जैसे भील हो फाना पशु
 धनवान निरधन में बड़ा अन्तर है धन वाला तो सर्व को प्रिय लग
 है । निरधनी को देग कर उसकी कोइ धन भी नही पूछते पर
 टणा कि दृष्टि से देखते हैं । रात्री रात्रि म भी अंतर है अमावस
 की रात्रि काली है तो पूणमासी की रात्रि महाउज्वल निमल सु
 देने वाली है पुन्यवाली है कहा दया धर्म ? कहा पाप मय ध
 हिस्वामृषावाद तो अमवाश्य के जैसा है महाअंध घोरतिघोर है प
 मइ । और दया धम तो पूर्णनाशीवत महा प्रकाश करने वाली पु
 निर्जरा मय है निम चादनी का प्रकाश अहिंसा धर्म ॥४११॥

जल चिन्दु कहा वर विधु कहा खसखास सुमेरु प्रमान महा
 नर रफ कहा सुकुवर कहा जग रजान त्रिपा सुर घेनु कहा
 खग काग अपारन हस कहा तिल कुनर आपरमज बहा
 गणका कहु शीलसती चतुरो इम अंतरो धर्म अधर्म तहा४

अर्थ—जिनरान का कथन है कि विचार कर देखो दोनों का कितना अंतर है कहा एक पानी की चूट का और समूहमण समुद्र मत्त खास का दाना कहा । और सुमेरु परंत कहा कुबेर महादेव कहा, जगन् में एक कुत्ती कहा और कहा कामधेनु गाय, एक अपवित्र पत्नी काम और महा कृत्तम पवित्र राजहंस । तिल कुटे हुवे भुंगा कुम्भर कहा और लज्जल उत्तम मेवे मः चन्द्रवर्ती की क्षीर भोजन कहा । एक वैश्याकुशीलनी कहा और महाशीलवती सती कहा । जैसे इन वस्तुओं में बहुत अंतर है इसी प्रकार से धर्म अधर्म में भेद जान लेना चाहिये श्री अरिहत्त देवनी का यह कथन है ॥४१२॥

विन शाल न रूप सुहावत हैं न मया विन घम सिद्धान्त विषे ।
नहि दान विना धनवंत जमी वान क्रिया नहीं मोक्ष पपे ॥

विनजीव शरीर न काज कितो जिम अङ्क विना बहु सुन्य लिखे ।
जिन देव भजे विन सिद्ध नहीं भवजीव सुनो मिसरो हरिषे ४१३

अर्थ—विनाशीलवान पुरुष के रूप शोभा नहीं देता है और ऐसे ही विना दया दुनिया में धर्म नहीं होता है ऐसा शास्त्रों में कहा है मगधवंत ने विना दान देने से धनवंत पुरुष दुनिया में शोभा नहीं पाता है । और नहीं यशवंत भी कहाता है विना ज्ञान के शुद्ध क्रिया नहीं होती है क्रिया के विना मुक्ति नहीं है विना जीव के कर्त्तव्य किसी काम का नहीं है जैसे अंक के विना सिद्धी शोभा नहीं देती चाहे कि तनी हों । सर्व लिखना निष्फल हैं । गिणती में बुद्ध नहीं गिणोने, और ऐसे ही श्रीविनदेवाधि देव के स्मरण किये विना कार्य की सिद्धी न हागी इस वास्तु ह भव्य जीवों सुनो सुशी से श्री परमात्मा का स्मरण करो जाप करो शभ शब्द भावना भावों ॥४१३॥

गत्र वृद्ध न गर्जत बिह जहा जिह सोर अहिमर न तहा ।
 खग संघन संत बिचान घसै नृप तज भण दलघोर कदा ॥
 रण केशव गर्जत शत्रु भजे दुति कीट नहि जिम भानु महा ।
 अघ आघ गए तप वार सजे न पखड रहे जिनदेव जहा ४१४

अर्थ — जहा पर शक्तिशाली सिह होवे वहा पर हाथियों का समूह होने तो सिह की जब गर्जन सुनी तो भय के मारे सर्व भाग जाते हैं । जिस स्थान पर मोर रहते हो वहा से भागते हैं । जिस युद्ध में वासुदेव महा प्राकृमी गर्जता हैं तो वहा पर शत्रु ठहरते भी नहीं हैं भागते हैं । जब प्रखंड तेजस्वी सूर्य का प्रकाश होता है वहा पर जुगुनु का प्रकाश किस गिणती मे है ? जहा पर अनेक प्रकार के पत्नी गण बैठते हैं वहा पर एक सिचना नाम का महाप्रली यान आनावे तो तत्र वहा पर से सब पक्षि गण भाग जाते हैं भयभीत हाकर जहा पर महा सुरवीर राजा का प्रताप होवे तो तहा पर चोरों का दल ठहर नहीं सके हैं और एम हा जहा पर तप महा सूमा तप स्या में सज जाये तो वहा से पाप और पापों की सेना जेमे भागती हैं जैसे घोड़े के सिर से सिंग भाग गये होते नहीं हैं और ऐसे ही । श्री जिनैन्द्रदेव का जहा पर समोसरण होता है वहा से पाप की तरह मिष्यात पालेड मत भाग जाता है रुकता नहीं ॥४१४॥

नगरी नृप न्याय कसूर युति चतुर्ग चमूयुत सेनपति ।
 रजनी ररिचार मई श श मो युतदेव समा पुर हत सति ॥
 दिन सोमत निम्पल खेर तिमो कुलगान सुशील धरी सुवृति ।
 इस द्वादस अंग सुधर्मममा जिसमध्य जिनैरवर भोखगति ४१५

अर्थ—श्री वीतराग देव न गन्तव्य है लोक के अन्त
 दृष्टर जैसे नगरा कीसी न्यायवंत राया की इन्द्रावत के अन्त
 और अनुरंगी सैना होवे हाथ गेहे रद दैव्य अन्त
 मैत्र और सैनापति होवे तो राया का गन्तव्य अन्त
 का हो चद्रमा तार नक्षत्र प्रभे के अन्त अन्त अन्त अन्त
 रोभा पाता है । ऐसे ही मूर निन्दत अन्त अन्त अन्त अन्त
 सय हो सूर्य की तो सूर्य अन्त अन्त अन्त अन्त
 जीय का होवे तो दादा अन्त अन्त अन्त अन्त
 धाप अपनी समा में सर्वर अन्त अन्त अन्त अन्त
 पात है जैसे की १ अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 पय ही दादमाग की अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 भगवान निगामत के अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 पाव सत्य है अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त

रवि काक अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त ।
 मति अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त ॥
 पति श्री अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त ।
 विनदा अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त ।
 अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 और अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 पुन अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त

अर्थात्—पतिव्रता सती श्री आपने भरतार को स्मरण करती हैं।
 उसे प्रेम प्रीति करती हैं। ऐसे बालक आपनी मावा को चाहता है
 और उसके साथ मोह करती हैं ऐसी ही श्री जिने-त्रदेव के परण
 कमला म कविश्वर प्रेम करते हैं। हाथ जोड़े यचना करे स्तुति करे
 सुन्दर छन्द बहे ह जसे यह सयको चाहते हैं एमे ही परमात्मा भा
 भक्त ॥४१६॥

॥ सर्व गुरु वर्ण श्रुतङ्कार सर्वैया-तईसा ॥

एका माभी रूपा टारी रामी गंगाधारा हमी हसा लीते ही।
 मकोसखो पारा कुंटूमोती मालासुबको काशासार चिट्टे जीतेही
 देसर फुन्नी फली सम्मादेवी भव्वा इहो साची सूधी भित्ताही।
 सामीजूकी एमी कितीलोएसोहे इच्छापूरे सेवो भव्वोपिताही ४

अर्थ—पूर्णमासी रजनी पति चन्द्रमा रगत की चान्दी मंदर व
 कलश अटारी उ ची हीरों की रासी दिगला डर गंगाजी के जल क
 धारा हंसी पक्षी माना, हंसा नरो की डार यह सव इतने श्वेत पर
 हैं। श्रद्ध रत्न श्वेत संख श्वेत पाद श्वेत मचकुन्द के पुष्प श्वेत मुक्त
 मोती श्वेत फल की दाम माला श्वेत शुक मइ का तारा श्वेत हैं स
 श्वेत वस्तुपे हैं नितनी भी निमल उज्ज्वल, भगवत की यशो कीति
 है जोकि तिनलोक में शोभा पाती हैं और सेवक की मन ध्ये
 इच्छा पूर्णकरती हैं हे भव्य जीवो ? सेवो सारस्वती नित्त धार्य
 भगवान की राणी शिखा ने ससार से सारे प्राणी सत्य हैं ॥४१७॥

॥ इन्द्र वज्र-अन्द ॥

दशदिग् दशो अरिहंत दशो साधु त्रितात्मा गुरु देव सेवो ।
 धर्मदया सत्यशीला सुमान व्रतधर धारो ममदृष्ट मान ४१८
 दश सुभ नाग यक्षा पिशाचा भूता महा राक्षस दृष्ट याचा ।
 मीमाढराता घृतिव चल ता मय्यङ् धारो चलते न ह्यता ४१९
 विद्वीपेवो धर्म रुजात कागी दुर्ति मिलावे अथर्व नागी ।
 विद्या मिलासे श्रुत देवता हैमय्यङ् दशो कवि सता है ४२०
 सम्यक्त धारी गुणवन्त मागी ध्यानन्द कारं भूम रोग टारा ।
 धर्मानुक्ता जिनरा भक्ता पापे प्रहरतो निजमुक्ता करता ४२१

अथ—देव (१) गुरु (२) धर्म (३) यह तीन मेरे रत्न है ।
 इनको समदृष्टि धारण करत है दश अरिहंत मेरे देवाधिदेव हैं । गुरु
 हैं मेरे पंचमहाभूत के धारण करने वाले हैं । यति हैं जिन्होंने आत्मा
 आपनी और वह ३६ गुण के धारण करने वाले । गुरुदेव क्यामय
 मेरा धर्म है सत्य बोलना ब्रह्मचर्य पालन करना दान देना यह
 तीन रत्न हैं गुरुदेवों की सेवा करना शुद्ध अज्ञान समझ
 करना ॥४८८॥ देव दुष्ट देवता असुरकुमार नाग कुम्भकर्ण
 राक्षस दुष्ट बोलने वाले महा भीम रूप भयानक दृष्ट
 नेम धर्म कतय से बलिते हैं लेकिन जो धर्म दृष्ट हैं
 वत यह नहीं चलते है ॥४८९॥ सिद्धों के नाम हैं
 सर्व कर्मों का नाश करत वाली हैं यह दुर्ति क
 स्त्री मिलाने वाला है । और विद्या के भहार

देवी को कवि-रघु वार २ सेवा करते गुण गाते हैं ॥४०८॥ जो जीव
सम्यक् धारक हैं वह बहुत ही गुणवान हैं आनन्द के लेन देने
जिन्हों के शंभय भय दूर हुआ और वह धर्म में अतुरत हैं विनया
के भक्ता हैं पापों के प्रहारक हैं आपको मुक्ति कर्ता है ॥४२१॥
टोहा सोरठा- द्वादशवाणी हेमवय द्वादश मामी टान ।

द्वादश विष तप ठान लक्ष द्वादश गुण नगर ४२
द्वादश गुण अगिहत सोभत द्वादश परिपण ।
द्वादश कथित सिद्धांत स्तोत्रे द्वादश वन्द्य लग ४२
द्वादश प्रद यत पाप द्वादश वाणी हेम वय ।
द्वादश कल्प जाय मापी थी जिनदेव जी ॥४२४॥
निजरा द्वादश मात मुनि प्रतिमा द्वादश बहे ।
थीजनवर चित्त शक्ति द्वादशमाम रुदा नमा ४२
आडक द्वादश वपे पाप उदय गर्भे रहे ।
सर्व नक्षत्र को करम गुरुयुत द्वादश वप का ॥४३॥

अर्थ—श्री तीर्थंकर दशो न प्रथम १२ आग की वाली प्र
करी थी और जब महावास में थे तो संयम लेने १२ मास पूर्व वा
दिया है देवते है और दवेंगे । "श्री तीर्थंकरों का दान" सुधर्मा दे
लोक के स्वामी श्री शक्रेन्द्र का उग्र कथित हुआ तब उन्होंने अर्थात्
ज्ञान से इसका कारण जाना कि श्री तीर्थंकर भगवान को (अप
दीक्षा ग्रहण करने का समय निकट आया हुआ देखकर) वार्षिक द
देने की इच्छा हुई है । तथा मुझे उनके भण्डारों को दान्यादि
भरना चाहिए । इस प्रकार निश्चय कर उन्होंने उत्तर दिशाधिपति

श्रीशङ्कर (भण्डारी) वैश्रमण (कुबेर) देवों को बुलाकर आज्ञा दी कि प्रजा की चोरी डाका आदि से विलुप्त कष्ट न देना तथा कोई ऐसा काम न किया जाय जिससे किसी का हृदय दुःख पावे बल्कि माम नगर आगर पुर पहन द्रोणमुग (वदरगाह) आश्रम सन्निवेश पञ्ची पयत गुफा द्वीप ग्राह द्विन्द विवट चौवट रात पथ घर हाट समाधान नदी तालाब चारदी भूमि और खुले स्थान आदि में जो द्रव्य हो ऐव चिनका कोइ मालिक न हो ऐसा द्रव्य का संग्रह कर श्री तीर्थ कर भगवान् के भण्डार को भरो । शङ्कर महाराज की इस आज्ञा को वैश्रमण देव ने मप्रिय स्वीकार कर अपन स्थान को आवे तथा त्रियवर देवा को बुलाकर उनको शङ्कर महाराज की आज्ञा सुनाइ उक्त आज्ञा को स्वीकार कर थो ब्रह्म देव मनुष्य लोक में आये । यहा उहान कोई ऐसा कार्य नहीं किया शङ्कर जी की आज्ञा के विरुद्ध हो बल्कि वे निद्रा किये हुये स्थानों का द्रव्य ग्रहण करके श्री तीर्थ कर भगवान् के भण्डारों को भरने का कार्य करते रहे जो द्रव्य श्री तीर्थकर जी के भण्डारों में भरा गया था वह सोन की सुन (मोलेय) के रूप में था तथा उस पर श्री तीर्थकर जी श्री शङ्कर देव प्रिता का नाम खुदे हुए थे ।

तत्पश्चात् श्रीशङ्करजी ने धाण ध्यार देवको बुला कर आज्ञा दी कि जिस क्षेत्र में श्री तीर्थकर भगवान् का निवास है वही क्षेत्र के धैताव्य पर्वत पर निवास करने वाले विद्यावने श्री शङ्कर देव में उदघोषणा करा कि — श्री तीर्थकर भगवान् आज्ञा करने में कब पहर दिन तक धार्मिक शान देने हैं वने शङ्कर देव को विरुद्ध

इन्द्रा होते वे लोग वहा पहुच जायें । श्री वाण व्यतर ने उक्त आहा को स्वीकार कर मनुष्य लोक में आये ऐव निदश किये स्थानों में उत प्रकार मे घोषणा की पुन शक्रेन्द्र जी ने ज्योतिष देवको बुलाया ऐव निम्न प्रकार मे कहा "श्रीतीर्थकर भगवान के हाथ से दान ग्रहण करने वाले वे लोग जो रि दूर पर रहते हैं उनको भगवान् के नगर में पहुचार्था ऐव मार्ग में उन्हों फाटे आदिका फष्ट न होने पावे तथा फाटों को भी हानि न पहुचे" ज्योतिषी देव श्री शक्रेन्द्र महाराज की आह्वानुमार दान ग्रहणार्थी मनुष्यों को श्री तीर्थकर भगवान के नगर म पहुचा देते हैं ।

जब तीर्थकर भगवान् दान देते हैं तब चार इन्द्र मेवा मे रखे रहते हैं प्रथम श्री शक्रेन्द्रजी तीर्थकर भगवान के हाथ को सहारा दते हैं । जिससे दान देते समय भगवान को श्रम प्राप्त न हो सके । २ दूसरे देवलोक के श्री ईशानेंद्र भाग्यानुसार न्यूनार्थिक (कम ज्यादा) करते हैं । अर्थात् दान ग्रहणार्थी के भाग्य में द्रव्य कम हो और तीर्थ कर जी के हाथ में अधिक द्रव्य हो तो उसे निकाल लेते हैं । उसी प्रकार दान ग्रहण करने वाले के भाग्य म अधिक द्रव्य हो और श्री भगवान के हाथ मे दान का द्रव्य कुछ न्यून हो तो उसे पूर्ण करते हैं । तीसरे दक्षिण दिशा के निगामी भुवनपति देव श्री चमरेन्द्र हाथ म छडी ग्रहण कर दान स्थान पर रखे रहते हैं और वहा शांति के साथ व्यवस्था करते हैं । चौथे धन्नेन्द्रजी महाराज मे भण्डार से द्रव्य निकालते हैं तथा लाकर दते हैं । उक्त प्रकार से श्री तीर्थकर भगवान् प्रातःकाल से सत्रा प्रहर दिन तक सदैव (१ ८०००००) एक कर द

आठ लाख मुठरों का गान देते हैं। निम्नके धन का प्रमाण इन प्रकार है ॥

४ मधुफल गाने का १ सरसों का दाग ५ सरसों के दाने जितना वजन १ उड़द के दाने का २ दो उड़द के दाने जितना वजन १ रस का ५ रस का १ माशा १६ माशे की १ सुहरया सौनेया ३० सौनेया का १ मेर १० सेर का १ मण का शकट (गाहा) ऐसे २२५ शकट (गाहे) की सुवण मोहर का नित्यदान करते हैं। ऐसा चाह माम के तर्क ५५५० ०००० (तीन अर्ब अठासी करोड़ असी लाख) मुठरों का दान दत्त है। निम्नके धन का प्रमाण उक्त प्रकार ही यत्तीम लागव चात्रि ह्वार (३०,१००००) मण होता है। निम्नसे इक्यासी ह्वार (५१००० गाहे भर जाते हैं) जय श्री तीथकर भगवान् दान देना आरंभ करने पर उनके माता पिता ३ दान शाला (भोजन घस्र भूषण) स्थाप करते हैं। और नगर में उद्घोषणा करा जाती है कि भोजन वा ऐयं भूषण की जिस किसी को चाहना हो तो वे ले जायें यदि तीर्थ की वस्तु की चाहना हो तो तीर्थ ही लेना सचा है। इस प्रकार वर्षीदान के १२ महिने पूर्ण होने के बाद श्री शक्रेन्द्रजी ज्योति दयता को मुलाकर कहते हैं कि दान प्रहणार्थ आये हुए मनुष्यों में दूरस्थल के रहने वाले हैं उनको आपन २ स्थान पर पहुँचाओ कि माग में उन्हें काटा कंकर इत्यादि से किसी प्रकार का कष्ट न हो ऐय काटे इत्यादि की हानी भी न होने पावे इस प्रकार श्री शक्रेन्द्रजी की आज्ञा ज्योतिषी देव सविनय स्वीकार करके दूरस्थल के मनुष्यों को मुख से अपने २ स्थानों को पहुँचा देते हैं। इसी दान के विवर :

श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामीजी से श्रीगौतम स्वामीजी ने सविनय वदना करके प्रश्न किया कि अहो परम पुज्य भगवान ? श्री तीर्थंकर भगवान वर्षी दान में जो द्रव्य देते हैं वह द्रव्य भव्य जीवों के हाथ लगता है या अमव्य जीवों के ? भगवान ने फरमाया कि अहो आयुष्यवत चिरजीवी गौतम ? तीर्थंकरों के दान में दिये द्रव्य को भव्य जीव ही ग्रहण कर सकते हैं न कि अमव्य । तथा अगर कदाचित् अमव्य के हाथ में आभी जावे तो वह उसके पास रहता है नहीं गौतम स्वामी ने फिर २ प्रश्न किया कि अहो भगवन ? तीर्थंकरों के हाथ से प्राप्त हुये द्रव्य से भव्य जीवों को क्या लाभ होता है ? भगवान ने फरमाया कि है गौतम ? भव्य जीवों को प्राप्त हुआ वह दान कभी क्षीण नहीं होता और उस द्रव्य का व्यय शुभ कार्यों में होता है तथा जिसके घर में वह द्रव्य रहता है उसके घर में १६ प्रकार के बड़े रोग नहीं आते १८ प्रकार के कुष्ठ (कोढ़) नहीं होते ८४ प्रकार के वादी (बात) के रोग नहीं होते बल्कि पुरानी व्याधिया भी उसके यहां से नष्ट हाजती है । ऐस अपने प्रियजनों का और इच्छित पदार्थों का वियोग नहीं होता ।

प्रतिरोज देते थे पीछे संजम लिया फिर १२ प्रकार का तप किया और उसे ६ नकी निजरा हुए उस तप के प्रभाव से गुण स्थान छोड़ १३ में गुण स्थान प्राप्त होने के बाद केवल ज्ञान पाया १४ गुण ठाणे आयोगी होके फिर अजर अमर पद पायेंगे ॥४२२॥ भगवत की १२ प्रकार की परिपदा शोभा पाती, भवनपति देवता १ देवी २ बाण व्यंकर देवता ३ देवी ४ ज्योत्सवी देवता ५ देवी ६ मनुष्य नर ७ नारी ८

तिर्यच ६ तिर्यचनी १० विमानी देवता ११ देवी १० ॥ यह १२ परि
 पदा भगवत की होती हैं । और अवगुण अरिहतों के देखो जो प्रगट
 हाने हैं अनन्त ज्ञान अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र्य, अनन्ता तप, ४
 ब्रह्मवीर्य पराक्रम, आनन्दी ख्यायक सम्यक् पालनेवाले चौतीस अति-
 शय, पैचतीस बाणी ब्रह्म ऋषभ नारच मरायणा समचौरम संटाण
 चौसठ इन्द्रों के पूजनी का एक हाना आठ गुण के धरणे वाले हैं यहै
 १२ गुण अरिहता के हैं १० दण्डलोक कल्प आवन १२ ब्रह्म पाल के
 १२ चारा कल्प तक १-२-३-४-५-६-७ = ६-१०-११-१२ यह कल्प
 दण्डलोक और अरिहत देव के १० आग द्वादस बाणी आरंग एव
 दिष्टि १० जैसे शारंगों को पढ पढावे मुने सुनाये ॥४२३॥ श्री तीर्थकर
 देव की १० प्रकार की बाणी हैं और १० ब्रह्म भावक के पाने १० में
 कल्प तक जा सक्त हैं ऐसा श्री प्रभुनी ने कहा हैं जो निर्दाप धर्म
 फरता हैं । वही जाता हैं ॥४२४॥ पापी जाव उत्कृष्टा १२ वष तक
 माता के गर्भ में रहता हौं (और बृहस्पति गृह का एक वष सारे
 नक्षत्रों को भोग लेता है तो उसका एक युग हैं १२ वष का क्योंकि
 नक्षत्रा का स्पर्श देरी का काम है ॥४२५॥ साधुओं की तप करने की
 १२ पद्धिमा हैं देवो अंत गड सूत्र में कर्मों की निर्परा १२ प्रकार से
 होती है श्री भगवान को मैं १० मास ही निस दिन नित्य उठ ता मन
 शांत चित्त से बारम्बार नमस्कार करता हूँ ॥४२६॥

॥ श्री जिनराणी महिमा वर्णन सर्व लघु वर्ण दोहा ॥

परम अनघ अधिचल अथ शिरनिघ शिव मग रचन ।

अगम अल्प गुण अतुन मय नप ० जिनवर वचन ॥४२७॥

अर्थ — भगवान के निरत्य चरणों से भगवान जैसे ध परम उद्योगि
 अतुल्य पाप रहित थे अविद्यत हैं चलते नहीं स्थिर है अस्य सुम्नो
 क निधि है निधान है मुक्ति मार्ग के दर्शन वाले हैं आगम है अत्रल
 हैं जिनके गुणों को कोई भी देख नहीं सकता है ऐसे भगवान के
 चरण हैं और उन्हें ही सदा नय होवे चिन्हां को म धार २ श्रद्धा
 करता हूँ ॥४०७॥

॥ सर्व गुरु वर्ण दोहा ॥

यारी सोमा लोह मं फूली फैली पेल ।

बन्दौ बाणा माय जू माची माता मेल ॥४०८॥

अर्थ — श्री बाणी देवीजी को मैं बनती करता हूँ कि हे माता ?
 तुम्हारी कीर्ति संसार म फले फैल रही हैं उसे लता फंजनी फूलती
 है ऐसे ही आपकी दुनिया में शोभा कीर्ति फैलती है हे ?
 देवी अत बाणी गाता मैं तुमको चारम्बार बंदना करता हूँ सासति
 साता मुझे मिले कृपा होवे आपकी ॥४०८॥

सर्व गुरु दार्ध वर्ण प्राकृत रूप शब्दालङ्कार
 सवैया तेइसामा ॥२२॥

आमोदासे पुत्रा सिद्धा बुद्धा न भदा घना उग्गा बाणी हैं ।
 लोया २ दवी भाखी जीवा जीवा सबवे भारा भवा मदाआणी है
 देवी देवा जकवा नागा आगही गधवा मगन्ती आनदी है ।
 सा सघदा बाणीदेवी ज्ञाषेवी मोहगा दाई सामाता इंरगीहें ४२६

अर्थ — श्री अरिपत देव तीर्थकर देवकी बाणी कैसी हैं आमोदा

शक्ति ही प्रमत्त मुरी हर्ष के प्रदान करने वाली है, संपूर्ण पुण्य के देने वाला है सीधा सर्व कार्य सिद्ध करने वाली है। मुधा निर्दोष बुद्धा के देने वाली, नंदा आनन्द वृद्धी की दाता है महा फलदायक करने वाली है धन धान्य की दाता है, उगा प्रधान सब से मड़ी है ऐसी वाणी है लोमलोक को प्रवारा करने वाली दर्शाने वाली, ऐसी भाषा है जीवा जीव को बताने सर्व जीवों के भागों बताने वाली है वाणी जो मद्र जीव मन्थीर बहों को भगवान की वाणी पर श्रद्धा अति है जोर वह कहा २ पर है। देवी देवता जैसे यज्ञ नागदेव आदि पतान के लोक में बसने वाले हैं। गंधर्व आदि सर्व भव्य हैं मंगलमुख हैं। आनन्द के पाने वाले हैं और यह आराधक होने वाले हैं, सच्ची श्रद्धा के पाने वाले हैं जोस ० ने वाणी की सेवा करली वह जीव अक्षय सुख पावेगे और मैं सदा ऐसी वाणी को चार २ उदना नमस्कार करता हूँ क्योंकि यह वाणी इसकी सेवा से अचल सुख मिलता है सत्य है ॥५२६॥

खती दत्ता वृली सुद्धी तुद्धी गुत्ती मुत्ती मती लोग तोले कही है अज्ञो उगे सध्वे सुत्ते गाहा गीया छदा रुना सालझरी मदी है आया भाई कम्मघाई मग्गघाई घम्म दाई रुधी जिजा पडा है सुव्या रघु पुन्नी फच्छी वाणी देरी साहू भाभी देसे २ रुद्धी ४ अर्थ — भगवान की वाणी खती विद्या के देने वाली है। देवी शक्तियों के दमन करने वाली है। मुभी कुत्लता के रहित शरलता के देने वाली है। कुली अभिमान के बजने वाली तुद्धी लोम को बनने वाली संतोष रखने वाली गुत्ती तीन योगों को गोप के रखने वाली

मुक्ति कर्म बदन से छुड़ाने वाली संती सातिरस के देने वाली लोगी
 को तोलने के लिये यह एक धटा है जिसे शुभाशुभ पदार्थ जाचले
 छोटे बड़ों की जाँच कर लेने । कंडी यह एक तराजु है ? आत्मा का
 ध्यान करो यह कहा २ पर फिर कर यह जीव आत्मा आइ है कर्म
 आपने आत्मा को किस २ स्थान पर धूमाते हैं सटा खोटे २ भागे
 में कर्मों ने घुमाया मुझे धर्म के मार्ग में लाने वाली है वाणी भगवान्
 की वाणी सधी है निश्चय ही है और अप्रद्वित है वाणी का कर्म
 नाश नहीं होगा अग १० उर्पग १२ को सूत्रों में और शास्त्रों में गाथ
 में गिताओं में छन्द रूपी अलंकारों में संयुक्त सारे । अक्षरों में वाणी
 का मडन किया है, जैसे सर्व बनराइ फूलों में और सब प्रकार के
 फलों में ऐसी वाणी देवी सोभा पाये भगवती देवी वाणी को सा
 मुनि महात्मा देश २ में सुनाते फिरते हैं जैसे लोग उपाहार बाँट
 करते हैं ऐसे ही मुनि महाराज हैं ॥४३ ॥

लेहा रूपी सखापती गोखणी भाखणी बिजा राग खेगा वकी
 वन्ना मत्ता अका रूपी दीहा २ पजा २ ठामे २ मन्नी है ।

रागाई सव्य के दब्बे भूप मव्व हाणे भाव तिथगधी सोचारी
 ते चिन्ही तेलिगी बाणतिलाए तिक्काले सती साह चित्त धारी

अथ — लिपना रूप आकार वाली अक्षर मह जिसमे सख्यात
 वकी हावे जैसे एक दो तीन चार पाँच ऐसे सख्यामई गिनती गुणा
 कार करणी दुगणी तीगणी चौगुणी इत्यादि गुणाकार करणी फिर न
 इसके भागे करणे जैसे द्वीशं त्रियारां चतुरारां यावत् सख्यात अस्ख्यात
 विद्या अनेक विद्या एक वर्णा अनेक वर्णा हैं वर्ण वर्ण रूपी मत्त

॥ रूपी अकार रूप जैसे १-२-३-४-५-६ ७-८-९-० इस विधि से
 १ दीर्घ धण मर अर्धर्धा दीर्घ वर्णमर्ध पन्नापद बध अपरागद पाठ
 स्थान २ में माननी कहे मत्री है । एक की आदि से लेकर सर्व
 ; वर्तमान हैं एक से लेकर सो तक चलो, सो से लेकर हजार
 चलो, हजार से लेकर लाख तक चलो, लाख से लेकर करोड़
 चलो, करोड़ से लेकर अर्थां तक चलो, अब से लेकर सर्वां तक
 त संख्याते तक द्रव्य में वर्तनी ऐसा वर्ताव हुवा है होत मूर्त
 तव फाल की रचना, भव्य वत्त मान काल की रचना । होये भावे
 शेष्यत् काल की रचना ऐसी वाणी पदार्थ भावी श्री वीर्या से
 गरी है भगवान की वाणी तीन शब्दों में है जैसे 'हय' गय उपादये
 एने योग त्यागनेयोग आदरनेयोग तीन लिंग है स्थलिंग शब्द
 य शब्द लिंग नपु सकलिंग शब्द ऐसी वाणी लिन लोक में प्रमा
 ऊचे लोक में मध्यलोक में अधोलोक में यह वाणी है । और लीने
 ल सदा साती होती है इस प्रकार के सरस्वती वाणी देवी म
 र्त में धारी है छोड़गा नहीं सदा यह मोर प्रकृत इन वर्ण
 ॥४३१॥

गे सहे नाना अट्टा नाना सहे एमे अट्टे भावना अचिन्ता है
 अवे साईं मामा रूपी सपन्ना बन्ने सली कन्ने धीरा मित्त है
 मादमी शालोएल्लोय चारित्त धम्मे कम्मोमी पूर पुन्ने पाईं हे
 मेच्छा निहांती शत्री कालो चारो कशासो जात मुदा आदि
 अर्थ — एक शब्द के अनेकार्थ हैं और अनेकार्थों का एक नाम
 जैसे नाम माला कोश अत्यन्त विविध विविध

रूप हैं सर्वे धृत भाषा रूपी संपन्ना होये होये उदके काना में मना
करे और मर्ष जी मित्र है । आदर्शी वर्णन के समान लोकात्मो
आदर्शी आलोक लोक में देखने वाले संसार में चारित्र्य धर्म के कि
में कसोटा हैं जमे बचन की परीक्षा की जाती है कसोटी के द्वारा
यह जन बाणी जिस तीरामा का पूर्ण पुन्योदय हो उसको मिलता
है । मिथ्यात रूप निद्रा आणदि की जो हैं दूर करती हैं । बाणी मर्ष
बाल उचारीणी काली ते उत्पन्न होय पड़ीयाल की टंकार का मर
जैसे मिथ्या है निद्रा, भगवान की बाणी रूप टंकार से भाग जाती
है । सुधा ज प्रता समता रूपी प्राप्त होइ है ऐसी मित्र बाणी संसार
से पार उतारने वाली है ॥४३०॥

नाना रामे फन सीमा धन्मे धामे केऊ मोह मोये मग्गे दंढी है
दाने सीले इच्छा रोके मावे सुद्धेरुर रन्ने बावा चोखी मढ़ी है
इच्छा पूरे विचा वेधना देग धेनु गिआ देवी दानू गोवा चढी है
गोखा राही तिथगधीस एमा भापी बाणी देवा मदी मेहा खड़ी है

अर्थ—नाना प्रपार के रामे अराम पाग में ज्ञान रूपी जल की
धारा बहती धम रूप मंदिर पर ध्यजा शोभती है क्योंकि यह एक
मोक्ष मार्ग में जाने के लिये सिंधी दरी रसता हैं । और जो संसार
के विपर्यो की आशा करते हैं उन इच्छा को रोकके शुद्ध भावों से जो
दानशील तप करेगा और जो ऐसे वृक्षा को सेवेगा वह निर्दोष दात
शैल तप आदिक जल पवित्रा यह मोक्ष रूपी अमर फल खायेगा
और वह संसार से लुप्त भाव रहेगा ऐसी भाषा यह सची हैं कही
है । श्री भगवत ने कहा है कि जैसे चित्रा नामक एक बैज लता होती

है। और चित्त मलि रत्न हैं एक कामधेनु गौ हैं एक विद्या देवी हैं जो पुण्य इनको प्राप्त करने की इच्छा करता है वह कभी दुखों का सामना नहीं करता है ऐसे ही जो भगुण्य सत्कार से आपनी इच्छा को रोकेगा वही नीच मोक्ष में विराजेगा, क्योंकि मोक्ष का आराधक नभ होगा तब जिन वाली को सध दिल से गुण गायगा, वाली का बुद्धी शाली होगा और तिर्य्यापीसके सध की सेवा करेगा फिर वह सर्व पापों को स्वदन कर नारा करेगा ॥४३३॥

गामे रुरे रुखे मानो बोलीशस तिठी दक्खा 'चित्त' मोहती 'ममत्त भाष' मिने २ कारी नून सपगी स धोहती ॥'

नाई पुष्के सपुत्री रुवे गदेरुरे रसे चगेरी सी सोहती ।

मे जाहजे निजामे साहू गिन्ही दूरा दपी खेम कारी टोहती ॥

अर्थ — चार मधरूपी आनराम मानों वाग हैं और उममे बोलो हैं मानों जैसे धर्मन ऋतु अपनी दुःख अम्य की मनरि की प्यारी लौकिला कोयलरत्न और चतुरा को चित्त को मोहने वाली हैं सम-केत भार और मिध्यात भाव इन दोनों को जुदा कर देती हैं। नेदचय में जैसे छाज हो उसकी घत जाणना ऐसे ही सुषोद्ध देती है जीशों का ज्ञान नेत्र के प्रदान करने वाली है। गुण देकर और पृत्न रूप वहाँ कि मन्वृण चगेरी जैसे शोभा पाती हैं मरी हुर धर्म रूप मोत नहाज तारक रूप मध्या साधु मुनि महात्मा ने प्रहण करी जिस प्रकार से दुर इराक धर्म द्वारा सब वस्तुओं का ज्ञान हो जाता करुणा करये वाली देवजेरी हैं समार समुद्र को ऐमी श्रुत देवी भगवती है जिन वाली मलय वचन हैं ॥४३४॥

विन्हा बाडीहती सोमामिच्छा भोगी जाईहती केकी जाई गु जी है
 भव्वाभानी चित्त आनी मोख दारे देवा बासे ताला खोली कु जा है
 ससारे निराधे नावा मंगली कल्याणी मेरी साहं कप्ये पुंजी है
 जेणा राही बाणी देवी त लद्वी भोकिट्टी सिधी साची सात भु जी है

अर्थ — जीव के साथ तीन प्रकार की व्याधि हैं सोमा अमृत
 हैं मिथ्यात सप सुता हैं और जाइ पुत्री मानों गु जित हैं, ३ व्याधि
 मिथ्यात सर्प सुता और पुत्री यह ३ व्याधि जीव के साथ हैं सोमा
 अमृत का नाश करती हैं जब गु जित हैं, भद्र जीव ऐसा मानत हैं
 और ऐसा चित्त म धरत हैं और कहते हैं कि मुक्ति के द्वार की स्वर्ग
 के मन्दिर की एक ताला खोलने की ताली चाबी (कु नी) हैं संसार
 समुद्र में यह एक नविका है जिन बाणी मंगलीक कल्याण कारी हैं,
 और साधु कल्प के लिये आचार वृत्ति की पु जी है, जैसे दुकान वाला
 पू जी लाके दुकान करता है वह नफा पाता है जिसने भगवन की
 बाणी आरोधन किया है आरोधन करते हैं उसको मिलती है जो
 उत्कृष्ट सिद्ध गति प्राप्त करते हैं वह अक्षय मुक्तों को भोगते
 हैं ॥४३५॥

कोह माण लही मारी मान नाग सिंह गज्जी माया जाल छंधी है
 लोह भूत मवाराही मोह सतू तिकखी सची साहू छरे फकी है ।
 खाटे फीके तीकखे तू बे निदाछिहा दोसे वज्जी निधूली निवकी है
 सायस जोग वज्जी ती धारखी पोखती सुधी निकखी निस्सकी है ॥

अर्थ — क्रोध रूपी स्वान (कुत्ते) को मारने के लिये लाठा भारी
 है, मान रूपी गज हाथी के लिये सिंह जबर ताकत वाला है । माया

ते शत्रु का काटने के बाने छुरि हैं, लोभ रूपी भूत के लिये मंत्रों
 अरुण है माई रूपी शत्रु को तीव्र शक्ति बर्झी हैं, साधु सूरमे
 हर रूपी गुन गुनी बणा कन रूपी शत्रुओं का नारा बिया और
 न शेष दाग दाडे कीके तीले कौड़े निहारूप पर छिद्र रूप ऐमे
 र रहिन हैं धूनी रहिन दंक दोष रहित पापकारी योग रहित, मन
 ल और बया के अगुभ योग को बर्झ के शुद्ध निर्ना योगों को
 ने बर्झी बरली है पोषण करती है । निरुन्वी धर्म के बिना और
 । ईश्व निरकी है जिसमे छोड़ गंजा या दोष भर्म नहीं हैं सत्य
 न है ॥४३६॥

र शारं शानी शारा पावंड मेह पाधारा बंगा बधी भारी है ।
 जा बडासी पाविधीत हुता नो दिनारुमी सुद्धो सुहाचारी है
 । शारं निष्पन्न छरं ताटती भूवाली रुना वारा घीरा शारी है
 शपोयले बखे सोहेराका राई मोमा यथा भन्वी सुहवाचारी है

अथ — काम रूपी अग्नि को पाली रूपी ज्ञान की धारा पाछंड
 रूपी मेघ बानों के बिये वायु वेगर है महा शीघ्र चलती है हिमा
 रूपी बंधानी को दहती निरोध करती है । दया रूपी ब्रमी गैरनी
 मुन गिष्ठाचारी है । दुष्पाचार भील सुत्मा जिसको ताडन हाती है ।
 भूषणों कि मीना कीर दे धारत्र शरी है, शर्तुर्विष संप रूपी बौदनी
 बन्दा दुष्कर पण जसे पुद्गमनी की बौदनी निर्मप है और श्रेष्ठा को
 देने वाली है । ई शत्रु जीर्ण १ गुण गुण की करती बरो पण बरली

अहं रुद्रं कोठ बाह धम्म गुफागतं मट निष्ठाण सदाई है ।
 धम्मोजाण दाहे जोई सदेह परु वासासी सूने वदे गाई है ।
 अज्ञाने कुवे सपत्ती काढती रज्ज भारीमी नाणा घामा साला
 लोग टोहे दक्खा मोहे एसी वाणी देवी मोह दक्खे कटे माला

अर्थ — आत्त ध्यान को हटाने वाली जिन वाणी हैं और ध

ध्यान शुक्ल ध्यान का आधार रूपी गहेल मन्दिर के बनाने वाली
 जिन वाणी और निष्ठाण मोह के देने वाली हैं । परम रूपी उपा
 धन को त्रिनारा करने वाली जिन वाणी हैं और—सदेह ससय रु
 कर्दम किचड़ को नारा करने वाली वषा रूप जैसी जिन वाणी हैं
 मूर्खों वेदा में जिन वाणी की महिमा गाइ है । और वह अज्ञान रूप
 पूष में पड़े हुये जीवा को निकालने वाली जिन वाणी रूप लेजुं है
 झा रूपी आराम में मंगान म सुन्दर साला है । एक बैठक हैं और
 लोकर एट् द्रव्य मय दसको देरते हैं, यह वाणी चतुरों के चित्त को
 भोग्य करने वाली है । ऐसी भगवती वाणी देवी सोमोपाती है । और
 चतुर विचक्षण जीवा के कंठ में विराजती माला हैं सत्य हैं वाणी
 ॥४३८॥

संसारे कतारे घोरें तामते जीवाणी काटे मोखे ढावी देवी है
 जम्मर पुट्टव काल रोग भोगदुकरं हती माह देवी सेनी है ।
 चित्तारूपी उन्हाहती पुत्रा वाऊ साया दाईमोद मोद मेह वाम
 सुम्भुव धारिछ जोग देवी वाणी गोसे मासी नाण छर भासंती

अर्थ — संसार एक महा भयकर घोर अन्धी हैं भोलें जीवों के
 दुन्धो पहुचावे और जिन वाणी उन्हों जीवों को वहा से निकाल, क

सोड़ महा नगर के मार्ग पर लगा देती है । भानों सुख दायनी देवी है एक बाणी जीव के साथ जन्म का दुःख बुढापे का दुःख रोग सोग का दुःख मरन का दुःख सत्पापदिव चित्ता रूपी महा तपत गर्मी आदि का महा दुःखों से हटाने वाली ऐसी बाणी देवी हैं कि जैसे पूर्व की पवन चलती है जय, तय पूव दिशा की गर्मी का सर्वनाश करती हैं, ऐसे ही जिस भाजों से जीव ने पाप कर्म क्रिये हुये हैं तो वह सर्व पाप का नाश करने वाली जिन पाली है शीतलता और सुरी के मेघ जैसी घपा करने वाली हैं बाणी स-सुख धरणयोग्य हैं, और पूव दिशा में देवी देवों का वास है आनन्द मानते हैं, और वहा पर ज्ञान रूपी सूर्य के समान प्रकाश करती है या ज्ञान रूपी सूर्य प्रगट करने वाली उत्तम ऐसी श्रुती देवी जिन बाणी हैं सुर नाना प्रकार के बाणी सेव हैं ॥४३६॥

सच्छी देवी सालकारी सातुट्टे दारिदे चुरे राई बाणी माई जू ।
 सब्य दुक्ख दोसे चुर सुरक्ख सुइगा सरूरे साची साता दारिजू ॥
 सच्छीदेवी पच्छी अच्छी यालकारी ह सिंधू की पेटीमोता दब्बाकी
 एवबाणी देरीपूरी अट्टि सिद्धि बुद्धि चित्ती सुक्ख दब्बा सब्बा की

अर्थ — श्री लक्ष्मी देवी बाणी भूषण के धारणे वाली जैसे आराधी होई संतुष्टा पाने वाली और संतुष्टा दालिद्र को चुरने वाली होई हैं ऐसी महा बाणी देवी सर्व दुखों को दूर करने वाली और सचे सुखों के देने वाली या शोभाग्य के पाने को पूरणे वाली और सभी सासती साता देती है तथा लक्ष्मी देवी की अच्छी पछी पीठारी हैं भूषणों की अथवा राजा के भूषणों की सधुक्की हैं और शाहुकार

के अमरगणों के पती हैं ऐसे ही मुक्ता फल हिरों के जवाहर की उत्तम
द्रव्य जहवार रासी के ऐसी वाणी देवी पूर्ण मरी होइ है श्रद्धि
सिद्धि से बुद्धि से लक्ष्मी से सुखा से सर्व उत्तम पदार्थों से ऐसे
सारे गुण श्री जिनयाणी की महिमा हैं ॥८७॥

घादी हत्थी जु हैं भीमं गज ती वज ती सिंहीवादे नाद पूरती
केई बुद्धा सिक्खा पुत्रा केई भट्टा नट्टा वादे मिच्छा गन्ध वृ
सब्बे सुत्ते सत्थे वदे सर्व्व लोग गया रूवी हेयदेयाकारी हैं
मग्गघोई घग्गंदाई वज्जलाण निब्बाण साई तिथ्याधी सोचा

अर्थ — श्री अरिहंत देवा का यह कहना है कि जो घादी जि
हस्ती होता है और वह भी बिनली की तरह गर्जती है, तथा सि
सिघनी की तरह भेष की वत् गर्जता करती शब्द पुरती है अथ
चित्तवादी अपने दिल में ऐसा समझे कि यह शिखा मानवी है
नियमधारी हीयें केइक वाद ते नट्टा केइक निरोत्तर होते हैं के
सृष्ट होय कर इकवाद् करणों से असमर्थ होते हैं, ऐसी वाणी देवी
जो विवाद करने वाले है उनके मिथ्यात रूप मान मद अहंकार
को धुर कर देने वाली है। श्री जिन याणी सर्व सूत्रों को शास्त्रों
वेदों को और सर्व लोक को जाणती देखती हैं। जैसे यह तीन श
जिनयाणी को धताय हैं। भगवत ने गय (१) रूप। अशुभ पदार्थ
त्याग (१) हय (२) रूप शुभ पदार्थों को जाणे (२) स्वर्गादिरूप स्वर्ग
सुख जाणे, निर्वाण मुक्ति के सुख की दाता हैं तीस, चार हैं सा
साध्वि, भावक भाविका इनके अधिनायक श्री तीर्थंकर देव ने क
है आपने सुत्रोर्विद् से उधारण किया है यह वाणी सत्य है ॥४४॥

जो वृक्षी शोभा दीपे उजालो चदामा गगा हीरामोती जोसखी
जोसखी सेठामा चांदीगोदूद्धि धारा फेरणाना रू दमाला पोतीसी ॥
जुहो २ मारी सेती मिट्टी २ सारी जीती ऊची २ सेती ही ।

शो पूजो रुरीरीने मन्त्रो जीवो आणो वित्त जोचाहो सो देती है

अर्थ—श्री पितवाणी देवी हैसी हैं सरस्वती माता हैं, दुनियाँ
में जिनकी कीर्ति अति उज्वल प्रबल वर्ण जैसे चंद्रमा की किरण
गंगा का जल हीरे का देर, मोती की प्राति हसती के पर की छवि,
शुभ श्वेत की छवि रजत मुद्ग किरण गोदुग्ध की धारा पाणी का
प्रेम का आभा मुचकुन्द के फूल की माला पोत की परोइ होश्वत
ऐसी हैं सर्वसे श्रेष्ठ में श्रेष्ठ हैं । सर्व पदार्थ श्वेत से श्वेत हैं । सब
पदार्थ मिट्ट से मिट्ट हैं सब पदार्थ शुभ में शुभ हैं और सबका
विनाय किया है सर्व ऊँची से ऊँची है, भार्गव का कथन है । हे भग्य
जात्रो ? भंदन करो पुत्र स्तुति भक्ति करो शुद्ध भावों से साथ शुभ
भायनों के साथ कीर्ति गावों और आपने भावों से या चाहो सो प्राप्ते
भगवत धार्य सत्य हैं ॥४४२॥

निरसं ही निहोपी चाक्या सम्मादिही मेहा विज्ञानाण देवीदेदीज्ञे
राग सोग भाव टारो अनाण दोस सघारो दवी देवा सेदी जी ॥
दोपाणी जारीह उदो उट्टा हैं वित्ते आणनी इच्छा पूरो प्राप्ति जी ।
धारी क्विची रूजाणंती इ दाई नोसार पचे साघी सापा शंरी ॥

अर्थ—निरसंकी निरसंक्या जिनवाणी निर्वाच दिन कर्ण शंरी
पडिया जिन वाणी सम्यक् के देने वाली महा कृत् शंरी शंरी शिष्ट में
भरपुत्र साख अनेक द्रव्य की जणकार दिन कर्ण है । इम वाणी को

देवी देवता भी मानते हैं तब मन बचन से भ्रष्ट हैं यह निर
रोग सोग मय को टालने वाली है, अज्ञानता के दोष को दूर
वाली है और देवी दयता भी निर याणी की सेवा करते हैं और
हाथ जोड़कर धंदना करता हैं अयान्-धंदना करने लिये,
क्योंकि मेरे चित्त कि अभिलाषा आप पूर्ण करेंगे मेरे चित्त में
आनन्द देंगी मेरी इच्छा पूर्ण करेगी और आप की तथा निर
शोभा कीर्ति दुनिया में आपर पार महिमा है। अथवा इन्द्र
कभी नहीं पासके आपकी महिमा को, क्योंकि जिन वाली स
मधी साता देने वाली हैं मोक्ष भी प्राप्त होती है ॥४४३॥

॥ ज्ञान महात्म्य पुरुषार्थ वर्णन दोहा ॥

जहा जीव निज शक्ति सो प्राक्रम कर चल लाय ।

सो पुरुषार्थ चतुर विध सतजन देत बताय ॥४४४॥

अथ—जहां पर आपना आत्मराम हैं वहाँ पर आप
प्राक्रम लगावे फिर उसको पुरुषार्थ कहते हैं। सो वह चार प्र
किया जाता है उत्तम उत्तम जीव को करना यह भगवान फ
है ॥४४४॥

चौ०—धर्म अर्थ अरु काम कहिजे, चाधे मोख नाम कहि
समदिष्टी वरते समय में, मिथ्याती मिथ्यात दशामे

अर्थ—प्रथम धर्म के लिये पुरुषार्थ कर, दुनिया अथ
पुरुषार्थ करें, तृतिया काम के लिये पुरुषार्थ करें, चतुर्थ मुक्ति
भी पुरुषार्थ करें यह चार नाम हैं। पुरुषार्थ को जो सम्यक
जीव हैं। वह तो सदा सिद्धे चलते हैं। और यह सदा उत्तम

शब्द को साधने हैं, और मिथ्या मार्गी मिथ्या दृष्टि सदां कर्तव्य
वे ही चरने हैं वह दुसरे को कल्पित करते हैं ।

॥ मत्तय गयन्द छन्द ॥

मूर्ख धर्म कहे कुल रीत कुंदल दयादिक सुष्ट बताव ।
हेम नगादि अज्ञान कहे धन ज्ञान महाधन धीधर शीव ।
हामी कहे रति काम कलोल कुं पडित काम निशान
मोघ गिने दिव की गति को सठ सत अथ कू बौर नरव ।

अथ — अथ यहां पर चार प्रकार पुरुषार्थ हैं जो
करते हैं कि जो अज्ञानी जीव हैं वह आगे धर्म धर्म
धर्म समझते हैं जैसे होम यह कराते कुराव
बदाशरण मानादिक कैदमत हैं और जो पंडित
अहिमा धर्म तप नियम व्रत जप संयम
कहने हैं करते हैं इसका नाम धर्म पुरुषार्थ है
सोना तथाहागतिक पदार्थों को प्रदत्त
उद्गम करते हैं यह लोग इसको अथ पुरुषार्थ
मान हैं जीव वह ज्ञान रूप महा धन
पुरुषार्थ, साधे इसका नाम अर्थ पुरुषार्थ
अज्ञानी जा शान को धा कदा है
अज्ञानी जा काम भोग इद विद्वि
हैं पुरुषार्थिक विषय विचारों के
अम पुरुषार्थ है, अज्ञानी

लोक अपना सुम काम करना शुद्ध ध्यान धरता तथा १२ भावना
 भावे १२ तप करें इत्यादिक नेक काम करने को काम पुरुषार्थ कहते
 हैं (अणु जाण) अज्ञानी लोग कहते हैं स्वर्ग को देवलोक को ब्रह्मदेव
 लोकादिक को मोक्ष मानते कहते हैं इसलिये इसको मोक्ष पुरुषार्थ
 कहते हैं और जो साधु महात्मा हैं वह सब कर्मों के बंधन काटे अटल
 निर्गुण पद करे उसको मोक्ष पुरुषार्थ कहते हैं सत्य वचन है ॥४४२॥
 धर्म क्षमादि दसाग दयामय, साधन धर्म महा पुरुषार्थ ।
 सत्त निद्रांत पदे गहि अर्थ अटूट अनूतम अर्थ परार्थ ॥

द्वादश मात महा तप की निह काम न काम सुनाम यथार्थ ।
 धर्म निरार अर्बध अडोल रिणु निन मोक्ष महा परार्थ ॥४४७॥

अथ —अब यहा पर फिर पुरुषार्थ का सुलासा और धरत है
 क्योंकि भगवन ने, १० दश प्रकार का धम पुरुषार्थ बतलाया है ।
 धर्म दया क्षिमा में १ कोमलता म शरलता म ३ संतोष में ४ तपस्य
 इचाया में ५ ब्रह्मचर्य शील, पालने म ६ सत्य वचन निर्दोष बोलने म
 ७ सयम १७ प्रकार की विधि से पालने में ८ निर्मेय मुनि पहीवत में
 ९ निर पाप सुद्ध आत्म भावना में १० इत्यादिक इन बोलों में धम
 प्राप्तम फोहणा उतको समको सम्यन्ती धम पुरुषार्थ कहते हैं सच्चे
 शास्त्र सिद्धान्त सर्वज्ञ देव के उक्त पढ़ने अथ धारण करे अउपम
 अटूट धन यह प्रहस्य करण इसका नाम अर्थ पुरुषार्थ कहा है । १२
 भावना भावे १२ प्रकार का तप करे चार प्रकार की दिनय भावना
 भावे सुत्र दिनय तप विनाय शुभ योग दिनय आचार विनाय इत्याशुभ
 कामना करे पेसी कामना वाले को काम पुरुषार्थ कहते हैं और आठ

को हुए करें बंधन से रहित होवे संसार के जन्म-मरण का
रें अग्ल सिद्ध पद पावे तीन लोक के मस्तक पर तिलक मुद्र
केतु के समान हैं अरु उनके औपमा योग्य परमपद पावन्
पुरुषार्थ कहते हैं ॥४४७॥

पुरुषार्थ चार ज्ञान निज बल सो करै ।

नी म नार भूमि निबल हुये कर्म बस ॥४४७॥

अर्थ — जो यह पहले भी चार पुरुषार्थ लिखे हैं इनको इन्होंने
अपने बल से प्राकृत करता है मुक्ति हेतु केलिये और जो
संसार में अपने कान अकान को नहीं चाहते हों
हैं परिग्रह घन के लिये पाप त्रिया कर्म करता है, इनके कर्म
म फोड़ता है वह नीच संसार में परिभ्रमता है ॥४४८॥

— बरते विषय कपाय में पाप पुण्य में लीन ।

सो विवहारी जीव हैं यघन सहित स्वर्ग ॥४४९॥

जो वैरागी समगति विषय कपाय निद्रा ।

सो शिव गोपी शिव भयो बंदो मन बरदा ॥४५०॥

अर्थ — जो जीव पर पुद्गल के पान म बन् हने ईश्वर का
पौत्र विषया म चार कपायों म बरदा हेतु बन् हने अर्थ
में फंस कर कहते हैं पुत्र करते हैं पाप इन्होंने पुत्र पाप और
अर्थद्वारा यह तीनों द्वारों से पाप पैग बन् है स्वर्ग मन बच
काया तीनों योगों से लीन रहते हैं अर्थ करने में पता नहीं है
क्या धीज हैं इस वास्ते संसारी जीव फंस बन् हने कर्म
अधीन हैं विवहारी जीव सत्य हैं ॥४५१॥ अंगरान ने कहा

जीव वैराग्य दिसा में आये वह समदृष्टि के माय विषय बचाये ।
दूर करके शांत चित्त होनाये वह जीव और यह जीव शुभ पुष्पा
साय लिये सो यह जीव जीवन मुक्ति साध है तथा विदेश में दुर्लभ
हुये उनको में बंधना करता है मन बचन काया से ३ योग ३ कर्म
बन्धो पारम्भार नमस्कार हों ॥४५०॥

—नव रस वर्णन दोहे—

अथै जीव इक रूप हुये यचें रस परिणाम ।

सो नव रस वर्णति मुचि विगारा दिन बनाय ॥४५१॥

नव रस रचना जगत् में भांड मीठ की होई ।

नव रस रचना ज्ञान रमे कहै समकती सोई ॥४५२॥

अर्थ—जिस समय चैत्यन एक रूप में परणमता है तो ही
परिणाम बरतते हैं उसका मन सफ़िये तहमने सहलेता तह अ
साह पेमे परिणाम बरते सो उसको रस कहते हैं सो अर्थात् नव र
का नाम कहते हैं । शृङ्गार १ धीर रस २ करुणा रस ३ हारन रस
रुद्र रस ५ विभक्त रस ६ भय रस ७ अद्भुत रस ८ शक्ति रस ९
नव रस के नाम कहे हैं श्री परात्माने ॥४५१॥ जगत् रूप स
में अनेक प्रकार नव रस की रचना है जैसे स्नान मंत्रन क
चन्दनादि होपन करना नया सु दूर बस्य धारण करना शरीर पर भू
सजाणा पाहन असवारी पर चढ़ना इत्यदि क विभूतकरी मुन्द
करे उसका नाम शृङ्गार रस कहा है । ससार के कार्य में च
करण। राज काज मुदादि में पुरुषार्थ करना भूमि कृषि का क
विषयधार घन उपराचन करना इत्यादिक अनेक कार्य करना उस

वन वीर रस कही है । २ दीन दु ली को दम्बर अपने हृदय में दया
 ली और भोजन घट्ट पात्र सैन स्थान श्रीपथी इत्यादिक देवें और
 वैश्वपादि करणी इसका नाम करुणा रस है ॥३ आपने मन को जो
 वतु अच्छी नामे उमका नाम मनोगत मन को गमने वाले जैसे शब्द
 शब्द तीन हैं वर्ण पाँच है गव दो है रस पाच है स्पर्श ५ है यह
 नेदम बोल मिसे बहुत अच्छे हावें शुभ शुद्ध होयें मनोहर होयें अति
 हा प्रमोद को देने वाले होयें और यह अज्ञाने मन में बहुत सुखी
 माने उमका नाम हात्ये रस कहा है भगवत ने ४ महा व्रोध कपाय
 चंद्र महारुद्र भाव चडे महा प्रचंड चढाल होये इसका नाम रुद्र रस
 कहा है वीरने ठिक है ५॥ जो २ पदाथ आपने मन को दुःख देयें
 और अच्छे ना लग जैसे शब्द वर्ण रस स्पर्श ऐसे २ आपने मन को
 घृणा देने वाले असुभ शुद्ध पदार्थ होयें तो इसका नाम विभत्स रस
 कहा है ॥६॥ महा भय के देने वाले भयकर रूप शब्द आदि होयें
 जाणने से देखने से सुणने से भयभीत होणा रोणा पीडणा विलाप
 करना भागणा दोडणा दुःख मानना इसका नाम भय रस है ॥७॥ अण
 देखा देखे अण सुणया सुणे अण खाया टावे ऐसे अनेक प्रकार के
 पुद्गल हैं, और बहोत प्रकार की वस्तु हैं उनको देखकर अश्चर्य
 माने तथा होणा इसका नाम भगवत ने अद्भुत रस कहा है ८ किसी
 शुभ काम में आपने चित्त बिरती कोटि फाणा ठहरावना स्थिर करना
 अडोल होणा चलायमान न होना इसका नाम शांत रस है ॥९ यह नख
 रस इस जगत् रूप दुनिया में जीव आकर आपने २ रसों का लाभ
 लेकर सम लष्टि जीव संसार से पार होजाते हैं और जो २ जीव

रसों में फस जाने हैं वह सत्तार मं रमते हैं ॥४५२॥

छपप्य छन्दः॥—प्रथम शृङ्गार रस वर्णनः॥

घटणा तप औषध मिलाय उपसम रम मञ्जन ।

शील चीर मति गंध ध्यान लेपन सो सञ्जन ॥

मुकट जिनेद्वर आण प्रभु वच कु डल काने ।

दया द्वार उर कठ स्तवन कर छाप सुदाने ॥

सम दमसत सतोष गुण भूषण नाना भात ।

पहिर घटे मन हय सजे रस सिंगार शुभ कांत ॥४५३॥

अर्थ—नाना प्रकार की तप रूपी औषधी मिला कर घटणा व श्रवणा और लेप करना आपने शरीर पर बटये में मिलायेकि औषध कौन ० सी है । सुनों औषधी के नाम उपसम तिला जल के साथ स्नान करे ब्रह्मचर्य शील रूपी यत्र पहिन सुमिति रूपी गंध अत्र लगावें धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान रूप लेपन लगावे फुकु म चन्द्र केशर कस्तुरी जैसे टिका लगावे ऐसे मैजावट करें और श्री जिनेद्वर देव की आम्ना रूपी मस्तक पर मुकट धारण करें भगवत के वचन रूप कानों में कु डल धारण करें हृदय छाती पर दया रूपी द्वार सजावें भगवान के स्तवन गुण प्राम रूप आपने गले में कंठी कठ में धारण कर लेंगे, आपने हाथों में दान रूप अंगूठी मुद्रिका मुद्रिया अंगुलियों पहिने समता दमता सत्यता सतोष इत्यादिक अनेक गुण रूपी आभरण भूषण पहिने के मन रूपी घोड़े को सजाकर सिंगार के असवार होये इसका नाम धर्म रूप सिंगार रस कहा है ॥४५३॥ ।

॥ दुजा वीर रस व्यपय छन्द ॥

अवकृज फोड उखाड़ भूमि घट सुद्ध मवारी
 धर्म धीन बहु धोय खेत फल लड़े अप्यारी ॥
 सर सनम विवहार बहु त उदाम से कीनो
 कर्म अरि सो भिडे राज घन शुभ पद लीनो ॥
 धर्म अर्थ पुरुषार्थो पायो जस जग सर
 सोमत सुन्दर वीर रस फर बैरी चक्र घूर ॥४५४॥

अर्थ — अरिहत देव ने कहा है कि पाप रूपी मगड़ों को खड़
 में उखाड़ डालो मारे अतकरण से नाश करदो और फिर आपनी
 परिष्कार रूपी भूमि शुभ करणी सुगारणी साफ सुन्दर बनानी करनी
 फिर उस शुद्ध भूमि में दाग शील तप भावना सतोप क्षमा अनक
 भौत से इस शरीर रूपी क्षेत्र में धर्म धीज विनियोगा फिर उस क्षेत्र में
 वह धर्म धीन धीजा हुआ जन्म लेगा और स्वर्गादिक सुख पुष्प मिले,
 मुक्ति का सुख फल मिले और उसका अपार फल लेवे जैसे चतुर
 कृषि के समान तप संयम रूप विवहार करते हैं ऐसे ही बड़े प्रायम
 के साथ लान लेवे ज्ञान लघि विद्यादिका लाभ होवे जैसे विचक्षण
 यणिक ऐसे ही आठ वम शत्रु का नाश कर और उसने साथ बराज
 रायर जूठ या रीपु बैरी को क्षय करके फिर सारयता राज मुक्ति पुरी
 कर लेवे महाशूरवीर रानागत होव धर्म अथ पुरुषार्थ मायक योही
 जगत् में जस पाये जिसने नैक काम किया ऐसे ही महा सुन्दर वीर
 रस रूप हैं सर्व बैरी कर्म रूप नकर करे हैं जिसने इसका नाम वीर
 रस हैं ऐसे वीर रस की रचना में मुनि जन खेलें खेलते हैं ॥४५४॥

॥ तीसरा करुणा रस-छप्पय छन्द ॥

जगत जतु दुःख देव दया चित्तवे शुभ भावे
 कर्म पिंजरे बध जालते तुरत छुटावे
 तृष्या क्षुदा हरत तोष पकवान खरावे
 बधन शाला कु गति ताहि की प्रास मिटावे
 थन्ध कूप अज्ञान थी काटे सत सुख दैत
 करुणा रस रूपी दिपतरदो शिव सुख हेत ॥४५५

अर्थ —ससारिक जीवों के जन्म मरणादि दुःख देखकर चित्त में दया आवे और शुभ भावों के साथ धर्म उपदेश देवा विषय विकारों को दूर हटावें तथा धर्म में जीवों लगावें और मन्व्य जीवों को कम रूप पिंजर से तथा बधीराने छुड़ा बधी रूप जालको काट उपदेश रूपी शस्त्र से जीव को आजाद कर दें तृष्या रूपी भूष को दूर कर संतोष रूपी उत्तम पदार्थ पकवान दें जिससे अत्तरात्मा पहुँच महा त्रिपती होवे फिर कुगति रूपी बधी राने से छूट कर अभय निर्भय होजावे जहाँ जावे यहा अभि तक गया नहीं अज्ञान महाध कूप से निकाल कर महा उत्तम सुखा ज्ञानमय स्वर्ग अपराग कर दें गुरु देव ऐसे महा उत्तम से उत्तम करुणा रस मे रम पावें मुनिदेव गुरुजी इमका नाम भगवंत ने करुणा रस कहा है ॥४५५॥

॥ चौथा हास्य रस छप्पय छन्द ॥

जिनवर गणघर साधु सती दरसण अति हरिपे ।
 बदन पूजन भगति प्रेम सुन बच गुनया रिखे ॥

विद्यापुत्र मृग्य दृग कमल रोम राई उल सते ।

चित्त मै अति आनन्द पाय शुभ राभ करते ॥

हाथ महा रम रूप सन मोमत नान गमीर ।

समता मननी मग रम पावे मन जल तीर ॥४५६॥

अथ — तिन ती रंकर देव गणधर देव साधु गुरुदेव महात्मा महा मत्सीया जो मन्तरान आर्या जी ऐसे २ महा उत्तमात्मका दर्शन देय हो अथत प्रमोत् उत्तम साहय्य देने वाल उनको नमस्कार पूजा भक्ति गुण ग्राम सेवा करन से वचन सुण के मतकार करन से, सम्मान देन से श्रद्धा शुद्ध आवे आपने आंगुण दूर होवे और गुण प्रगट होवे रिक्त प्रसन्न होवे विकसित वन्दन नयन कमल मम होवे अति प्रमोत् चढे उलसत गोम राइ होय और मर्ब काच शुभ होवे, दानादिक में महा हास्य रस होवे ऐसे महा उत्तम पुरुषार्थ ज्ञान से गभीर मोभा पाते हैं और वह सम्यदिष्ट महली के साथ रमते हैं तथा मसार समुन्द्र के किनारे पर बैठे हैं मुक्ति पुगी जो पावेंगे इनका नाम श्री इन्वर परमात्मा भगवत ने कहा है । यह हास्य रस है ॥४५६॥

॥ पाचम रूद्र रस छप्पय-चन्द्र ॥

प्राङ्गम घनु तप बाण खडग तीक्ष्ण धर ज्ञान ।

वरुणी रितत विवेक तवर मिर पर मुन्यान ॥

,घायक चक्र प्रहरण धार सग्राम मचायो ।

मोह सैन पति भूर साथ भूझे बल लाया ॥

रूद्र महा रस, रूप धर मोहाटिक अरि चूर ।

विदानन्द जप श्री लही वसै मुक्ति पुर सर ॥४५७॥

अर्थ—रुद्र रस के धारण या गुणि मदात्मना धैर्य होने सुनों
 बल प्राप्तम पुरुषार्थ रूप धनुष्यवारी होने तप रूप नाता प्रसार के
 वीर चलाने प्रधान गीर्ण ज्ञान रूपी तत्र तजपार चलाने शुद्ध वीरवी
 रूप शक्ति घटी क धारण वाला हाथ विरक्त विचार रूपी हाथ में
 कुठार रखर होत शुभ धम ध्यान शुद्ध ध्यान रूप हाथ में आगे दान
 होय, छायात्र भात्र रूप आपन हाथा में मुद्रान कम धारे घेने २ हय
 यार धारके सर्व कम शत्रुओं को हय करे तेम मया मूरमें मुक्तिपुरी म
 रान परते हैं इसना नाम रुद्र रस है भगवंत ने और इसको गुणि
 राज धारते हैं ॥४४५॥

छैठा विभत्स रस द्रव्यद्वन्द

रक्ति बिंदु उत्पत्ति अशुचि पूरण नहीं विर तन ।
 बुध्यशन घर अध मून दुगति दायक चबल घन ॥
 विषय भोग बहु रोग कष्ट दायक जग माही ।
 दारा सुत परिवार खेद नारी सग नाही ॥
 सर्व द्रव्य नासी लाली सब धी भए उदास ।
 रस विभत्सी रूप मे रस त्याग मव आस ॥४४६॥

अर्थ—भगवंत ने कहा है कि माता का रुद्र रक्त और पिता का
 धैर्य यहा दोना मिल जाये तो जीव तथा शरीर की उत्पत्ति होने और
 घृही पावे शरीर इस चिन का है जिसमे त्रिष्टा मुख हाड चाम लह
 मास खरार उक्त नाक कि मूल पित्त कफरादादिक अशुचि शरीर में
 पुण भरि हैं यह देही अस्थिर हैं विर नहीं हैं और य सात बुद्ध्या
 सनों का घर हैं पाप की जड़ हैं नर्क तिर्यच दुगति का रास्ता हैं यह

कृगति के देने वाला है यह धन पाया इन्द्रिया के विषय २३ विकार दोसो चालीम को बढ़ा ने माला है ज्योति नीर जो जीव विषय भोग विकारों में फल गया उसकी गति गौरी है मन्तर चक्रन्तीन्त इस शस्त्रे पेमा सोने के मरी पुत्र भा. जादि नर परिहार दुग्ग देने वाले है । मइत शिदुवन ना जो मेरे साथ आया ना कोई नारे पुन्य पाप माय में आते जाते हैं इसलिये यह सारे पण्य नारा रूप हैं और मर्व से उदास रहे ममत्त भाव का त्यागी होये यह विभक्त रस है ॥४५५॥

॥ सातमा भय रस छप्पय छन्द ॥

अटवी इहि सशोर घोर तिह कर्म नहा बन ।
 विष रस में फल फूल पर माला उड़ दारण ॥
 काल जरा रोगो दे विह अहि सूकर वा प ।
 कृगति खान अति विषम मर्व ही दु ल को जारण ॥
 इहि विष लरा संसार की मए महा भय मीत ।
 भय रस रूपी सगगति तारा ऐनी रीत ॥४५६॥

अर्थ —यह सत्कार रूप एक महा भयकर घन्वी है और कर्म रूप एक महा उद्यान बन है उस वन के रूतों को विषय रस मइ फल फूल लगाये है पर साया मूल सारे दुःखदर है डारने है काल रूप सिद्ध के समान ० नरा रूप सर्प के समान जगदेव कनेस सूर हाथी शीघ्र यादर के समान है और मोटे मने सरे मना है अर्थात् इस सत्कार में सत्र ० का अरु है और श्रीज सुमार की अर्थ के महा भयय स होय और सत्कार म ॥ १ ॥ मन्तर ना के

रहे इमका नाम भय रम है ॥४५६॥

॥ आठमा अद्भुत रस छप्पय छन्द ॥

अद्भुत वाणी सुणी धर्य अद्भुत मै जानै ।

अद्भुत प्रभु को रूप शक्ति बल गुण दरसानै ॥

अद्भुत मुनिवर लब्धि धर्म शीलादि दिपेंत ।

तप सज्जम फल देव ऋद्धि वैक्राय धरत ॥

अद्भुत आत्म राम बल लख राजत गुण धाम

ज्ञानी ज्ञान विलास इम अद्भुत रप यमिराम ॥४६०॥

अथ --किसी भव्य जीव प्राणि ने भगवत का समोसरण दिया तो क्या कहता है । अहो आश्चर्य भगवन की वाणी सुणी अहो आश्चर्य कैसा अथ जाने समझे अहो अति आश्चर्य भगवत का रूप छत्रि कैसी वातकारी देखो अहो आश्चर्य शक्ति लब्धि बल प्राक्रम गुण देस अति आश्चर्य आया अहो ? अतिश्चर्य अद्भुत साधु महात्मा की लब्धि वन्त्रिय आहारीक लब्धि जंगम चारण तेजु लेस्या शीतल लेस्या समिन्न श्रोत्र लब्धि इत्यादिक शक्ति आश्चर्य देखी और ज्ञानादिक दश विध यति धर्म देता आश्चर्य आचारादिक कृति सोमे अहो अति आश्चर्य तप तप सज्जम करणी का फल देव गति म पाया धैर्य रचना रची और अनत बल चेतनराय जीव का जीना जो विराजमान हैं ऐस गुणा के भटार ठेमे ज्ञानी के ज्ञान विलास में अद्भुत रस है इमका नाम भगवत ने अद्भुत रस कहा है ॥ ४६० ॥

॥ नवमां शानि रम-द्वयपय छन्द ॥

प्रिय कपाय त्रिदार्प शुद्ध चेतन अरिगारी ।
 अलख शक्य अनेत ज्ञान नान के मर भडारी ॥
 यध जाल को तोड़ शुद्ध सपर निनग ही
 मन पायो त्रिग्राम अनुपम शिव माहीं ॥
 कर्म घात को चार दण चणु को कर यल खीन
 सत मण सति करण सत रहे मर लीन ॥४६१॥

अर्थ—पाँच इन्गीयों के प्रिय तैस विकार
 कपाय इनको दूर कर फिर आत्मा कर्म मैल से रहित
 हैं और चेतन निर्विकार होजाये अलख अरिगारी
 ज्ञान के भण्डारी होनायें यध जाल रूप को तोड़
 ऐसे ही सर्व ने सपर किये मय शुद्ध हुवे और
 करी कर्म दूर किये जिनों का मन अवन्न दण
 चार घन घनीये कर्म चय किये और चार दण
 होई रसी की तरह ऐसे जिसने थाट कर्म
 शानि होह औरों को भी शानि करते हैं। मय सत
 लीन होये इमका नाम शानि रस है ॥

सग्रह नव रस का अर्थ

गाथा पति मिगार वीर सैराने
 करुणा सति करण हाथ सुल्लिने ॥
 फोटपाल रस रुद्र विभक्त ॥

मय अरि दलने मयो चित्र रस मंत्री ॥

सांतराय के उपवसे सब रस मो रस शांत

ज्ञानराय को मित्र अति पसं साय शुभ प्रांत ॥४६२॥

अर्थ — भगवत ने कहा है के शांत रस सब रसों में राजा के समान रसे हैं और सब रस शांत रस की सेवा करते हैं सिंगार रस मोदी (भंडारी) के समान अनेक पदार्थ धारी हैं जैसे चमु सिरोमणि सैनापति हैं ऐसे हीर रस शोभा पाता है और कल्याण रस राज पुरोहित के समान अनेक मंत्र विद्यायंत्र होवे, उपद्रव्य का नाश करे, शांत करणे वाला होवे यह हास्य रस गेसा प्यारा मखा है सजन विधि भात के विलास करणे मनको मोदने वाला है) रुद्र रस कोट बान के समान पदवी के धरता और दुष्ट को दगने में प्रनाका पालने में तन है विमत्सरस कम दुष्ट कुर्मगत विकारों को हटाने वाला है जैसे चौकीदार पहरा देके सवाधान करे मय कहर सुरमा है शत्रु धैरी का नाश करने के लिये महाबली योद्धा है अद्भुत चित्र रस मंत्री के समान हैं। आश्चर्य कविराज धनेराज करणे स्व पक्ष पोषणे संत रस राजा को वक्षम प्यारे हैं ऐसे साथी साथ संत रस रूप हैं ॥४६२॥

दो०—ज्ञान विषय चैतन वसै विदानन्द में ज्ञान

नहीं वियोग पावे कावै यत तत निल परमान ॥४६३॥

अर्थ — भगवत ने कहा है जो ज्ञान है सो आत्मा है जो आत्मा है सो ज्ञान है इसलिये यहा पर चिदानन्द आत्मराम मय ज्ञान है और ज्ञान मय आत्मराम है और सदा के लिये दोनु का सम्बन्धी मेल है जैसे सूर्य से रोशनी दुर नहीं रोशनी से सूर्य दुर नहीं है और

भाङ्ग भी दूर हुआ ना होगा कभी ऐसे ही चैतन का और ज्ञान का ना कभी वियोग हुआ और न कभी ही वियोग होवेगा इम वास्ते वियोग विछोडा कभी होगा नही ॥४६३॥

मत्तगयन्द छन्द सर्वैय तेईमा

सत् कृमत्त ममन्त असत्त कु जो गुण द्रव्य कु सो गुण जाने
सशप नाश प्रकाशक लोक कु साधक मोक्ष कु चैतन माने ॥
जाय अनीर कुमिन्न करै अत्र पुन्य लखे सब आश्रय माने
सवर था परने निजना पुन वध कु तोड़ रने शिर याने ॥४६४

अर्थ—भगवान ज्ञान जड़ और चैतन का है जड़ के जरिये चैतन ने दुख पाया चैतन के जरिये जड़ को दुख नहीं है क्योंकि दुख मुख्य तो चैतन जीव को है और किमी को नहीं होता है इस लिये सत् पदार्थ को सत्ता ही जागे और असत्त को असत्त मानो जैसे कोई कहे के मीने छोड़े के मिग देखे तो यह घात असत्त है जैसा जैसा जिस २ पदार्थ में गुण औरगुण है उनको वैसा ही जाणे माने अगर कोई कहे के अति चन्दन पत्ती शीतल हैं तो क्या आप हमको मान लेंगे कन्पि नहीं मान ऐसे ही आवनं सारे मंशय दूर कर नाश कर दें फिर आपके अन्दर लोकाजोक का प्रकाश होवे और मुक्ति साधन को चैतन जीव मायन करता है और कोई नहीं है क्योंकि चैतन को जानता है चैतन जड़ को भी जानता है जड़ चैतन को नहीं जाणता है चैतन सर्व को जुदा २ पुन्य २ पाप ० जीव अजीव आवध सवर वध निर्जर मोक्ष निर्माण को जाणता है उमना नाम सत्त सधा ज्ञान है सत्य है ॥४६५॥

सर्वसु व्यापक ज्ञापक रूप, अलेख्य वच श्रुति वेद पुराणे
नित्य अनादि अनन्त अखण्ड अनुग्रह शाक्त विष्णुानन्द जने
उर्ध्व मध्य पताल विष गुण ग्राम करै बहु लोक मियाने
अत्तराम पुत्राण्य मई प्रभु ज्ञान स्वरूप जिनन्त बखाने ॥४

अर्थ—सर्व लोकालोक म भगवान का शाश्वत व्याप रहता
और सारे सर्व पदार्थों के ज्ञाता हैं क्योंकि अनेक सिद्धांतों
शास्त्रों में वेदों में पुराणों में कहा है कि भगवान् अखण्ड
अखालपुरुष हैं, अनादि अनन्त हैं, अत्रय अनोपमा हैं, अणु
हैं कभी अन्त नहीं आयागा इश्वर परमात्मा भगवान का
अरूपी है जिन्होंने का कोई रूप नहीं है और निहा की उबे तों
वाले देवी देवता मध्य तिर्छे लोक गले नर नारि बाण व्यन्तर दे
देवता पताल लोकवाने भवनपति देवी देवता भगवान की
मन से बदना सेवा भक्ति स्तुति गुणग्राम करते हैं। और अ
पापा का नाश करते हैं। ऐसे भगवान ज्ञानमय अत्तराम हैं
जिनने त्रदेव की वाणी है ॥४६५॥

॥ छप्पय छन्द ॥

सम दम सत सतोपशील सन्नर विवेक तप ।
दसण चरण सुध्यान धीर सवेग परम जप ॥
दानादिक बहुधर सग जाके अति सोहे ।
सखी चमा करुणादिक रूपरन्ती मन मोहे ॥
जिह अट्ट भण्डार धन अमित अनन्त अगाध ।
समता नगरी राजधिर नमो ज्ञान शिव साध ॥४६६॥

अर्थ—सम दम सत संतोष ब्रह्मचर्य मंत्र तप विवेक दर्शन
 चारित्र ध्यान धीरज सवेग परमात्म जप दान आदिक बहुत सूरमें
 जि हों के संग हैं और यह शोभा को प्राप्त होते हैं जिहों की राणी
 सुमा दयादि अति रूपवती सुन्दर मनको मोहने वाली और जिन्हों
 का भंहार आपय अट्ट है तथा चोर भय से रहित है अमित्र है अत
 रहित है अगाध है असाधन है जिहों की समता राजधानी है उम
 नगरी का राजा राज स्थिर है ऐसे मुक्ति के साधक ज्ञान महाराज को
 मैं नमस्कार करता हूँ क्योंकि ज्ञान सदा सुख के देने वाला है ॥४६६॥

रिस मद छन सठ लोम सोग सताप परम भय ।

आरत रुद्र प्रमादि काम चित्त भाव विषम नय ॥

दुष्टाचार विकार सर जिह साथ पणोरे ।

घरणी हिंसा कुमति आदि भर पाप मतरें ॥

यघ रूप मिथ्यात पति हैं गलीप्र अज्ञान ।

ताके मय मजन अर्थ सेवो श्री पति नान ॥४६७॥

अर्थ—श्री बीतराग देव ने कहा है के, यह इतने घोल जीव
 आत्मा को दुःख देते हैं क्रोधमान माया कपट सुखत्व लोम शोक
 फ्लेश भाव संसय भय चिंता ध्यान हिंस ध्यान आनस काम विकार
 विपरीतनय जुवा चोरी इत्यादि छोटे आचार नाना प्रकार के विकार
 विकार ऐसे सूरम जिसके साथ बहोत हैं और राणी निसकी हिंसा
 होये कुमति दुष्टता हो निसकी पाप रूप घने जोधे साथ में हैं कर्मों
 का बंधन रूप मिथ्यात पुर का राजा हैं और अज्ञान रूप जिसका
 गति में हैं जो जीवों को दुःख देता हैं सो इस भय दुःख को दुर

करने के लिये हे भव्य ! जीवों तुम भगवत का ज्ञाप करो और श्री
ज्ञान का शरणा लेशो हात महाराज ॥४६५॥

समगति अनुग्रह महामत छद्मस्य पुरो के ।

देवे मुख बहु मात लोक परलोक सुरो के ॥

परमानन्द अनूप पुरे कैरला स जीगी ।

शांत अयोगी देत जीव चदि होत अयोगी ॥

रुग चूर समार तज यधन तोद सुछन्द ।

सिद्ध भए जिह के मजे जयो ज्ञान जगचन्द ॥४६६॥

अर्थ —संग दृष्टि दो प्रकार के हैं एक तो चतुर्थ गुण ठाण
स्थान वाला दूसरा पाव में गुण स्थान वाला चौथे गुण ठाणे वाला
आपृचि सम्यक् दृष्टि है और ५ में गुण ठाणे वाला देश कृति
मन्यक् दृष्टि है इसका नाम समणोपासक भावक धर्मो है और ६ में
गुण स्थान से लेकर १२ में गुण स्थान तक सर्व महाशक्ति छद्मस्य
समदृष्टि साधु महारत्ना महा मुनि है और जो २ इन गुण स्थानों में
होते हैं वह सबको यह महा मुख समाधि देता है और परलोक के
महा मुख वैव गति के भी देता है । और १३ में गुण स्थान परमानन्द
केवल ज्ञान रूप सयोगी गुण स्थान महा मुख देता है और यह सर्व
वैव देवें इन्द्रों के पूज्यनिधि हैं फिर उससे उपर जब १४ चौथे गुण
स्थान जाता है तो उसका नाम अयोगी गुण स्थान है यह स्थान निर्वेदन
पने परम कर्तक रहित महा शांति मुख के दाता हैं इसलिये ज्ञान महा
सुरवीर हैं कर्मों को चूर नाश कर संसार में जो जन्म मरण करे
वहों को छोड़ यधन तज तोद कर जीव को स्वधीन अजाद करता है

ऐसे ज्ञान को विमरण के श्री लिंग मान्य होते हैं ऐसे ज्ञान महापुरुष
को ज्ञय ही ॥४५॥

करणी मान समेत ऊ च च दल शी ।

ज्ञान बिना दु ख देव जय नाम देवी ॥

अंक बिना पदु सुन्य कार नई ब्रह्म केवे ।

ज्ञान बिना करतूत राम शिष्ट के देव ।

परम मित्र हैं जीव की ब्रह्मण्डल देव ।

पन्दे विवकर जोर के हर हर शिष्ट देव ॥४६॥

अथ — द्रव्या तत्र नानाभिः कर्तुं कृतं ज्ञान सहितं ज्ञान के
साथ मुक्ति रोग के सुख दान है ॥ ४५ ॥ श्री गौरी देवी हैं और
ज्ञान रहित करणी करे दो मन्त्र है ॥ ४६ ॥ रूप, दुःख तथा
लेने है । क्योंकि जैसे विद्यार्थी बुद्धि के बिना काम नहीं आवेगी
और गिणने वाला का वन निरुद्ध बने ॥ ४६ ॥ ज्ञान के बिना
करणी निरुद्ध है ऐसे कार्य नष्ट शिष्ट को कहा जाता है ऐसे ही
ज्ञान में देखा है । श्री गौरी का स्वरूप, गिण देने वाला पर
ज्ञान महाराज पदा गुण हैं ॥ ४६ ॥ ज्ञान राय जी की मैं दोनों
हाथ जोड़ कर नमोकार करण है ॥ ४६ ॥ हाथ जोड़कर एक वित्त सु
होकर ॥ ४६ ॥

दोहा—रवि शशि मणि शंकर हरि कौन आदि जग दर्व
ज्ञान प्रदाय समस्त रवि शंकर ज्ञान गुण सर्व ॥४७॥
हि शिष्ट साम कथा यथा कथा शिष्ट देव ।
कर्म कथा सुखद न कर्म कथा सुखद न मापत है ॥

अर्थ — चंद्रमा सूर्य मणिरत्न दीपक विजली पावक आदिक
प्रकारावत संसार मे और द्रव्य अनेक हैं लेकिन ज्ञान जैसा और का
वस्तु इसे व्यादा प्रकाश करने जाता नहीं है । ज्ञान का प्रकाश तीन
लोक में है । इसलिये मेरी नमस्कार होवे जोके सरल गुणवत ज्ञान
राय को जो शिव मार्ग के देने वाला है ॥४७०॥ ज्ञान कला के बराबर
और कोई फला नहीं है इस वास्ते यह आक्षी कला है शिवपुरी मुक्ति
के लाभ रूप शिवगति के देने वाला है ज्ञान कला जैन मार्ग जैसी
और फला कहीं नहीं है जगत में कुकला कम वाला 'अज्ञान कला
बहोत है ऐसा श्री जिनदेव ने भाषा किया है कहते सत्य है ॥४७१॥

चक्र बध दुमल छन्द अलंकार

सुव लाख फला कुकला कुटला चला सखला बहु लाल चला
रिसला गरला अथ लाख मिला दुख लाख फला कफला बहुल
शिव लाभ फला सुकला विमला सुखलाभ बहुला अटिलो ।
चितला इमला शिव लाभ फला तत्र लालच लाख खला दुकल
मुनिहाल मलायुत लात्र सला सरला सम लालच लाहि खला
शिव लाभ फला मन लाई रला सुहुतोस विलास मिला भचला
सुकला धवला सबला कमला अखला गरला भयला अतुला
अघला खदला सुख लाख फला चितला इमला शिव लाभ फला

अर्थ — श्री धीतराग देव ने कहा है कि जगत् मे लाखों 'द
कला कुला है सो कुकला है और कुटलता चपलता कपटता धये ला
चललाई बहोत धये लाल चललाई है मोघ लागरली पाप लाख मिल
लाख दुःख फली है छोटे फल धये सहित है और ज्ञान कला शि

रत्न कला हैं सोभली हैं निर्मल हैं जिसमे घने सुत्र का लाभ है, और
 स्थल हैं ह जोर ? ऐसी चिन्त लगावो छोडो लालच लाभ भूमि खोटी
 कला है शनका अथ सोच के करना ॥१७३॥ साधु महापुरुष मुनिनाल
 कायनकारन हैं चमारंत हैं शरल कपट रहित हैं आत्म कल्याण कहै
 शोभ लालच मे रहित हैं तथा मुक्ति पाने के लिये ज्ञान मिखने वाले
 मेश मति करते के लिये पाना पीना पहरना करते हैं क्योंकि जपर्म
 परम आपने रिक्त छो लगा मनको लहेरा रल मिना मन हुबसातब
 भना हुवा सविज्ञात गिला रिपरर श्रेष्ठ कला उन्नत यत्नत श्रद्धि
 यत श्री देवीयव संपूर्ण मिद्धात का लाभ लेना है देही शरीर रूपी
 भूमि शुद्ध करणी अतुल है लागो पापों को दलना है और फिर
 लाग्या सुगों को देने पानी यह देही रूप भूमिका है हे जीव आपने
 चिन्त को लगावो और शिव मुक्ति का लाभ लडा औरस का नाम है
 शिव लाभ कला ॥१७५॥

नरका नाविका वध "दोहरा"

सदा ज्ञानवन मोरमो घरम धाम शुभ वास ।

सावधन रूप भगतिपर दोशे प्रसु के दास ॥१७५॥

वधन जाव अजीव मिल भय पुन्य आशय होई ।

मंथर निजा ते मुक्ति प्रय त्रिक नरघत्व सोई ॥१७६॥

पाप स्वय को दुकर फल पुन्य रफल फल सुकर

दोऊ वधन जगत में दूरे वधन सुकर ॥१७७॥

अर्थ—हे जीव आप ज्ञान रंगी वास में सैर करो सदा और
 धर्म रूप मंदिर मठान में सदा सदा पर आर्या आनंद सेवा से करो

और प्रमाद को छोड़ मगधान होरो होजाओ फिर आप भगवान का
 सेवा भक्ति कर सेरक सचे धन जाओ तुम हो जीव ॥४५॥ नीच
 अजीब दोना का जन मेल होतव बधन पढ़त जाता हैं और पाप पुण्य
 से आश्रय होता हैं आश्रय के दो नाम हैं एक आश्रय मे पाप आता हैं
 जीसे हमको दुख होता हैं और दुनियाँ में जन्म मरण करने पड़ते
 हैं जिसका नाम अशुभ हैं दूसरो आश्रय से पुन्य आता है जिससे
 हमको दुनिया में सुख मिले आनन्द मान धन दौलत परिवार बच्चे
 और दुनिया मे सोभा होवे इसका नाम हैं दुनियाँ में सुभ सुख
 देने वाला हैं और सबर निर्जरा दोनु ने मिल हमको मुक्ति में धार
 देंगे कब देंगे जब नव तत्व पदार्थ के निश्चय मरण कार सी
 त्रिक के होजावेगो और आगे देखो क्या कहा हैं सत्य रहा हैं ॥२५॥

॥पाप फल भूजग प्रयात छन्द॥

घणे ही न माता पिता नारि पूतो धन धाम पासो सुचिरो विभू
 महारो पीड़े घणे अग हीने जिसे,पाप काने तिसे दुख लीने ॥४५॥

अर्थ —ऐसे २ जीव संसार में बहुत हैं जोके माता पिता से हीन
 हैं नर नारी, हीन पुत्र पुत्री हीन धन धाम से हीन घर धार हीन
 वास पढोस से हीन वस्त्र पात्रादि से हीन विभूत परीप्रद आदि
 से हीन और बड़े २ रोगों से पीड़ित हैं अंधे हैं कुपज हैं, पंगुले
 दू ठे है गजे हैं गूरे हैं इत्यादिक अनेक अन्न हीन हैं बहोत धने जी
 दुखी हैं जिसने पाप किये है उसने दुख लिये हैं इस प्रकार से जी
 पापों का फल भोगते हैं और संसार में जन्म मरण करते फिरते
 ॥४५॥

पुण्योदय आपके यह फल नर प्रसार से पु-व बाध धर प्रसार में उप
भोगे मिले फल ॥४८०॥

नव पुण्यनाम नारायण छन्द

सु मक्ति नीर धानक सुमैन धीर दिजिया ।

मनो सुवैन देह सो तथा प्रणाम कीजिया ॥

मरति पु य नी विधे सुनो सुषुद्धिवतजी ।

करति जीव जो रही इयति पु-परति जी ॥४८१॥

अर्थ—स्वदृष्टि भोजन बहुत भाति के खाने पाने दूबें सुदर
शीतल जल रसवत आदि पीने के लिये देव ठिकाना कोइ रहने के
लिये देवे सिञ्चारिक देवे पहरने के वास्ते यात्रादिक देवें मन से किसी
का गुरा गा चिते यचन से शुभ शब्द बोले काया से दुःखी जनों की
सेवा करें जिसे दुमरे की आत्मा सुख साता आरामाने और गुरुदेव
माता पिता ब्येष्ट पुरुषों को नमस्कार करना चाहिये तो जीव पुन
बांध यह नर प्रकार का पुत्र जीव बांधे तो सुखपावे ॥४८१॥

॥ कडका छन्द ॥

जीव तो नित्य सोनित्य चेतन सदा कर्म सजोग गति जोनिघार
पाप छोड़े मई पुन्य हाटक घड़ी दुविध पेड़ी महा मोह मारी ।
तोड़ वेड़ी छूटे मोह की फन्दते मुक्ति पुरराज धिर सहि अनतो
सच्चिदानन्द परमात्मा देवजा नमो कर जोर हरजस करतो ॥४८२॥

अर्थ—जीवात्मा सदा तीन काल जीव जीता है सो चैतन्य जीव
हैं सदा रहता हैं और आठ कर्मों के साथ चार गति रूप संसार में
तीन प्रकार कियोधि यह जीव भोगता फिरा है जैसे पाप रूप तो

तब है और पुनः स्वर्ग हैं यह दो वेदिया महा मोह कर्म हैं इन
 ज्यों के जल में यह पत्तन मरण किया है इन दो वेदियां में जीव
 रंग हुआ है तब इस नीर की मोह विद मुलगी तो यह जीव
 ज्ञान आरम्भ संमानगा तब आपनी सम्यक दृष्टि छेत्री मे मिथ्यात
 वप वाङ्मय का तोड़ के यथा मे छुट मुनि महाप्रत पुगी पहुँच शाना-
 लह नित्र वर्णा की साथ लेकर मोहादिक जो आत्म शत्रु थे उन्हां
 झूठसुद्ध वैदु ठपुरी का राज लिया फिर मुक्ति का सास्वता अर्नता
 मय प्रया ऐसे श्री सन् चिन् आन दमय ज्ञान दर्शनमय परमात्मा
 शत्रु को मैं युग हस्य कमल जोड़कर हरजसराय बंदना करता है
 शिर परमात्मा को धारम्भार बदन ॥४८२॥

श्री विनवाणी मास्वरंती अमित अनन्दि अनन्त ।

श्री कहे कवि अल्प मति खग वत नम प्रितत ॥४८३॥

बसो बाणी देवप्रति जो मापी एस्वाम ।

बसो नाणी सेर यति सोमा की है धाम ॥४८४॥

अर्थ—श्री जितेन्द्र देव की बाणी सारस्वति हैं सदैव सना है
 अमित हैं आनादि अनन्त हैं कवि की बुद्धि अल्प हैं कहा तक वर्णन,
 करें जैसे पक्षी आकाश में उड़े परन्तु आकाश का अन्त नहीं आवे
 इसी प्रकार से श्री भगवंत के गुणों का और बाणी का अन्त नहीं है
 जाता नहीं पावे ऐसे हैं भगवान की बाणी गुण ॥४८३॥ श्री वीतराग
 देव की बाणी की जहा २ जाते हैं तहा २ भगवन की बाणी का
 प्रकाश होना हैं भगवान की ज्ञान रूपी बाणी को बार बार बघो
 — ज्ञाने ज्ञाने गति मिले मिलती हैं और यह गुणों कि खान

हैं इसकी शोभा बढाओ यरा गाओ ॥४८४॥

यमक अलकार दोहा

जिह जिह चाणी सरद ही तिहतिह समगति पाय ।

करं करं करणी कर्म स्वय शिव शिव पहुचे जाय ॥४८५॥

अर्थ — जिस २ भव्य जीव ने भगवान की चाणी पर श्रद्धा करली है और प्रतीत आइ है उस २ जीवने सम्पत् प्राप्त करी है, उन्हीं का अर्थकरण भी शुद्ध हुआ सवम लिया तप किया करणी कर सफल कर्म किये किये उपद्रव रहित कल्याण रूपहोये मुक्ति निपाण पद में जा विराने ॥४८५॥

॥ चक्र बध दोहा ॥

सुन सुन जिन धुन ज्ञान गुन दिन दिन तन मन लीन ।

चुन चुन गुन गण ज्ञान मन धन धन ज्ञान अनर्द्धन ॥४८६॥

अर्थ — हे भव्य जीवो ? आप श्री जिनैरनुर दब की चाणी की ध्वनी सुनो, सुनके भेगवत के ज्ञान का गुण जाना गुण जाणके दिन प्रति दिन आपने मन में तन मन से लीन रहो और गुणों के गुण को चुन २ के ग्रहण करते रहो आपने मन हृदय में धरते रहो धन है धन है ऐसे उत्तम जीवों को दीन पने से रहित रहो और वहाँ महा सतोप रूप धन से पूर्ण हैं ऐसे २ जीव संसार से तर जाते हैं ॥४८६॥

सरु बन्ध सर्वैया

सुन जिन-रुचर अमृत मय भर जन मुदित-हरण दु ख दोष

सुख को घाम महा शोभा मय समय सुद्ध धार सन्तोष २

गुर पद पाय सिद्ध कौतिक 'की भोगे' भोग अतुल मन पोरुं
 सुम लव धर्म 'कर्म' मल हर करि अविचल अमल परम पदमोष

अर्थ—मुनके अरिहत देव के बचन भव्य जीव अति ही हर्षवत
 होते हैं यानी सुखी में आप हुये रहते हैं दुःख और दोगों का सर्व
 नश करने हैं क्योंकि महा सुख का 'घर' उपमानत महा मुनि साधु
 श्रुति संतोष रूप धारत हैं फिर उत्तम देव पद पाने हैं पद प्राप्त करके
 दरमय भोग भोगते हैं और आपने मन मे अतुल मुख मान शरीर की
 पोषना करत हैं । फिर उसके बाद 'मान' भव होते हैं और 'संसार' में
 आः 'म ले महा एत मधर की अद्वि का मुख भोग भोग के पिछे
 मंजम लेव तप कर कर्म छुय करे और अविचल स्थान मुक्ति में जावे
 उतकृप्ये पद पाय सिद्ध गति में सिद्ध होवें जो = ऐसी करणी करेगा
 वह जीव वरेगा ॥४८५॥

श्री वत्स वधालकार दोहा

समगति में शुभे भति 'वसै' 'से' सदा सुपान

शासन में महिमा वधै शवो ऊ चा स्थान ॥४८६॥

अर्थ—सत्र गुणों की खान मूल मन्थकत्व होती हैं जिनमें सारे
 गुण मन्थकती के रहते हैं समते हा हे मन्थ बनुर जीवो ? सुम सदा
 नित्य इसकी सेवा करों जिनसे जिन शासन की यशी कीर्ति होवे और
 परमय में 'ऊँच गति' में जावे उत्तम पदकी पावै ॥४८६॥

अष्टकोणः पदाकार वसत तिलका छन्द

देवाधि देव जिनदेव नमामि तुभ्यान्ति
 तुभ्यानमन्ति मुनपरच नरेन्द्र "भव्या

भक्त्या सरोर गगन रचयत पूज्यम्
पूज्या बिलोक हरपान्ति सुभक्ति देवा ॥४८६॥

अर्थ — हे भगवान देवाधि देव अहम् ? तुमको घन्टना नमस्कार करते हैं और मुनिश्वर साधु महात्मा तथा उत्तम भक्त्य जीव भूपति आदि घणे अच्छे भले देवते नाग कुमास्त्रादि के, संमुह यह तुमारी पूजा भक्ति करते रचते हैं और आपकी सेवा पूजा भक्ति स्तुती गुण प्राप्त करते को देवके अति प्रमोद पाते हैं देवी देवता एमे यह सब मिल करके बन्दना करते हैं ॥४८६॥

वृत्त वध मालिनी छन्द॥

जलज सरस जोती वक्र सोभा प्रभु की

जलज सरस सेती दन्तमा नाथ जूकी

जलज सरस ताई को मलाई करो श्री

जलज सरस गधो श्वास लेते स्वरो की ॥४८७॥

अर्थ — श्री देवाधिदेव की मद्धिमा जैसे जल में चन्द्रमा सरस पूर्णमासी का साफ निर्मल शोभा देता है ऐसे ही भगवत की बाणी की भी निर्मल सोभा है भगवत के मुख से जो निकलती है और जैसे मुखा फल सरस जल सहित शोभा पाता है और जैसे शरद ऋतु के रत्ना का ढेर प्राति देवे सजल सहित हावे तथा जैसे सजल सरस कभल उत्तम सुगन्धी देवे ऐसे ही उत्तम से उत्तम श्री भगवत के स्वासो श्वास आते हैं सुगन्धमई जब स्वर से शीलत-स्वास लेते हैं जो भगवत के गुण लेगा सो तरेगा ॥४८७॥

सर्व लघु वर्ण सरोवर वध, शकर छन्द

नरक पशु गति गमन मय हर दुरत दल पर हरन ।
 ना हाप कर भगति वित्त घर अरच त्रिनवर धरन ॥
 नर चतुर सुर असुर उड गण गहित जिन पद सरन ।
 नर सफल कर जन्म मज निन धर्म सम शुभ करन ॥४६१॥

अर्थ — श्री वीतराग देव नरक गति के और तिर्यंच गति के इन गतियां भ जाने वालों का भय दूर कर देते हैं जैसे श्रीकृष्ण महाराज श्रेणिक राजा के भय दूर किये थे ऐसे ही सब के भय दूर करने वाले हैं और सर्व पापों के दल पीसाकर नाश करने वाले हैं इसलिये हे मानव ! मानस वित्त प्रमत्तता के साथ भगवन की भक्ति सुखि गुण प्राप्त करो और त्रिनेश्वर देव के धरण कमलों में मानव वैवर्ण्य देवते दानव ज्योतिषी चन्द्रमादिक भगवत के धरणों का धरणा लते हैं हे नर मनुष्यों ! जन्म सफल कर भगवान का भजन कर निन धर्म कर यह सर्व दोषों का नाश करने वाला है धर्म ॥४६१॥

मथानी वध कोट वध प्रश्नोत्तर इन्द्र वज्र छन्द

को कर्म चुरे त्रिन धर्म नीको को कष्ट काटे जब नाथ लीको
 को देव पूजो पुनिराज टीको को नित्य बायो गति पचमी को

अर्थ — श्री गुरुदेव के साथ धेने के प्रश्नोत्तर हैं ? धेले का प्रश्न है भगवत कर्म कैसे नाश करते हैं ? तथा चुर करते हैं ? गुरु का उत्तर—हे शिष्य त्रिनेश्वर देव का अहिंसा धम करने से (ठीक है) शिष्य का प्रश्न है भगवान जीव के ऊपर कोह कष्ट दुख व्याधि

आजावे तो क्या करे—गुरु का उत्तर—हे शिष्य ? भगवार के नाम का जाप कर जैसे अग्रह जाप हो लोगस का मंगलाचार का उपाकार क तथा १०८ अणपूर्वि नित्य का जाप हमेशा एक वक्त प्रात काल ४१ ५१ ६१ तथा ७१ दिन अणपूर्वि की एक माला रोज पढो समय पा यह जाप करो गुरुजी सघ है ? शिष्य का प्रश्न हे भगवान ? कौनसे देव, पूजा सेवा भक्ति करनी चाहिए जिसे फलयाण हो ? गुरुदेव का उत्तर—हे उच्छ । जो पाच याम के पालने खाने, पाचाभ्ररूप पा को टालने वाले मुनि महात्मा के, दर्शन करो बाणी सुनो ऐसे गुरु देवों को देवों को पूजा सेवा भक्ति करो मत् है महाराज । शिष्य का प्रश्न—हे दयालुवो, इन से लाभ क्या होगा ? कृपा कर गुरुदेव उत्तर मिला, हे आर्य । जो कोइ जीव निबंध कार्य करेगा, वह जी पाचमी गति में जावेगा जिसको मुक्ति कहते हैं, जो कोइ भी नहीं करेगा । वह जीव सदा के लिये अजर अमर पद पावेगे मुनि में जय गुरु देवों की । ॥४१२॥

॥ सारङ्गीछन्द सर्व गुरु वर्ण छणकणा बन्धः ॥

नेमाराधी, देवा बासे मोखे जावे माधुजी ।

नेमा राधी, नीके जाते ताकी सिष्या राधु जी ॥

धीरा माने, साची बाणी भाषी ज्ञान गाधु जी ।

धीरा, माने पूरे पु-ने होवे-धम्मा साधु- जी ॥४६३॥

अर्थ—पाच यम पाले ५ महामत पाले नेम सुध्द शुभ आर पाले साधु के तो देवलोक २६ तक जावे और, पाँचमी, पद्मी प अजर उत्कृष्टा संयम आराधे पाले तो बीत राग, हो, केवल ज्ञान

वे और कम जमा मोक्ष में जाये। अगर अनुवृत्ति धारक होवे तो और आपने नेम का अराधक होवे तो १० में देवलोक तक मरके न मरता है। कौन जा सकता है। जो आपके गुरु देव मुनि महाराम साधु की शिक्षा के अराधक हों (क्योंकि जो साधु की शिक्षा नहीं माने वह विराधिक होंगे) और यह पंडित कहते हैं तथा आराधिक को पंडित मानते हैं। क्योंकि साधु की सची वाणी कही वह अगाध ज्ञान के धनी हैं, और इन्हों को तीर्थकर देवजी ने भी पंडित माने हैं। जो पूर्ण पुण्यपत्र होने में होता है और धर्म का लाभ पाना है। यह वाणी सची है ॥४८३॥

॥ चौकी वन्ध-शङ्कर अन्द ॥

कामदेव दानो नर कणी से ऊर्जिने,
समाप्त सोमर श्री जिनरान जीत्या चित्त प्रमोद अपार ।
बैठकरण तव तप्यो प्रभु दमी गे सत,सेव ।
साचो मुशक त्रिलोक माभी नमोश्री जिनदेव ॥४६४॥

अर्थ—श्री विनेश्वर देव ने कहा है कि निसने कामदेव को बरा में किया है रही शूरवीर योद्धा है। अगर नहीं तो कामदेव सूर्य दुनिया को अपने बरा में रखता है, जैसे देवते, वनय नागादिक मानुष्य पशु पक्षी जलचरादिक नितन भी ससगर,म और कितनेक जीव कामदेव के बरा हारे हैं ऐसा कामदेव उदा सुरमा है ऐसे,जालम कामदेव को जीतना बड़ा, मुशकिल है, परन्तु श्री विनेश्वर, देव ने जीत्या है, और अति हर्षवन्त होते हुए जि हों का अपार,चित्त है, विशात्र और भी भगवत देवनी ने तप ससम किया, तथा इन्द्रियाँ, बस

मं दमन करी और सत्य पदार्थ हैं उनको आत्मा सेवन करती हैं वो सत्य हैं पदार्थ—इस लिये श्री जिनन्वर देव का सुवचन है ओकि तीव्र लोक के नाथ हैं उन्हों को मेरा गमस्कार होवे यह मेरे देव हैं ॥४६५॥

॥ माटक-छन्द-चौपड वन्ध ॥

सो साधु जिनके सदैव समता दवेश भापे जियो ।
 सीतारू मव विंधु घोर तरणे शामे जहाज जियो ॥
 सो ज्ञानी गुण विंधु रत्न भरियो ताके सनात्मा बमो ।
 सो बन्दो शिव हेत पाप हरण गाव यन्त्रो पारयो ॥४६५॥

अर्थ—साधु महापुरुष वह है जिन्हों के चित्तम सदा समता है और उन्हों का यश देवेन्द्र भी कथते हैं, और वह संसार समुन्द्र महाघोर को तरते हैं और शोभा पाते हैं। जैसे समुद्र में जहाज शोभता है ऐसे ही मुनि सुज्ञानवन्त ज्ञानी हैं। गुणरूप रत्नवरी पूर्ण भरे हुये हैं, और जिन्हों ने अपनी आत्मा सदा वश में करी है। उन्हीं साधुओं को मैं घटना करता हूँ यह मोक्ष के प्राप्त करने वाले हैं जैसे यश पारशरूप लोहे को वचन करे ॥४६५॥

॥ गतागन्त मत्तगयन्द छन्दसाधिया वन्ध ॥

तामस औमद लोभ प्रहार रहा प्रभ लोदम थी ममता ।
 ता मर्याद सधी मन दास, सदा नम घीस दया ममता ॥
 ताम गद्दी गरमा तव सेत, तसतव मारग ही गमता ।
 तामव नेह करो लख सोई, इमो खल रोक हुने तमता ॥४६६॥

अर्थ—तामस क्रोध मद अहकार और लोभ ईत चार कषायों का नाश करके पापों को अति २ श्रेष्ठि इन्द्रिया का दमन और ममता

धर्म की मर्यादा माधी जाती है और करने मनचे काम न
 करत है और काम सदा अरुणम मदे विनय सहित छे ठव बुद्धि
 बत हाय दया के साथ रमना रह पेना मार्ग की महिमा बढवे एसे
 बडा शक्ति है तथा निम माग मे शक्ति हो अच्छो हो मरु हों
 मुक्ति का पथ गमन करता है इ चीज ? तुम ऐसे हा मन में मंदे का
 दमने को लूय देखलेयो सो यह मन महा दुष् पापों का गण्ड है
 एना मत आवें पापों को आने देता नही अरुणार एन एसे न क
 ह्योन याना है ॥४८६॥

एक सकार-वर्ण-दोहा

सुस्य यासी सीम सो सति मासे सो मय ।
 सस सो मस सोम सो मासोवात सुधांस ॥४८७॥

अर्थ—सुश्रुपावत शिष्य होये आराधन विनियोग इन हैं ।
 राशी चंद्रमावत शीतल शिष्य होते हैं शीतल शिष्य शिष्य
 होय, निमल चित्त होये शिष्य मोही गण्ड पापों का गण्ड है सुक जी
 की मुशिदया माने सो शिष्य खास जमान हाय्य सुक का सुश्रुपा
 करे सदा निर्मल तरहे सो शिष्य हैं ॥४८७॥

आदि अन्त एक सी दान अन्त

विगरे पय कानि कि छोट परा कलक कुलक परा विगरे
 विगरे तर पु ज कपाय चडे पर नई कमान ने विगरे
 विगरे द्वित मित्र जहां छल है एक क कपायति ते
 विगरे कुल जात कलक लगे नारी अनीत करी

अर्थ — श्री जिनदेव जी ने कहा है कि जैसे दुध में पानी की एक छींट बुद पड़ने से दुध का नारा हो जाता है अगर चांदी सोने में खोटी धातु पड़ जावे तो नारा करे जैसे पारा तुषात है अगर जप तप क्षमा संतोष कर पु ज डेर लगा दिया और फिर उसमें कषाय करे क्रोध चढ़े तो सारे जप तप का नारा करे विगड़ जाता है ऊंच उत्तम कुल में दाग लग जावे तो विगड़ जाता है राज मन्त्री सैना सेनापति श्रेष्ठ महाजन आदिम उत्तम पदारी वाले खोटी संगत से विगड़ जाते हैं विगड़ जाता है, क्या आपस का धर्म क्योंकि जब आपस में छल करेव कपट विश्वास घात मित्र द्रौ निगा झुगली झुठादिक बोले ईषा द्वेष करे तो सखा धम आपने दिल से धर्म विगड़ जाता है और राज कुल अनिति करने से विगड़ जाता है और राज भण्डार भी सब नारा कर देते हैं ॥४६८॥

आदि अन्त एक स्वर दुमल छन्द

सुधरे शठ पडित सगति ते अविनीत फला घरते सुधर ।
 सुधरे मिल पारस लोह सही अरू ताम्र रसायण ते सुधर
 सुधरे विष औषध वैदन ते मन्यागर त तरुना सुधरे
 सुधरे ठग हिंसक साधु धकी भव कोड़ अथा तपते सुधर

अर्थ—अरिहंत देवजी ने फरमाया है कि बड़ से बड़े भी विगड़ जाते हैं यह भी अच्छी संगत से सुधर जाते हैं जैसे प्रभवा और जन्मू कुमार से सुधार चिलायति और श्री महावीर प्रभु से सुधरा ऐसे ही मुख जीव मुनी महात्मा पंडितों कि संगती से सुधर जाते हैं और यह जीव चतुर धन जाते हैं तथा जो अनिती जो २ अविनीत जीव नर

श्री गुरु तुरग हस्ति च न पत्नी आदिक कलावान उतताद से सुधर
 न हें लोह से पारस मिलके सुधरे तो बसका कचन सोना बनजाता हें
 कलासा मित्रके रसायण पुटी बने और निसका रूपा सोना होये,
 शशा मिठा विधिप को औषधी सयोग से सुगर २ वैद सिद्धौपरी
 और गोशीर्ष च दन की सुगन्ध के मेल से निंबादि अनेक जाति
 के वृक्ष चन्म जसे हारें और महा महाहिंसक ठग चौर लुटेरे घाडरी
 चटान पाषा जीरों को भी साधु महात्मा के मिले से उपदेश से धर्मी
 जीर होजाते हें अनेक करोड़ जर्मों के संचिन पाप कर्मा को इकट्ठे
 किय ह्ये ये यह सर्ग गुरु की कृपा से त्य से जप से सयम से पापों
 का सर्वनाश कर सुद्ध ह्ये स्वग मुक्ति पाव ॥४६६॥

काम धेनु कवित्त रचना दोहा

चौरई दोहे सोरठे और अडिन्नु कवित ।

एक सवैये नो प्रगटे कामधेनु सुणमित्त ॥४००॥

अर्थ — कामधेनु छन्द का स्वरूप इस प्रकार से है । चौरई-
 दोहा सोरठा और अडिन्नु छन्द कवित और सवैया ये कामधेनु
 छन्द होते मित्रों ॥४००॥

मत्त गयन्द छन्द

श्री जिनचन्द मुनिद बुचदन देन मनुष्य दित य दित धारण
 मक्ति करी अत्र बुद क खडन प्यान धनुष्य समीत निराण ॥
 मेट महा अम मोह वृणाक शीन इराक इन्प विचारण
 ज्यों मिल पारम लोह सुदीट्ट वान इयाम मधुष्य काय

अर्थ —श्री जिनेश्वर देव और मुनिया के दृष्ट श्री अरिहंतनी को इन्द्र भी और देवगण आदिक भी अपना हित जान कर वन्दना नमस्कार करते हैं भक्ति करके अपने पूर्व जन्मों के अधको नारा करते हैं ध्यान धनुष्य को धारण करते हैं भयभीत निवारण करते हैं श्मके द्वारा और मोह महा भ्रम निरन्दन करते हैं ज्ञान रूपी नाटक शाला में मदान्द मोह त्रिदोह करता है उसको दूर करने लिये ध्यान रूपी धनुष्य टकार शब्द होते ही कुरूपी विचार आदि द्रव्य भाग जाते हैं जैसे पारस के छूते ही लोहा स्पर्श न जाता है । उन्ही प्रकार अज्ञान रूपी आरण उसको नष्ट करता है । यही लोहा कितनी समय उसकी तुच्छ मूल्या का है परन्तु पारस के स्पर्श मात्र से ही उसका मूल्य बढ जाता है राजे महाराजे आदि के चक्रवर्ती के अभूषण बन जाते हैं ॥१०१॥

चौ०—श्री जिनदेव मुनिंद कु रटन भक्ति करी अवष्ट द कुखडन
 भेट महाभ्रम मोह कु नाटक ज्यों भिल पारस लोहसु हाटक
 देव मनुष्य हिये हित धारण ध्यान धनुष्य समीत निवारणः
 ज्ञान कुरास कुरूप विचारण बाण कुखास सुभूषण कारण
 अर्थ —श्री मुनिन्द्र को वदन करने से पाप कम क्षय हो जात
 हैं हृदय पटङ्ग से मोह अधिकार मिट जाता है जैसे पारस के प्रसंग
 से लोहा भी सोने का रूप धारण कर लेता है और वाजार में विक्रता
 है ॥१०२॥ देवता और मनुष्य आपने हित के लिये वन्दना करते हैं
 शुभल ध्यान धर्म ध्यान रूपी धनुष्य धारण करके अंतरंग शत्रुओं
 का पराजय करते हैं ज्ञानरूपी उद्यान में कुरूप विशारद अर्थान(पशु)

इन्का यहा से भगा दते हैं ज्ञान रूपी बाण के द्वारा शुक्ल ध्यान रूपी धनुष्य को चिल्ले पर चढ़ा कर मंत्र टंकार शक्त करने से अहंकार मोह आदिक पशु भाग जाते हैं ॥५०२॥

श्लोक—श्री जिनचन्द्र मुनिद को चदन देन मनुष्य ।

भक्ति करी अथ वृद्धों खड्ग ध्यान धनुष्य ॥५०४॥

मेट महाभ्रम मोह को नाटक ज्ञान की रास ।

ज्या मिल पारस लोह सु हाटक ज्ञान कुम्भास ॥५०५॥

अर्थ—श्री जिनेश्वर तीर्थंकर देव को मुनिजनको देव और मनुष्य भी भक्ति करते हैं उस भक्ति भय के द्वारा अपने पाप कर्म किये हुये वहाँ का खड्ग करते हैं । ध्यान रूपी धनुष्य को धनुष्य करते हैं ॥५०४॥ मिटाने हैं महा भ्रम अपने हृदय में मोह कर्म को ज्ञान रूपी नाटक दृष्टाने हैं उसको जैसे किसी को पारस लोह मिल जाय तो उसके द्वारा अपनी गरिद्रता को दूर करते हैं अहंकार मोह में लीन रहते हैं ॥५०५॥

श्लोक—श्री जिनचन्द्र मुनिद चदन देन मनुष्य ॥

भक्ति करी अथ वृद्ध खड्ग ध्यान धनुष्य ॥५०६॥

मेट महा भ्रम मोह नाटक ज्ञान कुम्भास ॥

ज्या मिल पारस लोह हाटक ज्ञान कुम्भास ॥५०७॥

अर्थ—श्री अरिहस्त देवजी को मनुष्य चदन देन करते हैं जिनके हृदय में मोह कर्म अहंकार मोह होते हैं उसके द्वारा अपने पाप कर्म पूर्ण मिटाने हैं अहंकार मोह को दूर करते हैं ध्यान रूपी धनुष्य का ही सहाय है ॥५०६॥

ज्ञान रूपी नाटक को देखते हैं। अज्ञानरूपी नाटक को छोड़ दिया है जिस प्रकार से पारस घटी के प्राप्त होने से अपने इहलोक के शक्ति-सुरों को प्राप्त करते हैं ॥१०७॥

अडिल चन्द्र

श्रीं जिनचन्द्र मुनिं कृषद न देव मनु ।

भक्ति करी, अपचन्द्र कू खडण ध्याण धनु ॥

मेढ महाभ्रम मोह कू नाटक ज्ञान को ।

ज्यों मिल पारस लोह सु हावक वान को ॥१०८॥

अर्थ—श्री जिन चन्द्रमा के समान शीतल निमल क्षीर समुद्र के समान उज्ज्वल मुनियों के पति हैं अरिहत दबनी तथा देवता और मनुष्य भक्ति बस होकर भवना करते हैं। भक्ति के द्वारा अनादि काल का भ्रमण को निवारण करते हैं। ध्यान धनुष्य के धारण करने वाले हैं मिटाया है क्या ? मोह रूपी बादल आकाश जिस प्रकार से स्वच्छ दृष्टि गत होता है जब कि आकाश में बादलों का अभाव होता है। दूर हो जाती हैं इसी प्रकार आत्मा के ऊपर मोह रूप बादल छाया हुआ है। ज्ञान रूपी वायु के संघर्ष से मोह रूपी बादल आत्मा से छीन भीन्न हो जाते हैं जैसे दुकानों में लोहा पड़ा रहता है। जंगल लग जाया करता है उसकी कीमत कम होती जाती है इसी प्रकार आत्मा संसार चक्र में चक्र काटते हुए दुःखित हो जाता है। अनेक प्रकार से ज्ञान करने योग कार्यों में लीन हो जाता है। परन्तु जिनेश्वर देव रूपी ज्ञानी का एक शब्द भी उसकी आत्मा को स्पर्श कर

पारस की बटी का काम देता है । भगवान् बंधन से मुक्त होता

॥२०॥

वेत्त.—श्री जिनचन्द्र मुनिदत्त ऋषयः देवमनुष्यहियद्वितार
शक्ति करी अथ वृषकू खट्वा ध्यान धनुष्य समीत निवार
महा भ्रम मोह कूनाटक ध्यान कूराम कूरुष्य निवार ।

यों मिल पारस लोह मुहाटक धानकू खास सुभूषणकार

अर्थ—श्री जिनचन्द्रना के समान शीतल कान्ति याने मुनि
ना के आचार और देवताओं को मनुष्यों को भी बन्दनीये हैं करते
ये हैं भक्ति भाव पूर्वक । अग्नि के द्वारा पारस के पुज का विध्वंस
करते हैं ध्यान रूपी धनुष्य सर्वांग काल अपने पाम रखते हैं, जैसे
रेनिकु समर भूमि में जाते हैं उहा पर निरभयता पूर्वक संपादन करता
इ संपादन में विजय भाला प्राप्त करके प्रमोदित होता है इसी प्रकार
अथ भूमण रूपी युद्ध भूमि में आत्मा विजय श्री को प्राप्त करती है
ध्यान धनुष्य के द्वारा हम युद्ध का विजयी बनता है मोह की सेना
को पराजय कर देता है । आत्मा के शत्रु काम क्रोध मद लोभ आदि
उन सेनापतियों का पराजय हो जाने में मोह नृप की शक्ति छीन हो
जाती है पारसबटी के समान केवल ध्यान केवल दशन आनादि के
सुखा में छीन हो जाने हैं । विश्व का भूषण हो जाता है ॥२०६॥

तेरठा—समकित पाई जीव ओडक शिर पुर जा वसै ।

मिथ्यावत्त सतीर जन्म मरण गहि मव भ्रम ॥२१०॥

अर्थ—श्री धीनराग देव ने फरमाया है कि जिस ० जीव ने
सिद्धी समकत्व से पाई है वह जीव या तो उसी भ्रम में या इसके

तीसरे भव लोके (या) अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तन कर अवश्य ही यह जीव शिव पुर का पद लेवेगा मुक्ति महल में जा विराजेंगे और सम्यक्त्व के बिना जो जीव मिथ्याग भूम में पड़े हुए हैं । और उसमें संयुक्त हैं सो वह जीव ससार रूप संमुद्र में जन्म मरण बहुत करेंगे अगर उत्कृष्टा पणे जावे तो अधिक से अधिक नव नवप्रीवेग तक जावे २१ तक २१ देवलोक से आगे नहीं जैसे अभव्य जीव जावे - ८ में तक आगे नहीं इसलिये भव्य प्राणियां सम्यक् दृष्टि बनो ॥५१०॥

सम्यक्त्व पर छाप्य छन्द

एक प्यावे त्रि तोड तीन घर चार पछारे ।
 पच जीत पट पाले सात म चित्त नहि डार ॥
 आठ मधे नव साज धार दस एक दश माने ।
 बारह रच तेरह दृष्टाय चौदह स्थित जने ॥
 पनदस त्रिधि प्रभु उरै सोलस हर सतर घरै
 होई थठार रहित ही अजर अमर परैवी वरै ॥५११॥

अर्थ — एक निराकार आत्माराम को ध्याये दो को तोडे दोयो राग द्वेष तीन को अपने चित्त में जमालो ज्ञान दर्शन चारित्र्य चार जालमों को दूर करदों क्रोध मान माय और लोभ को पछाड़ के परे मारो और पचों इन्द्रियों को जीतो छै काया के जीवों की रक्षा करो सात प्रकार के भय से निभय होयो यह लोक भय परलोक भय मरण भय क्षुध्या भय और भय अज्ञान भय अकसम त भय अजीविका भय यह सात तथा सप्त पुण्यपन त्यागन करो आठ कर्मों को तथा आठ मद्यो को मयन करो नाश करो दुर करो नव घाड शील की मुद्धे पालो

शेष दोनों तब प्रफार का यति धर्म पालो ग्यारा अगों पर श्रद्धा पूर्ण
रतो सथो है । आशातना टालो वितय मक्ति करो दिल से । चारह
प्रकार की भावना भायो जैसे भरत चन्द्रचर्ची ने भाइ । १३ प्रकार की
क्रिया दह इटारें । १४ प्रकार के गुण स्थानों का ध्यान करो कि में
किम ? गुण स्थान में हैं ? ऐसा विचार करो और १५ प्रकार के
सिद्ध भगवान देवो कौन २ हुये हैं । सोलह प्रकार के कपायों को दूर
कर जो चार की चौकड़ी है इनका नाश करो जड़ से और १७
प्रकार का सयम पालो निर अतिशय शेष में रहित होकर के । तथा
अठार १८ प्रकार के पापोंको सर्वथा दूर हटावा तब तुम अजर अमर
पद पावोगे ॥११॥

ज्ज्ञान कृत सशर जन्म मृत निग जोग यय ।

गति सज्ञा न कपाय दह इन्द्रिय ७ वररा मय ॥

लेशाः प्रजा सठाण समुदपाता मय नाही ।

कर्म अक नहीं प्राण विन्द मूरत नहीं तादी ॥

चिह्न अलख अमित अचल अगम परम जीति परमेश ।

सर्वलोक सिर मुकट हो रमो सत्ता सर वेश ॥५१२॥

अर्थ — श्री घीतराग देव ने कहा है कि जहाँ अजर अमर पद
पाय उमका नाम मुक्ति है और जहाँ पर समार का कोर पाय नहीं
है बहा जाके जन्म मरण दोनों नहीं हैं और तीन लिंगों में से कोई
लिंग नहीं ३ योग नहीं तीन अवस्था नहीं चार गति में से कोई गति
नहीं चार संना नहीं क्रोधादिक सारे कपाय नहीं या शरीर नहीं पाच
इन्द्रिय नहीं पाच इन्द्रियों के विषय २३ नहीं चार ध्यान में से को

ध्यान नहीं हैं। छै लेश्या में से कोई लेश्या नहीं है। दस प्राणों में से कोई प्राण नहीं है। लक्षण स्वरूप मूर्ति नहीं अलस है अमित है अविचल सदा स्थिर है अगम है परम अशोच्यत है परम परमेश्वर है परम ईश्वर है सब जगत् के ईश हैं सर्व विश्व के सिर ऊपर मुकुटवन्त है ऐसे मुक्त में श्री सिद्ध भगवान् सदा बसे रहते हैं सर्व के स्वामि सर्वेश हैं ॥५१२॥

सिद्ध — एमोक्षुते सिद्ध बुद्धणीय, समण, समाह्विय समत्त समजोगी मत्तलगत्तण णि मय णिराग दोम निम्मल निस्सग पित्तेव माण मूरण, गुण रयण, सीलसागर मणंत मप्पमेव, भप्रिय धम्मवर चाउरंत चक्कयट्ठी ॥
— आगम —

अथ — दोनों हाथ जोड़कर मस्तर से अंजली करके ऐसा फलत सिद्ध बुद्ध कर्म रज रहित श्रमण तपस्वी समाश्रित, सन्यस्त्य कृत्य पाले समयोगी शल्य के विनाशक निर्भय राग द्वेष रहित ममत्व रहित संग रहित कर्म मल रहित शाल्य विदारक मानमर्दक गुण रत्न कर शील के समुद्र आन्त क्ष न मय अप्रमेय अनतगुणी भव्य और धर्म चातुरंत आप चक्रवर्ती हैं नमस्कार होये ॥

जैसा कर्म हो वैसा कम पर मत्तगयन्द-अन्द

पात करीर लहे न बवे अब रूत्त वसत सुधा घन होई ।
जात कुषंध लखे नहि रूप धनतर से जव औपघ होई ॥
पावक गर्म पाखान जले रहि काल घणे विन आगन सोई ।
स्यौ न लहै सम मेट निव्यात अवव्य सुखे तिन आगम जोई ।
अर्थ—कैयर नाम का वृक्ष है उसको करीर भी कहते हैं

दुनियाँ कहता है कि कैयर के पते नहीं होते ? मैं कहता हूँ हा होते हैं वर्या—सत्य हैं असत्य नहीं पत्र लगते हैं परन्तु जब घसत जाता है तब करीर के पत्र लगते हैं मगर होते हैं सूक्ष्म घरी व जैस बैसर जैसे जिरे के पते होते नने २ हैं। लोग कहते हैं कि बसंत ऋतु म सय घनराइ पगे दती है तकिन कैयर के पत्र नही लगत यह कहना लोग का ठीक नहीं है। और जन्माघ को घनन्त्र बद्य क्या कर सजता है। कोइ किसी मिसम का रूप नहीं दिगा सजता है कोइ घुटी काम नहि आति इमलिये घनत्रर वैद्य को कोइ दोष नी और घमक प र म अग्नि होती है वह पधर अगर सो बर्य तक पाणी में रखे तो भी अग्नि दूर नहीं होती तो क्या, यह पाणी का दोष है ? ऐसे ही अभव्य के अटर भी निव्यात्व सदा रहती है और सम्यक् दृष्टि से वह जीव दूर रहते हैं तो क्या ? यह सम्यक् दृष्टि का दोष है नहीं कर्म कर्म का फल है ॥२१३॥

दाहा—आदि घन्त नही लोक कों ताम जाव अनत ।

विना सिद्ध भव भेद बहु पणु सं तेमठयत ॥५१४॥

अर्थ—आदि भी नहीं हैं और अत भी नहीं इसलोक का इस में जीव अनते हैं। विना सिद्ध भगवन के गति मुक्ति के विना सन जीव ससार में भ्रमण करते हैं पाच सो तेरसठ भेद हैं ससारी जीव के ॥५१४॥

छापय छन्द

इकपी इक नर भेद नदिन्नवे मुर के जानो ।

गरी पाणी अग्नि पायु ने दो विध ठाणो ॥

अथ वनस्पति भेद तीन त्रिकलद्रिय गिणयति ।
 दस तिर्यच सग नरक मघ दोमै इक त्रिशत ॥
 इस त्रिधि गिणत परजापते इमो अपरजापति, जने ।
 इक सौ इक समुञ्जम मनुज पचम सुते सठ सव्यै ॥५१५॥

अथ —तीन भेद वनस्पति के तीन त्रिकलद्रिय के तीन तिर्यच के दस भेद निताने भेद वना के सात भेद नर्कों के जीव दृष्टे ५६२ भेद हैं ॥

गाथा —नेरिवतिरिप नर देश चउत्तम अङ्गयाल

तिन्नीसयतिन्न च अठाणु सय मग परमम मेया ये त

अर्थ —नरक के १४ भेद १—घग्मा २ घशा ३ शीला ४ अच

५ रिद्धा ६ मघा ७ मघपः इन सात का पर्याप्त और सातों का अ-
 पर्याप्त एव १४ भेद और तिर्यच के ४८ भेद —एकेन्द्रिय के २२ भेद
 पृथ्वीकाय के ४ भेद सूक्ष्म वायु का पर्याप्त और अपर्याप्त तेजक
 के चार भेद सूक्ष्म वायु का पर्याप्त और अपर्याप्त । वनस्पति क
 के ६ भेद सूक्ष्म प्रत्येक साधारण इन तीनों का पर्याप्त और अपर्या
 प्त । त्रिकलद्रिय के ६ भेद द्विद्रिय त्रीन्द्रिय चतुस्र द्विय इन तीनों
 पर्याप्त और अपर्याप्त । तिर्यच पचेन्द्रिय के २० भेद पाच सनी अ
 पाच असनी । इन दमा का पर्याप्त और अपर्याप्त एवं २० सर्व मि
 कर तिर्यच ४८ भेद हुए । तीन सौ तीन प्रकार के मनुष्य पन्द्रह क
 भूमि के मनुष्य तीस अर्ध भूमि के मनुष्य द्वापन अतर, द्वीपों
 मनुष्य यह सब एक सौ एक हुए इन एनसौ एक का पर्याप्त, अ
 अपर्याप्त दोसौ दो हुए । एकसौ एक क्षेत्रों के समूर्च्छम मनु

आराधित । कुल तीनसौ तीन हुए । १६८ प्रकार के देवता यह सर्व
पाचसौ तेरसठ होते हैं ॥५१५॥

यडिहस्र छन्द—कर्मभूमि नर जोनि पाच दम जानिये ।

तीस अकर्मो भूमि जुगलिय मानिये ॥

छप्पन अन्तर दीप जुग लीए है सही ।

इक शौ इक नरमेद सिद्धान्ते इम कही ॥५१६॥

अर्थ—कर्मभूमि मनुष्य पन्द्रह प्रकार के, तीस अकर्मो
भूमि जुगलिये मनुष्य छप्पन अन्तर द्वीपां के रहने वाले जुगलिये
मनुष्य एक सौ एक मनुष्यों के भेद हुए । जिनागम में कथन है ५१६

भवनपति दस पनरापरमा हामिया,

सोलस अन्तर दसो त्रिय भकनामिया ।

दसो जो इसी देव तीन हैं किलमुखी,

नव लोकावक देवलोक छब्बी मुखी ॥५१७॥

अर्थ—दस भवनपति देव, पन्द्रह परमा धर्मी देव, सोलह
वाण अन्तर देव, दश प्रकार के तिर्यक जन्मक देव, दस प्रकार के
व्योतिषीदेव, तीन प्रकार के किलियषी देव, नव प्रकार के लोकाँति
देव, १० प्रकार के कल्प देवलोक हैं । नव २ प्रैवेयक देव 'लोकदेव
देव, पाच अनुत्तर विमानां के देव, सर्व देव सुग्यों में लीन रहते
हैं ॥५१७॥

सुखम आर भूजल पावक यापके,

इम विव बणे तृतीय अनन्ती काय के ।

त्रिगुला विति चउरींद्रीय जलचर यल गया,
खेचर भुज पर उर परसन्नि अमन्निया ॥५१८॥

अर्थ—सूक्ष्म वाहर अग्नि पृथ्वी, जल, हवाये यह दो ० भा
हैं। वनस्पति का तीसरा भेद अन्त काया विकलेंद्रिय, चेद्रीय
सेन्द्रीय, चोरिंद्रीय, जलचर यलचर खेचर भुजपुर चरपुर सर्न
असनी ॥५१८॥

घम्मा वसा सेला अजणा नाम है,
रिठा मघा माषवई दु ख को नाम है।

रतन सकर बालू हिपक धूम पहा,
तमा तम तमा नरक गात साते कहा ॥५१९॥

अर्थ—घम्मा वसा शीला अर्चना नाम हैं नकों ने, रिठा, मघा
माषवई यह दुःखों के स्थान हैं। यह सानों नकों ने नाम है, और
सात इन्हीं के गोत्र इस प्रकार से हैं। रतनप्रभा, शककरप्रभा, बल
प्रभा र्फकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा तमातमप्रभा यह नकों के सात
गोत्र हैं ॥५१९॥

इक सौ इरु नर मेद तहा ते उपजिया,
विष्टादिक दस चार विषय समुद्धिया।

परजा पूरी तीन स्पश चतुर्थिया,

उर उरजे नर तिरियच विषय चिन घुगलिवा ॥५२०

अर्थ—इहीं के १०१ क्षेत्रों के समूर्च्छिम मनुष्य एक सौ
एक तीन पर्याप्त पूण, परन्तु चौथी पर्याप्त शर्ष अधूरी है।
विष्टादिक म उत्पन्न होते हैं दस चार स्थानों में मनुष्य

मनुष्य मनुष्य एक मौ एक तिर्यंच और मनुष्य स्वप्न होते हैं। जन्म मरण करते, आते हैं। संसार में तिर्यंच युगलिया और युगलिया बिना विषय मनुष्य वासना नहीं करते ॥५२०॥

श्लोक—रघु सिंधु चित शक्ति रम, शिवपुर वारे वत ।

त्रिभुवनरति सुरपूज्य प्रभु, नमो देव अरिहन्त ॥५२१॥

सर्वज्ञान दर्शनकरी, जिह पायी जग मर्म ।

तिहा भाष्यो उपगार द्वित, जैन जवाहर धर्म ॥५२२॥

अर्थ—दया के सिंधु शातचित शिवपुरके बसने वाले त्रिभुवन रति इन्द्रो के पूजनिये श्री अरिहत प्रभु को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ५२१॥ सर्वज्ञ केवल ज्ञान के धारक, सर्वदर्शी केवल दर्शन के धारक नेहों ने, हात है जगत का भर्म वही महाप्रभु ने भाषित किया है, उपकार के लिये जैनधर्म जवाहर के समान है ॥५२२॥

श्लोक—सबते योड़े पुरुष नर, त्रिय रति सख्यात ।

बारर अग्नि प्रनापति, असख्यात गुण थात ॥५२३॥

देव अनुत्तर पास के, ताते गुणे असख्या ।

विह ते नव श्रीवेग के, ऊपर गुण सख्या ॥५२४॥

तिहते मध्यम हेठ इम, अञ्जुत अरणत हेर ।

पाणत आणत लग सभी, गुण सखिन्ज गिणत ॥५२५॥

असखिज गुण चहु दसे, मत्तम खित छडीव ।

एकर थाठ में साठ में, पचमि नरके जीव ॥५२६॥

लन्तक दिव चउधी नरके, ताते पचम स्वर्ग ।

तीजी नरके चतुर्थ दिव, त्रितिय कल्प सुर र्ग ॥५२७॥

द्रुतिया नरक नर गर्भ चिन, द्रुतिय कन्न सुरतार
 गुण असख्यपण बीस इह बोल कहै जिनराय ॥५२०
 द्रुतिय कन्न श्रिय प्रथम सुर, तांतिय गुण मखैव ।
 तांते मवणें देव गण, गुण असख्य भणपव ॥५२१
 तांते देवी सखैव गुण, असंगेज गुण ठान ।
 धुर नरकें पत्नी पुरुष, बोल पती सम जान ॥५२२
 खेचरी यलचर, यलचरी, जलचर बलचर नीय ।
 व्यन्तर व्यतरणी तथा, जीविक सुर तिह तीय ॥५२३
 खेचर यलचर जलचरी, लिंग नपु सक तीन ।
 गुणसख्या तमवमाहि गिण, चउता लीस प्रवीन ५२४
 चउरिंदियप जजत्तगा, तांते गुण सख्योव ।
 पचि द्रपजजत्तगा, विसेमा हिए जाव ॥५२५
 वेते इन्द्रिय प्रजापति, विसेसा हीए दोई ।
 पाचेन्द्रिय अरजत्तगा, अमखिज्ज गुण होई ॥५२६
 चउवे ते इन्द्रिय घरा, अरजत्तग गिण जीव ।
 विसेसा हिया तीन में, चावन बोल कहीव ॥५२७
 याहर पचप्रजापति, अपजत्तगछै जान ।
 असखिज्ज गुण इक दसे, तेसठ में पहिचान ॥५२८
 बन पत्तेय निगोद भू, जल याऊपणें एह ।
 तेउपत्तेय निगोद भू, नीर पवन छै तेह ॥५२९
 अपजत्तग सूक्ष्म अगनि, गुण असख्य चठ सठ ।

अपजत्तग भू सुदमे, विसेसाहि पणसठ ॥५३८
अपजत्तग जज्ञ वाउघे, सुखम म भी एम ।

सुखम तेऊ प्रजापति सख्याते गुण तम ॥५३९

सुखम पुढवी जल परन, प्रजापतिए षोल ।

विसेसाहिए लाख सहो, इगसत्तर मो टीज ॥५४०

गुण असख्य अपजत्तगा, सुखम नीर निगोद ।

गुण सखज्ज सो प्रजापति, लाखो ज्ञान घर मोद ५४१

विहते अधिक अमण्य है, पडिमाई तिह तेय ।

मिद्ध प्रभु बादर पणे, प्रजापति अधिकेय ॥५४२

गुण अनन्त इह बहु पिपे, सत्तत्तरमो जान ।

प्रजापति पादर समी, विसेसा हीए मान ॥५४३

अपजत्तग बन बादरे, असखिज गुण होई ।

अपजत्तग पादर समी, विसेसाहिए सोइ ॥५४४

विसेसाहिए सब कहें, पादर जिनवर देव ।

अपजत्तग बन सुद में, गुण असख्य मण एय ॥५४५

सब सुखम अपजत्तगा, विसेसाहिए जीव ।

सुखम पणे प्रजापति, गुण सखिज सदीव ॥५४६॥

प्रजापति सुखम समी, विसेसाहिए जान ।

सब सुखम इम ही अधिक, पठ असीता मो ठान ॥५४७

बारह षोला माहि कहुं, विसेसाहिए होण ।

मय निगोद बनसाठे, एकिदिप तिह षोण ५४८॥

भिच्छा दिही अशीरतीय, सकपाईद्युमत्य ।

सजोगी समारीया, सर्व जीव इम अथ ॥५४६

इह विधि बोला उठानवे, पन्नरणा सो जाण ।

इण में वरते वासठा, लख हरज सधर ध्यान ॥५५०

एकिद्रिप सुखम हतर, विगलिदियतिहु जाति ।

सन्नि असन्नि पनिदिया, सात बोल यहु मांति ॥५५१

प्रजापति अप्रजापति, इम खड दस जिह मेव ।

छहु गुण ठाणे खउदे कहे, जोग पंच दस एव ॥५५२

उपयोग धारह सहित, लेशपा छहु के साथ ।

अन्ना बहुत सो वासठा, कडा मुनिरवर नाथ ॥५५३

बोल बोल में वासठा, लखो भांति यहुहोई ।

० समकितधारी सह है, जो थोडक शिव दोइ ॥५५४

अर्थ—१सब से थोड़े मुरुप मनुष्य ० २श्रीयें उनसे संख्यात

गुणी ३ वादर अग्नि प्रजापत अर्सख्यात गुणा हैं ॥५२३॥ ४अनुत्तर

विमान के देवसे उनसे अर्सख्यात गुणे ५ नोनवमनेग के ऊपर

की त्रिक के देवता संख्यात गुणा ६ मध्यम त्रिक के देवता संख्यात

गुणे, ७निचे के त्रिक के देवता संख्यात गुणे, ८ चारहमें देवलोक के

देवता संख्यात गुणा, ९ नगरमें देवलोक के देवता संख्यात गुणे,

१० दसमें देवलोक के देवता संख्यात गुणा, ११ नवमें देवलोक के

देवता संख्यात गुण, १२ सातवीं नके नारकी अर्सख्यात गुणा,

१३—छठी नके के नारकी अर्सख्यात गुणे, १४—आठवीं देवलोक के

देवता असत्यात गुणे, १४-सातवें देवलोक के देवता असत्यात
 गुणे १६-पाचवी नरक के नारकी असत्यात गुणे, १७-द्विष्टे देवलोक
 के देवता असत्यात गुणे, १८-चौथी नरक के नारकी असत्यात गुणे,
 पाचमें देवलोक के देवता असत्यात गुणे, १९-तीसरी नरक के
 नारकी असत्यात गुणे, २०-चौथे देवलोक के देवता असत्यात
 गुणे, २१-तीसरे देवलोक के देवता असत्यात गुणे, २२-दूमरी नरक
 के नारकी असत्यात गुणे, २३-द्विष्टम मनुष्य असत्यात गुणे, २४
 दूमरे देवलोक के देवता असत्यात गुणे, २५-दूमरे देवलोक के
 देवी सत्यात गुणे २६ पहले देवलोक के देवता संख्यात गुणे, २७
 पहले देवलोक की देवी संख्यात गुणी, २८ मयनपति देवता संख्या
 गुणे, २९ मयनपतियों की संख्यात गुणी, ३० पहली नरक के
 नारकी असत्यात गुणे, ३१ खेचर तिर्यन्वपुरुष ३२ असत्यात गुणे
 ३३ थलचर पुरुष तिर्यन्व संख्यात गुणी, ३४ थलचर तिर्यन्व
 संख्यात गुणी, ३५ जलचर पुरुष तिर्यन्व संख्यात गुणी, ३६ जल
 चर तिर्यन्वनीमस्य संख्यात गुणी, ३७ धान व्यन्तर देवता संख्यात गुणे,
 ३८ धान व्यन्तर देवी संख्यात गुणी, ३९ ज्योतिषी देवता संख्यात गुणे
 ४० ज्योतिषियों की देवी संख्यात गुणी ४१ खेचर तिर्यन्व पुरुष
 संख्यात गुणे, ४२ थलचर नपु सक तिर्यन्व संख्यात गुणे, ४३ जल
 चर नपु सक तिर्यन्व संख्यात गुणे ४४ चौरिन्द्रिय संख्यात गुणे
 गुणे, ४५ पंचेन्द्रिय पर्याप्ता विशेषादिक, ४६ त्रिन्द्रिय पर्याप्ता विशेष
 पादिक, ४७ त्रिन्द्रिय पर्याप्ता विशेषादिक, ४८ चौरिन्द्रिय पर्याप्ता
 असत्यात गुणी, ४९ चौरिन्द्रिय पर्याप्ता विशेषादिक, ५० त्रिन्द्रिय

अपवाप्ता विरोधादिक, ५१ पेदिय अपवाप्ता विरोधादिक, ५२ वादर
 प्रत्येक वनास्पति काय पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५३ वादर निगोद
 पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५४ वादर पृथ्वीका पर्याप्ता असंख्यात गुणा,
 ५५ वादर अपकाय पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५६ वादर वाडकाया
 पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५७ तेड काया पर्याप्ता असंख्यात गुणा,
 ५८ वादर प्रत्येक वनास्पति काय वा अपवाप्ता असंख्यात गुणा,
 ५९ वादर निगोद का अपवाप्ता असंख्यात गुणा, ६० वादर पृथ्वी काय
 अपवाप्ता असंख्यात गुणा, ६१ वादर अपकाया अपवाप्ता असंख्यात
 गुणा, ६२ वादर वाडकाया अपवाप्ता असंख्यात गुणा, ६३ सूदम
 तेडकाया अपवाप्ता असंख्यात गुणा, ६४ पृथ्वी काया अपवाप्त
 विरोधादिक, ६५ सूदम अपकाया अपवाप्त विरोधादिक, ६६ सूदम
 वाड काया अपवाप्ता विरोधादिक, ६७ सूदम तेडकाय पर्याप्ता
 संख्यातगुणा, ६८ सूदम पृथ्वी काया पर्याप्ता विरोधादिक, ६९ सूदम
 अपकाया पर्याप्ता विरोधादिक, ७० सूदम वाडकाया पर्याप्ता
 विरोधादि, ७१ सूदम निगोद अपवाप्ता असंख्यात गुणा, ७२
 सूदम निगोद पर्याप्ता संख्यात गुणा, ७३ अभव्य जीव अनन्त
 गुणा ७४ पहिवाई सम्यक दृष्टि अनन्त गुणे ७५ श्री सिद्ध भगवान
 भी अनन्त गुणा, ७६ वादर वनास्पति काया अनन्तकाया अनन्त
 गुणा, ७७ वादर पर्याप्ता विरोधादिक, ७८ वादर वनास्पति अपवाप्ता
 विरोधादिक, ७९ वादर का अपवाप्ता विरोधादिक, ८० समुच्चय
 वादर जीव विरोधादिक, ८१ सूदम वनास्पति अपवाप्ता असंख्यात
 गुणा ८२ सूदम अपवाप्ता विरोधादिक ८३ सूदम वनास्पति पर्याप्ता

धर्मव्याप्त गुणा, ८७ सूक्ष्म का अपर्याप्ता विशेषात्मिक, ८४ मगुण्य
 सूक्ष्म जीव विशेषात्मिक, ८६ मध्य सिद्धिया ीय विशेषात्मिक,
 ८७ निगोदिया जीव विशेषात्मिक, ८८ यनास्यतिक्रिया विशेषात्मिक
 ८९ एकेंद्रिय जीव विशेषात्मिक,, ९० त्रियचयोनि के जीव विशेष
 पात्मिक , ९१ बिन्द्या दृष्टि जीव विशेषात्मिक, ९२ अमनी जीव विशेष
 पात्मिक, ९३ सरुपाई जीव विशेषादि, ९४ छदममस्त जीव विशेषात्मिक
 ९५ सयोगी जीव विशेषादि, ९६ ससारी जीव विशेषात्मिक, ९७
 स्थारर विशेषात्मिक, ९८ सत्र जीव विशेषात्मिक ॥५२४ से लेकर ५४६
 तक के दोहा का सम्पूर्ण हुआ है । इस प्रकार के गोल अठानवे पन्न
 पण्य सूत्र से जान लेना । इहाँ में वासठ गोल भी समझ लेना
 हरनस रायने घर के ध्यान से ॥५५०॥ एके द्रिय के चार भेद सूक्ष्म
 यादर पर्याप्ता अपर्याप्ता त्रिकलेन्द्रिय के तीन भेद बेंद्रि तेंद्रीयघौरिन्द्रिय
 संनि असनि पचेन्द्रिय इनकापयाप्या अपर्याप्ता यहचोदह भेदहृवे जीवों
 क ५५० ५५१ चौदह गुण स्थान भी योग पन्दरहर, उपयोग चारह
 ही लेश्या भी छे के मिला कर अल्पा बहुतर जो हैं तय वासठिया
 का है । मुनिश्वरनाथ जिनदेव जी ने ॥ ५५२-५५३ ॥ प्रत्येक गोल
 में वासठ २ नियो तय होत हैं सम्यक् धारक जो हैं वही को है,
 धन्ना । सो ही उच्छ्रयापद शिव प्राप्त करते हैं ॥५५४॥

दोहा—नमस्कार भगवान को, करो सुगुरु की सेव ।

कर्म, आठ के भेद अत्र, कहां निमरनिनदेव ॥५५५

अर्थ —नमस्कार करके भगवान को करता हूँ सेवा सुगुरु की

न और शरण लेकर आष्ट फलों के भेद उरभेद कहत हैं जोकि श्री जिनेश्वरदेव जी ने कहा है वही का स्मरण करके ॥५५५॥

॥ मरहटा छन्द ॥

सुण ज्ञाना वरणी दरसना वरणी और वेदनी थाउ ।
 नाहना नमाय गोनान्तराय अष्ट फर्म इह नाउ ॥५५६॥
 अष्ट फर्म उतगाता शिव मगरातो इह रघण संसार ।
 इह इत सुख पावै सिद्ध रहारै श्रीजिन षड्गो रिचार ॥५५७॥

अर्थ—ज्ञानावरणीय, दर्शना वरणीय, वेदनीय मोहनीय, और आयुष्य, नाम गौत्र, अन्तराय, फर्म यह आठों के नाम हैं ॥५५६॥ इन आठों ही कर्मों की उत्पत्ति से शिवमार्ग (मुक्तिमार्ग) घातक है और संसार बन्ध का कारण है, इन्हीं को नाश करने से अविचल सुख की प्राप्ति होती है श्री जिनेश्वरदेवजी ने अपने सुत्तारविन्द से कथन किया है ॥५५७॥

॥ कवित्त ॥

मति ज्ञाना वरणी पहली सुण भुति ज्ञानावरणी दुधीय ।
 औष ज्ञानावरणी तीजीमन पर्यव ज्ञानावरणी ॥
 पत्रम केवल ज्ञाना वरणी जो चय सौह ज्ञानप्रगटीय ।
 पाचों चये भए केवल घर जिन अरिहत सर्वज्ञानीय ॥५५८॥
 अर्थ—ज्ञाना वरणीय की पाँच प्रकृति—मतिज्ञाना

वरणीय श्रुति ज्ञाना वरणीय, अथवि ज्ञानावरणी, मन पर्यवहाना
 वरणीय और केवल ज्ञाना वरणीय, जो ज रा ना इ प्रकृतियों को
 क्षय करता है उसको वैधल ज्ञान हो जाता है और अरिहन्त
 कहलाते हैं, जो उ-हों में से मुख्य प्रकृति क्षय करते हैं उसको ज्ञान
 प्रगट हो जाता है ॥५५॥

चक्षु दरमया वरणी कश्चि भीजी नाम सुखोजु अचक्षु ।
 शीघ दरमया वरणी, भीजी केवल दरमया वरणीप्रत्यक्षु ॥
 निद्रा अरु निद्रा निद्रा फुनिप्रचला, प्रचला प्रचला अक्षु ।
 धानद्वी नयदरमया वरणी वरणी क्षय सर्वदरमयापदलक्षु ॥५५६

अर्थ—दर्शना वरणीय, नी नयप्रकृति—चक्षुदर्शना
 वरणीय, अचक्षु दर्शना वरणीय, केवल दर्शनावरणीय, अथवि
 दर्शना वरणीय निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, स्तिषोधि ।
 दर्शना वरणीय कर्म क्षय होने से सर्वदर्शन प्रप्त करते हैं ॥५५६॥



श्री जिन शासन धर्म समिति के सदस्यों की नामावली

- १ शम्भूमज्ज देवचन्द रोहतक मण्डी ।
- २ घणपतराय तेलुराम नगवानिगो वैचल (करनाल)
- ३ गणपतराय वृजलाल जैन रतिया (हिसार)
- ४ जैन श्री संघ रतिया (हिसार)
- ५ भागमरा करारीलाल चारन मण्डी (हिसार)
- ६ हरिचन्द्र जैन रोहतक मण्डी ।
- ७ दनशरीलाल केशोराम जैन रतिया (हिसार)
- ८ बालराम भूराम फलानार (रोहतक)
- ९ मिश्रसन नोनिहालसिंह जन मियानी (हिसार)
- १० रामजीलाल गोपीचन्द्र जैन तोराम (हिसार)
- ११ धर्मोराम भगवा दास जैन गुज्जतानपुर लोधी वेष्
- १२ तैल राम घन्ना मक जैन रतिया (हिसार)
- १३ चम्प्रीमल प्यारालाल जैन रतिया (हिसार)
- १४ मिन्नरीराम बिहारीलाल जैन रतिया (हिसार)
- १५ भगताराम रूपचन्द जैन रतिया (हिसार)
- १६ प्रेमसुचदास रावतनत गौडोखेत बड़ा पो० शार्दूलन ()
- १७ वृजलाल मेघराज जैन रतिया (हिसार)
- १८ देसराज देशराज जैन रतिया (हिसार)
- १९ राजाराम हरीदास जन रतिया (हिसार)
- २० सीताराम जिनदास रतिया (हिसार)
- २१ मदनलाल प्रेमचन्द जायल मण्डी (हिसार)
- २२ कानमल नगीनाराम जायल मण्डी (हिसार)
- २३ शानिलाल कीर्तिकुमार जैन रतिया (हिसार)
- २४ आशाराम तेनराम रतिया (हिसार)
- २५ मेहरचन्द रोशनलाल जैन बुवा (फिरोजपुर)
- २६ हीरालाल काशीराम जैन मलोट मण्डी (फिरोजपुर)

